इस पुस्तक में विख्यात रूसी लेखक अन्तोन
ख़ोव (१८६०–१९०४) की आठ कहानियां
कलित हैं–'गिरगिट' (१८८४), 'यात्रा'
१८८६), 'तितली' (१८९२), 'एक
ाकार की कहानी' (१८९६), 'इओनिच'
१८९८), 'घोंघा' (१८९८), 'रोमांस'
१८९९) तथा 'दुलहन' (१९०३)।
पुस्तक के अंत में गोर्की का लिखा चेख़ोव
सुप्रसिद्ध शब्दचित्र 'अन्तोन चेख़ोव' भी
ा गया है।

अन्तोन चेख़ोव • कहानियां

अन्तोन चेख़ोव • कहानियां

अन्तोन चेख़ोव

कहानियां

(१८८४ – १९०३)

प्रगति प्रकाशन • मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई [illegible]

अनुक्रम

अन्तोन चेखोव और उनकी कहानियां . . . ५
गिरगिट ६
वान्का १४
तितली १६
एक कलाकार की कहानी ५१
घोंघा ७६
इग्रोनिच ६३
रोमांस ११६
दुलहन १३७
मक्सिम गोर्की। अन्तोन चेखोव . . . १६१

अन्तोन चेखोव और उनकी कहानियां

अपनी अंतिम कहानी 'दुलहन' मे चेखोव ने नाद्या नाम की युवती के भाग्य का वर्णन किया है। कहानी के आरम्भ मे नाद्या पौ फटने से पहले जागती है और बगीचे मे देखती है—"...सफ़ेद, घना कुहासा हौले-हौले बकाइन की झाड़ियों पर छाता जा रहा है मानो उन्हें अपने दामन में समेटने चला हो" और लगता है कि ऐसा ही सफेद, घना कुहासा नायिका की आत्मा पर भी छाता जा रहा है, जब वह यह सोच रही है कि उसके इस निश्चिंत, निष्प्रयोजन जीवन में न कोई परिवर्तन ही आयेगा और न ही कभी इसका अंत होगा। लेकिन फिर सुबह होती है—"खिड़की के नीचे चिड़ियों ने चहचहाना शुरू कर दिया था, बग़ीचे का कुहासा दूर हो गया था, हर चीज़ वसन्त की धूप से चमक रही थी, हर चीज मुस्कराती हुई सी लग रही थी।" यह परिवर्तन केवल प्रकृति में ही नही आया है, नायिका की आत्मा में भी आया है—वह इस फ़ैसले पर पहुंचती है कि इस निस्सार जीवन से उसे सदा के लिए संबंध तोड़ना ही है।

यह कहा जा सकता है कि चेखोव की अंतिम कहानी की नायिका के हृदय में जो परिवर्तन आता है, वह किसी अर्थ मे चेखोव के सारे लेखन के लिए लाक्षणिक है।

अन्तोन चेखोव का जन्म १८६० मे दक्षिणी रूस के तगनरोग नामक नगर मे हुआ। बीस वर्ष की आयु मे उन्होने मास्को विश्वविद्यालय के आयुर्विज्ञान-सकाय मे दाखिला लिया। इन्ही दिनो वह लघु कथाएं, प्रहसन, व्यंग्यात्मक लेख आदि लिखने लगे।

उन्नीसवीं सदी का नौवां दशक रूस के जीवन मे कठिन समय था। यह वह समय था जब "स्वच्छंदविचारी" होने के सदेह मात्र से ही लोग दमनचक्र का शिकार हो जाते थे। देश पर प्रतिक्रिया का घना कोहरा छाता जा रहा था। और ऐसे समय मे युवा चेखोव ने उन छुटभैये लोगों

के बारे में कहानियां लिखीं, जिनके लिए पैसा और पदवी ही सब कुछ थे "मोटों" के आडम्बर और कूपमंडूकता का भी तथा "पतलों" की दीनता और दासतापूर्ण चाटुकारिता का भी उन्होंने मजाक उड़ाया – उस संसार का, जहां इन्सान की कद्र समाज में उसके स्थान से ही होती थी।

चेख़ोव अपने पाठक को प्रत्यक्ष रूप से किसी बात का क़ायल नहीं करते, उनकी कहानी की विषय-वस्तु ही, उसका सारा ताना-बाना ही पाठक को कहता लगता है – तुम इन्सान होने से क्यों डरते हो? क्यों तुम उन्हीं लोगों की कद्र करते हो, जो समाज में तुम्हारे से बड़े हैं, और जो छोटे हैं उन पर थूकते हो? क्या ओहदों, उपाधियों, पदों और ठूस-ठूंस कर भरी जेबों में ही जीवन का सारा सुख निहित है? क्यों तुम कोहनियां रगड़ते हुए पदों और उपाधियों के नौकरशाही सोपान पर चढ़ते जाते हो?

चेख़ोव की आरम्भिक कहानियों में से एक सबसे लोकप्रिय कहानी 'गिरगिट' में आश्चर्यजनक स्पष्टता से चापलूसी की सारी "कार्यविधि" ही उघाड़ कर रख दी गई है। चौराहे पर कुत्ते ने किसी को काट लिया है। दारोगा जी इस "वारदात" की सख़्ती से पड़ताल शुरू करते हैं। *सबसे पहले तो वह उन लोगों को खरी-खोटी सुनाते हैं, जो कुत्तों और* "हर तरह के ढोर-डंगरों" को छुट्टा छोड़ते हैं। तभी कोई कहता है कि कुत्ता तो जनरल साहब का है। और गिरगिट के रंग की तरह दारोगा साहब के ख़्याल बदलते हैं, वह उस आदमी को ही बुरा-भला कहने लगते हैं, जिसे कुत्ते ने काटा है। "नहीं, यह जनरल साहब का नहीं है," कोई कहता है और अब दारोगा साहब मामले को "यहीं नहीं छोड़ेंगे," वह कुत्ते के मालिक को सबक़ सिखाने की धमकी देते हैं। बात सारी यह है कि कुत्ते के मालिक की हैसियत क्या है – दारोगा जी से ऊंची, तो भला उसका क्या क़ुसूर हो सकता है; दारोगा जी से नीची, तो उसे पूरी सख़्ती से सज़ा मिलेगी।

आरम्भिक काल में चेख़ोव बड़ी चतुराई से तीखे बाण छोड़ते हैं। उनके प्रिय बिम्ब, उनकी धारणाएं छिपी हुई हैं, उन्हें अपने उद्‌गार व्यक्त करना पसंद नहीं, वह उन लोगों के बारे में नहीं लिखते, जो उन्हें अच्छे लगते हैं, परंतु उनकी तीक्ष्ण दृष्टि से ऐसी कोई बात नहीं छिपी रहती, जिसकी हंसी उड़ाई जानी चाहिए।

...ी के अंतिम तथा बीसवीं के पहले दशक में परिपक्व लेखक

चेखोव हास्य-व्यंग्य की लघु कथाओं की अपेक्षा गम्भीर बड़ी कहानियों, उपन्यासिकाओं की ओर अधिक ध्यान देते हैं। अब चेखोव का प्रमुख विषय उनका समसामयिक जीवन है, वह वातावरण है, जिसमें लोगों की आशाओं का टिमटिमाता दीप बुझ जाता है। 'इओनिच' कहानी के डाक्टर इओनिच की नियुक्ति स० नामक नगर में होती है। नगर के सबसे सुसंस्कृत और प्रतिभासम्पन्न परिवार के नाते तूरकिन परिवार से उसका परिचय कराया जाता है। यह परिवार सचमुच ही उसका मन मोह लेता है। तूरकिन की बेटी कात्या से तो उसे प्रेम हो जाता है और वह उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट करता है। लेकिन उसकी आत्मा में ध्वनित होते-प्रेम के इस स्वर के बीच-बीच में एक उदासीन, निर्लिप्त-शांत आवाज उठती रहती है। कहानी खत्म होते-होते प्रेमावेग में बह सकने वाला युवा इओनिच कहीं खो जाता है और रह जाता है तन-मन से आत्मसन्तुष्ट इओनिच। इओनिच का भाग्य—मनुष्य के शनैः-शनैः उदासीन और निष्ठुर होते जाने की कहानी है, और चेखोव के ही बिम्बों में कहा जाये, तो वह इओनिच की आत्मा में खिली "बकाइन" पर छाते घने "कोहरे" की कहानी है।

'रोमांस' कहानी 'इओनिच' से बिल्कुल उलट है। याल्टा के स्वास्थ्य विहार में छुट्टियां बिताने आया दमीत्री गूरोव कुत्ते वाली महिला आन्ना सेर्गेयेव्ना से मिलता है। उनका रोमांस चलता है। फिर दोनों अपने-अपने शहरों को लौट जाते हैं। जाड़ा आ जाता है, लेकिन गूरोव के हृदय से उस महिला की छवि नहीं जाती। और प्रेम व उदासीनता के बीच, ओछेपन और मानवीयता के बीच संघर्ष चलता है।

इस कहानी में चेखोव ने वह निष्कर्ष तैयार किया है, जो आगे चलकर 'दुलहन' में पूरी तरह ध्वनित होगा—सबसे बड़ी बात है—जीवन को उलट-पुलट दो।

'रोमांस' सोवियत पाठकों की और अनेक विदेशी पाठकों की भी शायद एक सबसे प्यारी कहानी है। कहानी है छोटी सी ही, लेकिन इस अद्भुत कथा के सामने मोटे-मोटे उपन्यास भी फीके पड़ जाते हैं।

चेखोव की कहानियों में सुकोमलता के साथ-साथ हृदय को झकझोरने की क्षमता भी है, लेकिन इनमें उपदेशात्मकता आप लेशमात्र भी नहीं पायेंगे। इन कहानियों में सहज प्रवाह है। ये कहानियां और 'वान्या मामा', 'तीन बहनें', 'सीगल', 'चेरी की बगिया' नाटक चेखोव के

गिरगिट

पुलिस का दारोगा श्रोचुमेलोव नया श्रोवरकोट पहने, हाथ में एक बण्डल थामे बाज़ार के चौक से गुज़र रहा है। लाल बालों वाला एक सिपाही हाथ में टोकरी लिये उसके पीछे-पीछे चल रहा है। टोकरी ज़ब्त की गयी झड़बेरियों से ऊपर तक भरी हुई है। चारों श्रोर ख़ामोशी... चौक में एक भी ग्रादमी नहीं... दुकानों व शराबख़ानों के भूखें जबड़ों की तरह खुले हुए दरवाज़े ईश्वर की सृष्टि को उदासी भरी निगाहों से ताक रहे हैं। यहां तक कि कोई भिखारी भी ग्रासपास दिखायी नहीं देता है।

"ग्रच्छा! तो तू काटेगा? शैतान कहीं का!" श्रोचुमेलोव के कानों में सहसा यह ग्रावाज़ ग्राती है। "पकड़ लो, छोकरो! जाने न पाये! ग्रब तो काटना मना है! पकड़ लो! ग्रा... ग्राह!"

कुत्ते के किकियाने की ग्रावाज़ सुनाई देती है। श्रोचुमेलोव मुड़ कर देखता है कि व्यापारी पिचूगिन की लकड़ी की टाल में से एक कुत्ता तीन टांगों से भागता हुग्रा चला ग्रा रहा है। एक ग्रादमी उसका पीछा कर रहा है—बदन पर छींट की कलफ़दार कमीज़, ऊपर वास्कट ग्रौर वास्कट के बटन नदारद। वह कुत्ते के पीछे लपकता है ग्रौर उसे पकड़ने की कोशिश में गिरते-गिरते भी कुत्ते की पिछली टांग पकड़ लेता है। कुत्ते की कीं-कीं ग्रौर वही चीख़—"जाने न पाये!" दोबारा सुनाई देती है। ऊंघते हुए लोग गरदनें दुकानों से बाहर निकाल कर देखने लगते हैं, ग्रौर देखते-देखते एक भीड़ टाल के पास जमा हो जाती है मानो ज़मीन फाड़ कर निकल ग्रायी हो।

"हुज़ूर! मालूम पड़ता है कि कुछ झगड़ा-फ़साद है!" सिपाही कहता है।

श्रोचुमेलोव बायीं ग्रोर मुड़ता है ग्रौर भीड़ की तरफ़ चल देता है। वह देखता है कि टाल के फाटक पर वही ग्रादमी खड़ा है, जिसकी वास्कट

समकालीन पाठकों के हृदयों में जीवन के वास्तविक रूप के प्रति घृणा जगाते थे, उस जीवन की चर्चा करते थे, जो होना चाहिए।

चेखोव का देहांत १९०४ में हुआ। जिस जीवन का उन्होंने वर्णन किया था, वह अतीत के गर्भ में समा चुका है। अब वह रूस नहीं रहा, वे कारखानेदार और व्यापारी नहीं रहे, दारोगा नहीं रहे, समाज का "मोटों" और "पतलों" में विभाजन नहीं रहा। चेखोव के नायक अब के लिए अतीत की, बीते अतीत की बातें हैं।

पर क्या कारण है कि आज के रूस में भी चेखोव एक सर्वाधिक लोकप्रिय लेखक हैं? क्यों उनकी लाखों की संख्या में छपने वाली पुस्तकें न दुकानों में, न पुस्तकालयों में रखी नजर आती हैं? इसके कारण अनेक हैं।

सोवियत रूस में और सारे संसार में चेखोव चहेते लेखक हैं और शायद इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि उनके लिए सत्य ही सर्वोपरि था।

चेखोव इसलिए चहेते हैं कि उनका सत्य कभी भी निर्लिप्त-शांत नहीं था, बौद्धिकता के आडम्बर से भरा, मानवद्वेषी नहीं था। इस सत्य का आस्था से, विश्वास से अटूट संबंध था।

चेखोव का कहना था—"आदमी को यह दिखा दो कि वह वस्तुतः में कैसा है, तो वह बेहतर हो जायेगा।"

चेखोव इसलिए चहेते लेखक हैं कि उनका अपना और उनके नायकों का जीवन कितना ही कठिन क्यों नहीं था, वह केवल उन सब को ही नहीं देखते व अनुभव करते थे, जो उनके इर्द-गिर्द था, अपितु भविष्य के निशब्द क़दमों की आहट भी सुनते थे।

चेखोव मेधावी लेखक थे। और इसके साथ ही वह निखरे भी मेधावी पाठक के लिए थे—उन्हें पाठक की संवेदनशीलता में विश्वास था—वह उसका अनावश्यक ध्यान नहीं रखते थे, उसे बच्चों की तरह कोई बात समझाने की कोशिश नहीं करते थे, अनजानों की तरह पाठ नहीं पढ़ाते थे। चेखोव का विश्वास था कि पाठक सब कुछ सही-सही समझ जायेगा, उनकी कहानियों के पृष्ठों पर "भटक" नहीं जायेगा।

सत्य के प्रति और आशा के प्रति निष्ठा—यही है चेखोव की धरोहर।

गिरगिट

पुलिस का दारोगा ओचुमेलोव नया ओवरकोट पहने, हाथ में एक बण्डल थामे बाज़ार के चौक से गुज़र रहा है। लाल बालों वाला एक सिपाही हाथ में टोकरी लिये उसके पीछे-पीछे चल रहा है। टोकरी ज़ब्त की गयी झड़बेरियों से ऊपर तक भरी हुई है। चारों ओर ख़ामोशी... चौक में एक भी आदमी नहीं... दुकानों व शराबख़ानों के भूखे जबड़ों की तरह खुले हुए दरवाज़े ईश्वर की सृष्टि को उदासी भरी निगाहों से ताक रहे हैं। यहां तक कि कोई भिखारी भी आसपास दिखायी नहीं देता है।

"अच्छा! तो तू काटेगा? शैतान कहीं का!" ओचुमेलोव के कानों में सहसा यह आवाज़ आती है। "पकड़ लो, छोकरो! जाने न पाये! अब तो काटना मना है! पकड़ लो! आ... आह!"

कुत्ते के किकियाने की आवाज़ सुनाई देती है। ओचुमेलोव मुड़ कर देखता है कि व्यापारी पिचुगिन की लकड़ी की टाल में से एक कुत्ता तीन टांगों से भागता हुआ चला आ रहा है। एक आदमी उसका पीछा कर रहा है–बदन पर छींट की कलफ़दार कमीज़, ऊपर वास्कट और वास्कट के बटन नदारद। वह कुत्ते के पीछे लपकता है और उसे पकड़ने की कोशिश में गिरते-गिरते भी कुत्ते की पिछली टांग पकड़ लेता है। कुत्ते की कीं-कीं और वही चीख–"जाने न पाये!" दोबारा सुनाई देती है। ऊंघते हुए लोग गरदनें दुकानों से बाहर निकाल कर देखने लगते हैं, और देखते-देखते एक भीड़ टाल के पास जमा हो जाती है मानो ज़मीन फाड़ कर निकल आयी हो।

"हुज़ूर! मालूम पड़ता है कि कुछ झगड़ा-फ़साद है!" सिपाही कहता है।

ओचुमेलोव बायीं ओर मुड़ता है और भीड़ की तरफ़ चल देता है। वह देखता है कि टाल के फाटक पर वही आदमी खड़ा है, जिसकी वास्कट

के करन मसरूफ हैं। वह अपना दाहिना हाथ ऊपर उठाये भीड़ को अप-
लहूलुहान उंगली दिखा रहा है। उसके नशीले चेहरे पर साफ़ लिखा हुआ
है, "तुझे मैं मज़े से न छोड़ूंगा, साले!" और उसकी उंगली भी जी-
का झंडा लगती है। ओचुमेलोव इस व्यक्ति को पहचान लेता है। यह सुन-
ख्रूकिन है। भीड़ के बीचोंबीच अगली टांगें पसारे, कांपता-एक सफ़े-
देहाती पिल्ला, दुबका पड़ा, ऊपर से नीचे तक कांप रहा है। उस-
मुंह नुकीला है और पीठ पर पीला दाग है। उसकी आंसू भरी आंखों
मुसीबत और डर की छाप है।

"क्या हंगामा मचा रखा है यहां?" ओचुमेलोव कंधों से भीड़ को
चीरते हुए सवाल करता है, "तुम उंगली क्यों ऊपर उठाये हो? कौ-
चिल्ला रहा था?"

"हुजूर! मैं चुपचाप अपनी राह जा रहा था," ख्रूकिन अपने मुं-
पर हाथ रख कर खांसते हुए कहता है। "मित्री मित्रिच से मुझे लकड़ी
के बारे में कुछ काम था। एकाएक, मालूम नहीं क्यों, इस कमबख्त ने
मेरी उंगली में काट लिया... हुजूर माफ़ करें, पर मैं कामकाजी आदमी
ठहरा... और फिर हमारा काम भी बड़ा पेचीदा है। एक हफ़्ते तक शायद
मेरी यह उंगली काम के लायक न हो पायेगी। मुझे हरजाना दिलवा दीजिये।
और, हुजूर, यह तो क़ानून में भी कहीं नहीं लिखा है कि ये मुए जानवर
काटते रहें और हम चुपचाप बरदाश्त करते रहें... अगर सभी ऐसे ही
काटने लगें, तब तो जीना दूभर हो जाये..."

"हूंह... अच्छा..." ओचुमेलोव गला साफ़ करके, त्योरियां चढ़ाते
हुए कहता है, "ठीक है... अच्छा, यह कुत्ता है किसका? मैं इस बात
को यहीं नहीं छोड़ूंगा! मैं कुत्तों को छुट्टा छोड़ने का मज़ा चखा दूंगा!
लोग क़ानून के मुताबिक़ नहीं चलते, उनके साथ अब सख्ती से पेश आना
पड़ेगा! ऐसा जुरमाना ठोकूंगा कि दिमाग़ ठीक हो जायेगा बदमाश को!
फ़ौरन समझ जायेगा कि कुत्तों और हर तरह के ढोर-डंगर को ऐसे छुट्टा
छोड़ देने का क्या मतलब है! मैं ठीक कर दूंगा, उसे! येल्दीरिन!"
सिपाही को संबोधित कर दारोगा चिल्लाता है, "पता लगाओ कि यह
कुत्ता है किसका, और रिपोर्ट तैयार करो! कुत्ते को फ़ौरन मरवा दो!
यह शायद पागल होगा... मैं पूछता हूं यह कुत्ता है किसका?"

"यह शायद जनरल झिगालोव का हो!" भीड़ में से कोई कहता है।

"जनरल झिगालोव का? हूंह... येल्दीरिन, जरा मेरा कोट तो उतारना... श्रोफ, बड़ी गर्मी है... मालूम पड़ता है कि बारिश होगी। अच्छा, एक बात मेरी समझ में नही आती कि इसने तुम्हें काटा कैसे?" ओचुमेलोव ख्रूकिन की ओर मुड़ता है। "यह तुम्हारी उंगली तक पहुंचा कैसे? यह ठहरा जरा सा जानवर और तुम पूरे लहीम-शहीम आदमी। किसी कील-वील से उंगली छील ली होगी और सोचा होगा कि कुत्ते के सिर मढ़ कर हरजाना वसूल कर लो। मैं खूब समझता हूं! तुम्हारे जैसे बदमाशों की तो मैं नस नस पहचानता हूं!"

"इसने उसके मुंह पर जलती हुई सिगरेट लगा दी थी, हुजूर! बस, यू ही मजाक मे। और यह कुत्ता बेवकूफ तो है नही, उसने काट लिया। ओछा आदमी है यह, हुजूर!"

"अबे! काने! झूठ क्यो बोलता है? जब तूने देखा नही, तो झूठ उडाता क्यो है? और सरकार तो ख़ुद समझदार हैं। सरकार ख़ुद जानते हैं कि कौन झूठा है और कौन सच्चा। और अगर मैं झूठा हू, तो अदालत से फैसला करा लो। क़ानून मे लिखा है... अब हम सब बराबर हैं, ख़ुद, मेरा भाई पुलिस मे है... बताये देता हूं... हा..."

"बन्द करो यह बकवास!"

"नही, यह जनरल साहब का नही है," सिपाही गभीरतापूर्वक कहता है "उनके पास ऐसा कोई कुत्ता है ही नही, उनके तो सभी कुत्ते शिकारी पोंटर हैं।"

"तुम्हें ठीक मालूम है?"

"जी, सरकार।"

"मैं भी जानता हूं। जनरल साहब के सब कुत्ते अच्छी नस्ल के हैं, एक से एक कीमती कुत्ता है उनके पास। और यह! यह भी कोई कुत्तों जैसा कुत्ता है, देखो न! बिल्कुल मरियल खारिश्ती है। कौन रखेगा ऐसा कुत्ता? तुम लोगों का दिमाग तो ख़राब नही हुआ? अगर ऐसा कुत्ता मास्को या पीटर्सबर्ग मे दिखाई दे, तो जानते हो क्या हो? क़ानून की परवाह किये बिना एक मिनट मे उसकी छुट्टी कर दी जाये! ख्रूकिन! तुम्हें चोट लगी है और तुम इस मामले को यूं ही मत टालो... इन लोगो को मज़ा चखाना चाहिए! ऐसे काम नहीं चलेगा।"

"लेकिन मुमकिन है, जनरल साहब का ही हो..." कुछ अपने

के बदन भगाता है। वह अपना दाहिना हाथ ऊपर उठाये भीड़ को अप-
लहूलुहान उंगली दिखा रहा है। उसके नशीले चेहरे पर साफ़ लिखा हुआ
है, "तुझे मैं सस्ते में न छोड़ूंगा, साले!" और उसकी उंगली भी वि-
जय का झंडा लगती है। ओचुमेलोव इस व्यक्ति को पहचान लेता है। वह सु-
ख्रूकिन है। भीड़ के बीचोंबीच अगली टांगें पसारे, अपराधी—एक सफ़ेद
ग्रेहाउंड पिल्ला, दुबका पड़ा, ऊपर से नीचे तक कांप रहा है। उस-
मुंह नुकीला है और पीठ पर पीला दाग है। उसकी आंसू भरी आंखों
मुसीबत और डर की छाप है।

"क्या हंगामा मचा रखा है यहां?" ओचुमेलोव कंधों से भीड़ को
चीरते हुए सवाल करता है, "तुम उंगली क्यों ऊपर उठाये हो? कौन
चिल्ला रहा था?"

"हुज़ूर! मैं चुपचाप अपनी राह जा रहा था," ख्रूकिन अपने मुं
पर हाथ रख कर खांसते हुए कहता है। "मित्री मित्रिच से मुझे लकड़ी
के बारे में कुछ काम था। एकाएक, मालूम नहीं क्यों, इस कमबख्त ने
मेरी उंगली में काट लिया... हुज़ूर माफ़ करें, पर मैं कामकाजी आदमी
ठहरा... और फिर हमारा काम भी बड़ा पेचीदा है। एक हफ़्ते तक शायद
मेरी यह उंगली काम के लायक न हो पायेगी। मुझे हरजाना दिलवा दीजिये
और, हुज़ूर, यह तो क़ानून में भी कहीं नहीं लिखा है कि ये मुए जानवर
काटते रहें और हम चुपचाप बरदाश्त करते रहें... अगर सभी ऐसे ही
काटने लगें, तब तो जीना दूभर हो जाये..."

"हूंह... अच्छा..." ओचुमेलोव गला साफ़ करके, त्योरियां चढ़ाते
हुए कहता है, "ठीक है... अच्छा, यह कुत्ता है किसका? मैं इस बात
को यहीं नहीं छोड़ूंगा! मैं कुत्तों को छुट्टा छोड़ने का मज़ा चखा दूंगा!
लोग क़ानून के मुताबिक़ नहीं चलते, उनके साथ अब सख़्ती से पेश आना
पड़ेगा! ऐसा जुरमाना ठोकूंगा कि दिमाग़ ठीक हो जायेगा बदमाश को!
फ़ौरन ... कि कुत्तें ... -इंस्पेक्टर को ऐसे छुट्टा
..., उसे! येल्दीरिन!"
"पता लगाओ कि यह
... फ़ौरन मरवा दो!
किसका?"
... से कोई कहता है।

"जनरल झिगालोव का? हुंह... येल्दीरिन, जरा मेरा कोट तो उतारना... ओफ, बड़ी गर्मी है... मालूम पड़ता है कि बारिश होगी। अच्छा, एक बात मेरी समझ मे नहीं आती कि इसने तुम्हें काटा कैसे?" ओचुमेलोव ख्यू किन की ओर मुडता है। "यह तुम्हारी उंगली तक पहुंचा कैसे? यह ठहरा जरा सा जानवर और तुम पूरे लहीम-शहीम आदमी! किसी कील-वील से उंगली छील ली होगी और सोचा होगा कि कुत्ते के सिर मढ़ कर हरजाना वसूल कर लो। मैं खूब समझता हू! तुम्हारे जैसे बदमाशों को तो मैं नस नस पहचानता हू!"

"इसने उसके मुह पर जलती हुई सिगरेट लगा दी थी, हुजूर! बस, यूं ही मजाक में। और यह कुत्ता बेवकूफ तो है नही, उसने काट लिया। ओछा आदमी है यह, हुजूर!"

"अबे! काने! झूठ क्यो बोलता है? जब तूने देखा नही, तो झूठ उडाता क्यो है? और सरकार तो खुद समझदार हैं। सरकार खुद जानते हैं कि कौन झूठा है और कौन सच्चा। और अगर मैं झूठा हू, तो अदालत से फैसला करा लो। कानून मे लिखा है... अब हम सब बराबर हैं, खुद, मेरा भाई पुलिस मे है... बताये देता हूं... हा..."

"बन्द करो यह बकवास!"

"नही, यह जनरल साहब का नही है," सिपाही गभीरतापूर्वक कहता है "उनके पास ऐसा कोई कुत्ता है ही नही, उनके तो सभी कुत्ते शिकारी पोटर हैं।"

"तुम्हें ठीक मालूम है?"

"जी, सरकार।"

"मैं भी जानता हूं। जनरल साहब के सब कुत्ते अच्छी नस्ल के हैं, एक से एक कीमती कुत्ता है उनके पास। और यह! यह भी कोई कुत्तो जैसा कुत्ता है, देखो न! बिल्कुल मरियल खारिश्ती है। कौन रखेगा ऐसा कुत्ता? तुम लोगों का दिमाग तो खराब नही हुआ? अगर ऐसा कुत्ता मास्को या पीटर्सबर्ग मे दिखाई दे, तो जानते हो क्या हो? कानून की परवाह किये बिना एक मिनट मे उसकी छुट्टी कर दी जाये! ख्यू किन! तुम्हे चोट लगी है और तुम इस मामले को यूं ही मत टालो... इन लोगों को मजा चखाना चाहिए! ऐसे काम नही चलेगा।"

"लेकिन मुमकिन है, जनरल साहब का ही हो..." कुछ अपने

पास में खड़ा सिपाही फिर कहता है, "इसके माथे पर तो लिखा नहीं
जनरल साहब के आंगन में मैंने कल बिल्कुल ऐसा ही कुत्ता देखा था।"

"हां, हां, जनरल साहब का ही तो है!" भीड़ में से किसी
आवाज आती है।

"हूं... येल्दीरिन, जरा मुझे कोट तो पहना दो... हवा चल र
है, मुझे सर्दी लग रही है... कुत्ते को जनरल साहब के यहां ले जा
और वहीं मालूम करो। कह देना कि इसे सड़क पर देख कर मैंने यहां
भिजवाया है... और हां, देखो, यह भी कह देना कि इसे सड़क पर
निकलने दिया करें... मालूम नहीं कितना कीमती कुत्ता हो और अग
हर बदमाश इसके मुंह में सिगरेट घुसेड़ता रहा, तो कुत्ता तबाह हो जायेगा
कुत्ता बहुत भावुक जानवर होता है... और तू हाथ नीचा कर, गध
कहीं का! अपनी गन्दी उंगली क्यों दिखा रहा है? सारा कसूर तेरा ही
है...

"यह जनरल साहब का बावर्ची आ रहा है, उससे पूछ लिया जाये
ए प्रोखोर! इधर तो आना भाई! इस कुत्ते को देखना, तुम्हारे यह
का तो नहीं है?"

"अमां वाह! हमारे यहां कभी भी ऐसे कुत्ते नहीं थे!"

"इसमें पूछने की क्या बात थी? बेकार वक्त खराब करता है,"
ओचुमेलोव कहता है, "आवारा कुत्ता है। यहां खड़े-खड़े इसके बारे में
बात करना समय बरबाद करना है। वह दिया न आवारा है, तो बस
आवारा ही है। मार डालो और काम खत्म!"

"हमारा तो नहीं है," प्रोख़ोर फिर आगे कहता है, "पर यह जनरल
साहब के भाई साहब का कुत्ता है। हमारे जनरल साहब को ग्रेहाउंड के
कुत्तों में कोई दिलचस्पी नहीं है, पर उनके भाई साहब को यह नस्ल
पसन्द है..."

"क्या? जनरल साहब के भाई साहब आये हैं? व्लादीमिर इवा-
निच?" अचम्भे से ओचुमेलोव बोल उठता है, उसका चेहरा आह्लाद से
चमक उठता है। "जरा सोचो तो! मुझे मालूम भी नहीं! अभी ठहरेंगे
क्या?"

"हां..."

"जरा सोचो, वह अपने भाई से मिलने आये हैं... और मुझे मालूम

भी नहीं कि वह आये हैं। तो यह उनका कुत्ता है? बड़ी खुशी की बात है। इसे ले जाओ... कुत्ता अच्छा... और कितना तेज़ है... इसकी उंगली पर झपट पड़ा! हा-हा-हा... बस बस, अब कांप मत। गुर्र-गुर्र... शैतान गुस्से में है... कितना बढ़िया पिल्ला है..."

प्रोखोर कुत्ते को बुलाता है और उसे अपने साथ ले कर टाल से चल देता है। भीड़ ख्यूकिन पर हसने लगती है।

"मैं तुझे ठीक कर दूगा," ओचुमेलोव उसे धमकाता है और अपना ओवरकोट लपेटता हुआ बाज़ार के चौक के बीच अपने रास्ते चल देता है।

१८८४

भागरो सिपाही फिर कहता है, "इसके माथे पर तो लिखा नहीं है। जनरल साहब के अहाते में मैंने कल बिल्कुल ऐसा ही कुत्ता देखा था।"

"हां, हां, जनरल साहब का ही तो है!" भीड़ में से किसी की आवाज आती है।

"हूंह... येल्दीरिन, जरा मुझे कोट तो पहना दो... हवा चल रही है, मुझे सरदी लग रही है... कुत्ते को जनरल साहब के यहां ले जाओ और वहां मालूम करो। कह देना कि इसे सड़क पर देख कर मैंने वापस भिजवाया है... और हां, देखो, यह भी कह देना कि इसे सड़क पर न निकलने दिया करें... मालूम नहीं कितना क़ीमती कुत्ता हो और अगर हर बदमाश इसके मुंह में सिगरेट घुसेड़ता रहा, तो कुत्ता तबाह हो जायेगा। कुत्ता बहुत नाजुक जानवर होता है... और तू हाथ नीचा कर, गधा कहीं का! अपनी गन्दी उंगली क्यों दिखा रहा है? सारा कुसूर तेरा ही है..."

"यह जनरल साहब का बावर्ची आ रहा है, उससे पूछ लिया जाये। ए प्रोख़ोर! इधर तो आना भाई! इस कुत्ते को देखना, तुम्हारे यहां का तो नहीं है?"

"अमां वाह! हमारे यहां कभी भी ऐसे कुत्ते नहीं थे!"

"इसमें पूछने की क्या बात थी? बेकार वक़्त ख़राब करना है," ओचुमेलोव कहता है, "आवारा कुत्ता है। यहां खड़े-खड़े इसके बारे में बात करना समय बरबाद करना है। कह दिया न आवारा है, तो बस आवारा ही है। मार डालो और काम ख़त्म!"

"हमारा तो नहीं है," प्रोख़ोर फिर आगे कहता है, "पर यह जनरल साहब के भाई साहब का कुत्ता है। हमारे जनरल साहब को ग्रेहाउंड के कुत्तों में कोई दिलचस्पी नहीं है, पर उनके भाई साहब को यह नस्ल पसन्द है..."

"क्या? जनरल साहब के भाई साहब आये हैं? व्लादीमिर इवानिच?" अचम्भे से ओचुमेलोव बोल उठता है, उसका चेहरा आह्लाद से चमक उठता है। "जरा सोचो तो! मुझे मालूम भी नहीं! अभी ठहरेंगे क्या?"

"हां..."

"जरा सोचो, वह अपने भाई से मिलने आये हैं... और

भी नही कि वह ग्राये हैं। तो यह उनका कुत्ता है? बड़ी ख़ुशी की बात है। इसे ले जाग्रो... कुत्ता ग्रच्छा... ग्रौर कितना तेज़ है... इसकी उगली पर झपट पडा! हा-हा-हा... बस बस, ग्रब कांप मत। गुर्र-गुर्र... शैतान गुस्से मे है... कितना बढ़िया पिल्ला है..."

प्रोखोर कुत्ते को बुलाता है ग्रौर उसे ग्रपने साथ ले कर टाल से चल देता है। भीड़ ख्र्यूकिन पर हंसने लगती है।

"मैं तुझे ठीक कर दूगा," ग्रोचुमेलोव उसे धमकाता है ग्रौर ग्रपना ग्रोवरकोट लपेटता हुग्रा बाज़ार के चौक के बीच ग्रपने रास्ते चल देता है।

१८८४

वान्का

नौ बरस का वान्का झूकोव, जिसे तीन महीने पहले अल्याखिन मोची के यहां काम सीखने भेजा गया था, बड़े दिन से पहले वाली रात को सोने नहीं गया। वह इन्तजार करता रहा और जब उसका मालिक और मालकिन तथा वहां काम करने वाले दूसरे लोग गिरजाघर चले गये, तो उसने मालिक की अलमारी से दवात और कलम निकाली, जिसकी निब में जंग लग गया था; उसने एक मुड़ा-तुड़ा कागज का ताव निकाला, उसे सीधा कर लिया और लिखने बैठ गया। पहला अक्षर बनाने के पहले उसने कई बार खिड़की और दरवाजे की तरफ सहमी आंखों से ताका, गहरे रंग के देवचित्र की ओर निहारा, जिसके दोनों ओर दूर तक जूतों के फर्मों से भरी शेल्फें थीं और कांपते हुए गहरी उसांस ली। कागज बेंच पर फैला हुआ था और वान्का बेंच के पास फर्श पर घुटनों के बल पड़ा था।

उसने लिखा, "प्यारे बाबा कोन्स्तान्तीन मकारिच! लो मैं तुम्हें चिट्ठी लिख रहा हूं। मैं तुम्हें बड़े दिन का सलाम भेजता हूं और आशा करता हूं कि ईश्वर तुम्हें सुखी रखेगा। मेरे बापू और मेरी अम्मा नहीं है और मेरे लिए बस तुम ही बाक़ी हो।"

वान्का ने सिर उठा कर खिड़की के अंधेरे शीशे की तरफ़ ताका, जिस पर उसकी मोमबत्ती की परछाईं झिलमिला रही थी; कल्पना में उसने अपने बाबा कोन्स्तान्तीन मकारिच को साफ़ देखा, जो झिवारियेव नामक किसी धनी आदमी का रात्रि चौकीदार था। वह दुबला-पतला, छोटा सा, पैंसठ साल का बूढ़ा था, पर बहुत चुस्त और फुर्तीला, उसके चेहरे पर सदा मुस्कान छायी रहती और उसकी आंखें शराब के नशे से चुंधियायी रहतीं। दिन में वह या तो नौकरों के रसोईघर में सोया करता या बैठा-बैठा रसोईदारिनों से मखौल किया करता, रात में वह भेड़ की खाल का बना लबादा ओढ़े, लाठी खटखटाते हुए हवेली के चारों ओर चक्कर काटा करता। उसके पीछे-पीछे उसकी बूढ़ी कुतिया कश्तान्का व

एक दूसरा कुत्ता, जो काले बालों और नेवले जैसे लम्बे शरीर की वजह से व्यून कहलाता था, सिर झुकाये चला करते। व्यून के ढंग से लगता कि उसमे आदर करने और हर एक से परिचय प्राप्त करने की विलक्षण प्रतिभा है, वह जान-पहचान वाले और अजनबी हर एक की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि डालता, पर उस पर विश्वास की भावना नही जमती थी। उसकी सिधाई और आदरसूचक बरताव तो दुष्टता की गहरी प्रवृत्तियों को छिपाने के लिए नकाब भर थे। अकस्मात दौड कर पैर मे काट लेने, तहखाने मे चुपचाप घुस जाने या किसानों की मुर्गियां झपट लेने मे वह उस्ताद था। आये दिन उसकी पिटाई होती रहती थी। दो दफा उसे रस्सी से बाध कर लटकाया जा चुका था, हर हफ्ते उसपर इतनी मार पडती थी कि वह अधमरा हो जाता था, पर इस सब के बावजूद वह जैसे का तैसा बना हुआ था।

बाबा शायद इस वक्त फाटक पर खड़े गांव के गिरजाघर की खिड़कियो से आ रही तेज़ लाल रोशनी को चुंधियाती आखों से देख रहे होंगे और फेल्ट बूट पहने पैर थपथपाते नौकरो-चाकरो से चुहल कर रहे होगे। वह अपनी बाहे फैलाते और सर्दी में सिकुड़ते होगे और रसोईदारिन या नौकरानी को चुटकी काटते हुए बूढो की तरह ही-ही करते होगे।

औरतो की तरफ हुलास की डिबिया बढ़ाते हुए वह कहते होंगे, "लो, एक चुटकी सुघनी लो।"

औरतें सुघनी नाक मे डालेंगी और छीकेंगी। बाबा बेहद खुश हो खिल्ली उड़ाते हुए ठट्ठा मार कर हंस पड़ेंगे और चिल्लायेंगे–

"ठंड से जमी नाक के लिए तो अकसीर है!"

कुत्तो को भी सुंघनी दी जायेगी। कश्तान्का छीकेगी, सिर हिलायेगी और चुपचाप चली जायेगी मानो बुरा मान गयी हो। लेकिन व्यून छीकने की अशिष्टता नही करेगा और दुम हिलाता रहेगा। मौसम बेहद सुहावना होगा। हवा थमी सी, पारदर्शी और ताज़ी। रात अंधेरी होगी, पर सफेद छतो, पाले और बर्फ से चमकते पेड़ों, चिमनियों से उठते धुएं वाला पूरा गाव साफ-साफ दिखाई पड़ता होगा। आसमान में खुशी से चमकते तारे छिटक रहे होगे और आकाश-गगा बिलकुल साफ दिखाई पड़ रही होगी मानो त्योहार के लिए अभी-अभी धोयी-माजी गयी हो और बर्फ से रगडी गयी हो...

वान्का ने गहरी सांस ली, स्याही में कलम डुबोयी और फि
लिखने लगा —

"और कल मुझ पर बुरी तरह मार पड़ी। मालिक मेरे बाल
पकड़ कर घसीटता हुआ बाहर आंगन में खींच ले गया और पेटी से मेरी
उधेड़ने लगा, क्योंकि संयोग से मैं उनके बच्चे को झुलाते झुलाते सो
गया। और पिछले हफ्ते एक दिन मालकिन ने मुझसे हेरिंग मछली साफ़
करने को कहा, मैंने उसकी दुम से सफ़ाई शुरू की, तो मालकिन ने मछली
ली और उसका सिर मेरे मुंह पर रगड़ डाला। दूसरे कामगार मेरा म
उड़ाते हैं, शराबख़ाने से वोदका लाने को भेजते हैं और मुझे मालिक
खीरे चुराने को मजबूर करते हैं और मालिक जो चीज़ भी सामने
जाये, उसी से मेरी ठुकाई करने लगता है। और खाने को कुछ मिल
नहीं। सवेरे रोटी का टुकड़ा दे देते हैं, दोपहर को दलिया और शाम
फिर रोटी का टुकड़ा। मुझे चाय-मिठाई या गोभी का शोरबा कभी न
मिलता, ये चीज़ें तो वे सारी की सारी खुद ही डकोस जाते हैं। मु
ड्योढ़ी में सुलाते हैं और रात में जब उनका बच्चा रोने लगता है,
मुझे उसे झुलाना पड़ता है और मैं बिल्कुल सो नहीं पाता। प्यारे बाबा
भगवान के लिए मुझे यहां से ले जाओ, मुझे गांव ले जाओ, मुझ से
यह सहा नहीं जाता... मेरे बाबा, मैं हाथ जोड़ता हूं, पैर पड़ता हूं,
मुझे यहां से ले जाओ, नहीं तो मैं मर जाऊंगा। मैं हमेशा तुम्हारे लि
भगवान से प्रार्थना करूंगा..."

वान्का के होंठ फड़के, काली मुट्ठी से उसने अपनी आंखें मलीं और
सिसकी भरी।

"मैं तुम्हारी सुंघनी पीस दिया करूंगा," उसने पत्र में आगे लिखा।
"मैं तुम्हारे लिए भगवान से प्रार्थना किया करूंगा और अगर मैं शरारत
करूं, तो जित्ते चाहो उत्ते बेंत मारना। और अगर तुम समझते हो कि
मेरे लिए वहां कोई काम नहीं है, तो मैं कारिन्दे से कहूंगा कि वह मुझ
पर रहम खा कर मुझे जूते साफ़ करने का काम दे दे या मैं फ़ेद्या की
जगह चरवाहे का काम कर लूंगा। प्यारे बाबा, मैं अब और बरदाश्त नहीं
सकता, मेरी जान निकली जा रही है। जी मे आया था कि पैदल
भाग जाऊं, पर मेरे पास जूते नहीं हैं और मुझे पाले का डर है।
मैं बड़ा हूंगा, तब मैं तुम्हारी देखभाल करूंगा और मैं किसी को भी

तुम्हें तकलीफ़ नहीं पहुंचाने दूंगा और जब तुम मर जाओगे, तब मैं तुम्हारी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करूंगा जैसे मैं अम्मा के लिए करता हूं।

"और मास्को इतना बड़ा शहर है। बड़े लोगों के यहां इतने सारे मकान हैं और इतने घोड़े हैं और भेड़ें तो बिल्कुल नहीं हैं और कुत्ते डरावने नहीं हैं। बड़े दिन पर लड़के सितार ले कर नहीं निकलते और गिरजाघर में गाना गाने को उन्हें जाने नहीं दिया जाता है। एक बार मैंने दुकान में मछली पकड़ने के कांटे बिकते देखे और वहां डोर लगी बंसी थी, जैसी चाहो वैसी मछली पकड़ने की बंसी, और वहां एक बहुत बढ़िया कांटा था, जिस पर आध-आध मन के रोहू तक आ जायें। और मैंने दुकानें देखी हैं, जहां हर तरह की बंदूकें मिलती हैं, बिल्कुल वैसी ही जैसी घर पर मालिक के पास हैं। उनकी क़ीमत सौ रूबल तो ज़रूर होगी... और बूचड़ों की दुकानों पर तीतर, वनकुकरी और खरगोश मिलते हैं, पर वे लोग यह नहीं बताते कि वे इन्हें कहां से मार कर लाते हैं।

"प्यारे बाबा, वहां हवेली में, जब बड़े दिन का फ़र का पेड़ सजायेंगे, तब तुम उसमें से मेरे लिए पन्नीवाला एक अखरोट ले लेना और उसे हरी सन्दूकची में रख देना। छोटी मालकिन श्रोल्गा इग्नात्येव्ना से मांग लेना, वह देना वान्का के लिए है।"

वान्का ने गहरी सांस ली और फिर खिड़की के शीशे की ओर ताकने लगा। उसे याद आया, बाबा मालिकों के लिए बड़े दिन का फ़र का पेड़ लेने जंगल में जाया करते थे और उसे अपने साथ ले जाते थे। वे भी कितने सुख के दिन थे! फ़र के पेड़ काटने के पहले बाबा पाइप सुलगाते, एक चुटकी हुलास लेते और ठंड से कांपते वान्का पर हंसते... फ़र के पेड़ बर्फ़-पाले से ढंके, स्तब्ध से खड़े यह प्रतीक्षा करते कि उनमें से कौन मरेगा? और यकायक बर्फ़ के ढेरों पर उछलता कोई खरगोश तीर सा निकल जाता। बाबा चिल्लाने से न चूकते –

"रोक ले, पकड़ ले... ऐ दुमकटे शैतान!"

बाबा पेड़ घसीटते हुए हवेली ले जाते और वहां उसे सजाना शुरू कर देते... वान्का की प्यारी छोटी मालकिन श्रोल्गा इग्नात्येव्ना सबसे ज्यादा व्यस्त होती। जब तक वान्का की मां पेलागेया जिन्दा थी और हवेली में चाकरी करती थी, श्रोल्गा इग्नात्येव्ना वान्का को मिठाइयां देती थी। अपने मनबहलाव के लिए उन्होंने उसे पढ़ना [illegible] तक गिनती

नाचना और "क्वाड्रिल" नाच नाचना भी सिखाया था। पर जब ओल्गा इग्नात्येव्ना मर गयी, तो अनाथ वान्का फिर अपने बाबा के पास नौकरों के रसोईघर में और वहां से मोची अल्याखिन के यहां मास्को भेज दिया गया...

वान्का ने आगे लिखा— "प्यारे बाबा, मेरे पास आ जाओ, ईसा मसीह के नाम पर मुझे यहां से ले जाओ। मुझ अभागे अनाथ पर दया करो। ये लोग हमेशा मुझे पीटते रहते हैं और मैं बराबर भूखा रहता और इतना दुखी हूं कि तुम्हें बता नहीं सकता, मैं बराबर रोता रहता हूं। और अभी उस दिन मालिक ने मेरे सिर पर कलबूत इतने जोर से मारा कि मैं गिर पड़ा और मुझे लगा कि अब मैं फिर उठ नहीं पाऊंगा। मेरी जिंदगी कुत्ते से भी बदतर है... और अल्योना, काने येगोर और कोचवान को मेरा प्यार कहना और मेरा बाजा किसी को मत देना। मैं हूं तुम्हारा नाती वान्का झूकोव। प्यारे बाबा, आ जाओ।"

वान्का ने कागज को चौहरा मोड़ा और उसे एक लिफ़ाफ़े में रख दिया, जिसे वह एक दिन पहले एक कोपेक का ख़रीद लाया था... फिर वह ठहर कर सोचने लगा, फिर दावात में क़लम डुबोयी और लिखा "गांव में, बाबा को मिले," फिर सोचा, अपना सिर खुजलाया और जोड़ दिया, "कोन्स्तान्तीन मकारिच को मिले।" इस बात पर खुश होते हुए कि लिखने में उसे किसी ने नहीं रोका-टोका, उसने टोपी लगायी और क़मीज़ पर कोट पहने बिना गली में दौड़ गया...

एक दिन पहले बूचड़ की दुकान में पूछने पर लोगों ने उसे बताया था कि ख़त डाक के बम्बे में डाले जाते हैं और इन बम्बों से डाक की गाड़ियों पर सारी दुनिया में भेजे जाते हैं, जिनके तीन घोड़े होते हैं, कोचवान शराबी होते हैं और जिनमें घंटियां बजा करती हैं। वान्का पास वाले बम्बे तक दौड़ कर पहुंचा और अपनी अमूल्य चिट्ठी बम्बे की दरार में डाल दी...

घण्टे भर बाद सुनहरी आशाओं की लोरियों ने उसे गहरी नींद में सुला दिया... उसने एक अलावघर का सपना देखा, अलावघर के ऊपर बाबा बैठे थे, उनके नंगे पैर लटक रहे थे, वह रसोईदारिनों को चिट्ठी पढ़ कर सुना रहे थे... व्यून अलावघर के सामने आगे-पीछे दुम हिलाते हुए टहल रहा था...

१८८६

तितली

१

ग्रोल्गा इवानोव्ना के तमाम दोस्त और जान-पहचान के लोग उसकी शादी मे सम्मिलित हुए।

"जरा देखिये तो इन्हें, लगता है न कि इनमें कुछ विचित्र बात है, है न?" सिर से पति की ओर इशारा करते हुए वह अपने दोस्तों से कह रही थी मानो यह सफाई देने को उत्सुक हो कि कैसे वह एक मामूली आदमी से, जो किसी भी मानी मे उल्लेखनीय नही था, शादी करने को राजी हो गयी थी।

उसका पति ग्रोसिप स्तेपानिच दीमोव डाक्टर था और उसका ओहदा कोई बड़ा नही था। वह दो अस्पतालों मे काम करता था, एक अस्पताल मे बाहरी डाक्टर के रूप में और दूसरे मे शव-विच्छेदक की हैसियत से। रोज नौ बजे से बारह बजे तक वह आने वाले मरीजों को देखता और अपने वार्ड का मुआइना करता और तीसरे पहर घोड़ों वाली ट्राम मे दूसरे अस्पताल चला जाता, जहां मरने वाले मरीजों के शवों की चीरफाड़ कर परीक्षा करता। उसकी व्यक्तिगत प्रैक्टिस बहुत कम थी, लगभग पांच सौ रूबल सालाना। बस, उसके बारे मे और कोई खास बात नही थी। पर ओल्गा इवानोव्ना और उसके दोस्तों को किसी भी तरह से साधारण नहीं कहा जा सकता था। उनमें से हर एक किसी न किसी तरह से विलक्षण था और थोड़ा बहुत नाम कमा चुका था। उन लोगो की ख्याति थी और उन्हें अपने क्षेत्र की हस्ती माना जाता था और यदि कोई हस्ती नहीं था, तो भी होनहार अवश्य था। एक अभिनेता था, जिसकी वास्तविक नाट्य प्रतिभा को स्वीकार कर लिया गया था। वह शालीन, चतुर, विवेकपूर्ण था और सुंदर ढंग से कविताओं, कहानियों का पाठ करता था और ओल्गा इवानोव्ना को भी इसकी शिक्षा देता था। दूसरा एक ग्रोपेरा का गायक था, मोटा और सुशील। वह आह भर कर ओल्गा इवानोव्ना को यक़ीन

दिखाता कि वह अपने को बरबाद कर रही है। अगर वह इतनी कठि
न करे, मगर वह कर्मठ बने, तो वह बहुत अच्छी गायिका बन सक
है। इनके अलावा कई कलाकार थे, जिनमें सबसे प्रमुख रूसावोस्की थ
जो दैनंदिन जीवन के दृश्यों, जानवरों तथा प्राकृतिक दृश्यों का चित्र बना
था और लगभग पच्चीस साल की उम्र का बहुत सुन्दर, हल्के सुनहरे बा
वाला नवयुवक था। प्रदर्शनियों में उसके चित्रों की प्रशंसा होती थी औ
सबसे नया चित्र पाँच सौ रूबल में बिका था। वह ओल्गा इवानोव्ना के
रेखाचित्र सुधारता था और कहता था कि संभवतः चित्रकार बन सकती है
और एक वायलिन बजाने वाला भी था, जो बाजे पर रुदन की धुन बज
सकता था, जिसकी खुली घोषणा थी कि उसकी तमाम परिचित औरतों
में केवल ओल्गा इवानोव्ना उसकी संगत कर सकती है। एक लेखक भी
था, नौजवान लेकिन ख्याति प्राप्त, जिसने लघु उपन्यास, नाटक और कहा
नियाँ लिखी थीं। और कौन? हाँ, वासीली वासीलिच भी था, जो कुलीन
ज़मीदार था और जो पुस्तकों पर शौक़िया चित्र और बेलबूटे बनाता था
और जिसे प्राचीन रूसी शैली से और रूसी पौराणिक गाथाओं से सच्चा
प्रेम था। वह काग़ज़ों, चीनी मिट्टी की चीज़ों और कज्जलित तश्तरियों
पर आश्चर्यजनक चित्र बना सकता था। इस कलाकारों के उदार समाज
में, भाग्य के इन प्रियपात्रों में, जिन्हें सभ्य और शिष्ट होते हुए भी डाक्टर
के अस्तित्व की सिर्फ़ बीमार पड़ने पर याद आती थी और जिनके कानों
के लिए दीमोव सिदोरोव या तारासोव जैसा साधारण नाम था, उनके
बीच दीमोव एक अजनबी, छोटा और फ़ालतू सा व्यक्ति मालूम पड़ता
था, हालांकि वह लम्बा और चौड़े कन्धों वाला था। उसका कोट ऐसा
लगता था कि किसी दूसरे के लिए बनाया गया है और उसकी दाढ़ी कारिंदे
जैसी थी। यह सही है कि अगर वह लेखक अथवा कलाकार होता, तो
यह कहा जाता कि दाढ़ी की वजह से वह ज़ोला जैसा लगता है।

अभिनेता ओल्गा इवानोव्ना से कह रहा था कि पटसनी बालों का
जूड़ा किये और शादी की पोशाक पहने वह चेरी के पेड़ सी लग रही है।
उतनी ही सुन्दर जैसा कि वसंत में सफ़ेद फूलों से लदा चेरी का पेड़।

"नहीं, पर सुनिये तो!" ओल्गा इवानोव्ना उसका हाथ पकड़ते हुए
कह रही थी। "ऐसा हुआ कैसे? मेरी बात सुनिये, सुनिये तो... हुआ
यह कि पिता जी और दीमोव एक ही अस्पताल में काम करते थे। बेचारे

एक कोने में बड़ा हैंगिंग और शीशा रख दिया और इस तरह से सोने का कमरा बिल्कुल नयी ढंग का बना दिया। सोने के कमरे की दीवारें और छत पर उसने गहरे रंग के पर्दे लगा दिये ताकि वह गुफा सी मालूम हो, खिड़कियों के ऊपर कैनिंग का शेड लगा दिया और दरवाज़े पर फ़ानूस लिए एक मूर्ति खड़ी कर दी। सबका कहना था कि नव दम्पति ने अपने लिए बहुत आरामदेह नीड़ तैयार कर लिया है।

ओल्गा इवानोव्ना हर रोज़ ग्यारह बजे जागती, पियानो बजाती या अगर धूप होती तो तैल-चित्र बनाती। बारह के थोड़ी देर बाद वह अपनी दर्ज़िन के यहां जाती। उसके और दीमोव के पास बहुत थोड़ा पैसा था, सिर्फ़ ज़रूरत भर के लिए काफ़ी, और नयी-नयी पोशाकें पहनने तथा औरों पर रोब डालने के लिए उसे और उसकी दर्ज़िन को हर मुमकिन चालाकी करनी पड़ती। बार-बार पुरानी रंगी हुई फ़्राक और सस्ते लेस, मखमल और रेशम के कुछ टुकड़ों से अचम्भे कर दिखाये जाते और पोशाक नहीं, बिल्कुल बढ़िया चीज़, एक सपना सा बन कर तैयार कर दी जाती। दर्ज़िन के यहां से आम तौर पर वह अपनी किसी परिचित अभिनेत्री के यहां थियेटर की गपशप सुनने जाती और साथ ही किसी नाटक के पहले प्रदर्शन या सहायतार्थ नाटक के टिकट पा लेने की कोशिश करती। अभिनेत्री के यहां से उसको किसी कलाकार के स्टूडियो में या चित्र-प्रदर्शनी देखने जाना पड़ता और फिर वहां से किसी ख्यातिप्राप्त व्यक्ति के यहां—उसे अपने घर बुलाने के लिए या उससे मिलने के लिए अथवा सिर्फ़ गपशप करने के लिए जाना होता। हर जगह अपनत्व और ख़ुशी से उसका स्वागत किया जाता और उसे विश्वास दिलाया जाता कि वह अच्छी, असाधारण, प्यारी है... जिनको वह महान और विख्यात कहती थी, वे उसका बराबरी के दर्जे से स्वागत करते और उनकी सर्वसम्मत राय थी कि अपने गुणों, दिमाग़ और रुचि के कारण वह अवश्य ऊंची उठेगी, बशर्ते वह अपनी प्रतिभा को इतनी दिशाओं में बर्बाद करना बन्द कर दे। वह गा लेती, पियानो बजा लेती, तैल-चित्र बना लेती, मिट्टी की मूर्तियां बना लेती, शौक़िया नाटकों में अभिनय करती, और यह सब काम यूं ही, मामूली ढंग से नहीं, बल्कि प्रतिभा का प्रदर्शन करते हुए। वह जो भी काम करती, चाहे सजावट के लिए लालटेन बनानी हो, पोशाक पहननी हो, और चाहे किसी को मामूली सी टाई बांधनी हो, कलापूर्ण, सुघड़ और मोहक ढंग से करती।

लेकिन किसी भी चीज में उसकी प्रतिभा इतनी अच्छी तरह प्रदर्शित न होती जितनी कि ख्यातिप्राप्त लोगों से तत्काल दोस्ती और आत्मीयता उत्पन्न कर लेने में। जैसे ही कोई जरा सा भी नाम करता और उसके बारे में चर्चा शुरू होती, ओल्गा इवानोव्ना फौरन उससे जान-पहचान पैदा कर लेती, उसी दिन दोस्त बन जाती और उस व्यक्ति को अपने यहां आमंत्रित कर लेती। प्रत्येक नयी जान-पहचान उसके लिए एक सुनहरा दिन होती। वह प्रसिद्ध व्यक्तियों की पूजा करती थी, वह उनपर गर्व करती और रात मे उन्हीं लोगों को सपने मे देखती थी। ख्यातिप्राप्त लोगों से जान-पहचान की उसकी प्यास बहुत प्रबल थी, जिसको वह कभी बुझा न पाती थी। पुराने मित्र विलीन हो जाते और भुला दिये जाते, उनकी जगह नये मित्र ले लेते लेकिन थोड़े दिनों मे वह इनसे भी उकता जाती या निराश हो जाती और वह उत्सुकता से नये-नये विख्यात लोगों को खोजने लगती और जब उन लोगों को पा लेती, तो फिर से नये विख्यात लोगों की तलाश करती। किसलिए?

चार और पांच बजे के बीच वह अपने पति के साथ घर पर भोजन करती। दीमोव की सादगी, सहज बुद्धि और हंसमुख स्वभाव उसको प्रशंसा और आह्लाद की दशा मे पहुंचा देता। वह रह-रह कर अपनी कुर्सी से उछल पड़ती, बाहे डाल कर उसके माथे पर चुम्बनों की बौछार कर देती।

"तुम बुद्धिमान और उदार व्यक्ति हो, दीमोव," वह दीमोव से कहती, "लेकिन तुम में एक बहुत बड़ा दोष है। तुम कला में रंचमात्र भी दिलचस्पी नही लेते। तुम तो संगीत और चित्रकला की अवहेलना करते हो।"

"मैं उन्हें समझता नही," वह नम्रता से कहता। "सारी उम्र मैंने प्राकृतिक विज्ञान और चिकित्सा का अध्ययन किया है और कभी भी कला के लिए मेरे पास समय नहीं रहा।"

"लेकिन यह तो बहुत बुरी बात है, दीमोव!"

"क्यों? तुम्हारे दोस्त प्राकृतिक विज्ञान और कुछ नही जानते और तुम्हे उन लोगो से [illegible] अपना क्षेत्र होता है। चित्र या ओपेरा मेरी समझ मे नहीं आते, लेकिन मैं तो इस तरह सोचता हूं कि चूंकि कुछ होशियार आदमी इन चीजों मे सारी जिन्दगी लगा देते हैं और दूसरे बुद्धिमान लोग इनके लिए काफी

धन ख़र्च करते हैं, इसलिए वे जरूर ही आवश्यक होंगी। मैं उन्हें समझता नहीं हूं, लेकिन इसकी यह मानी नहीं कि मैं उनकी अवहेलना करता हूं।"

"जरा अपना ईमानदार हाथ बढ़ाना, मैं दबाऊं उसे!"

भोजन के बाद ओल्गा इवानोव्ना मुलाक़ातें करने के लिए निकल ज और फिर नाटक या कंसर्ट में जाती और आधी रात से पहले घर वा न लौटती। हर रोज यही क्रम रहता।

बुधवार की शाम को लोगों से मिलने के लिए वह घर पर रह बुधवार की इन शामों को मेजबान और मेहमान नाचते या ताश नहीं खे थे, वे तो कला से अपना मनोरंजन करते थे। अभिनेता संवाद सुनाः गायक गाता, चित्रकार ओल्गा इवानोव्ना के असंख्य एल्बमों में चित्र बनाः वायलिन बजाने वाला वायलिन बजाता और गृहणी स्वयं चित्र बनाते मूर्तियां बनाती, गाती और गाने वालों के साथ बाजा बजाती। संवाद बोलने गाने और बजाने के बीच के अवकाश में वे कला, साहित्य और नाट्य के बारे में बातचीत और बहस करते। इन गोष्ठियों में कोई औरतें न होतीं क्योंकि ओल्गा इवानोव्ना अपनी दर्जिन और अभिनेत्रियों को छोड़ कर हर औरत को तुच्छ और उबा देने वाली समझती थी। बुधवार की कोई शा ऐसी न होती, जबकि हर घंटी की आवाज पर गृह स्वामिनी विजय भा से यह न कहती हो कि "यह वह है!" जिसका अर्थ नवीन आमंत्रि प्रसिद्ध व्यक्ति की ओर इशारा होता। दीमोव कभी भी बैठक में न आत और किसी को उसके अस्तित्व का भी भान न रहता। लेकिन ठीक सा ग्यारह बजे खाने के कमरे का दरवाजा खुलता और सरलहृदय नम्र मुस्कराहट के साथ हाथ मलते हुए दीमोव दरवाजे पर यह कहता हुआ दिखाई देता—

"आइये, जनाब, कुछ खाना-पीना हो जाये।"

सब लोग खाने के कमरे में जाते और हर मरतबा उनकी आंखें यही चीजें पातीं—ओयस्टर की तश्तरी, टिनबंद मछली, बेकन या बछड़े का गोश्त, पनीर, खुम्बियों का अचार, कैवियार, वोद्का और दो जग हल्की शराब के।

"मेरे प्यारे मैनेजर!" आह्लाद से ताली बजाती हुई ओल्गा इवानोव्ना अपने पति से कहती, "तुम तो बहुत मनमोहक हो। जरा इनका माथा देखिये! दीमोव, हम लोगों की तरफ़ अपना चेहरा तो घुमाओ ऐसे कि

सिर्फ पार्श्व दिखाई दे। देखिये, बंगाल के बाघ का चेहरा और हरिण की तरह दयालु और प्यारा भाव। मेरे प्यारे!"

मेहमान खाना खाते हुए दीमोव की ओर देखते और सोचते—"वास्तव में भला आदमी है यह," लेकिन वे फौरन ही फिर से उसको भूल कर नाटक, संगीत, कला की बातें करने लगते।

युवा दम्पति सुखी थे और उनकी जिन्दगी हंसी-ख़ुशी से कट रही थी। यह सही है कि मधुमास का तीसरा हफ़्ता पूरी तौर पर सुखी नहीं रहा, वास्तव में यह हफ़्ता दुख में कटा। दीमोव को अस्पताल में एरिसिपेलेटस शोथ हो गया और उसको छह रोज़ बिस्तर में रहना पड़ा। खूबसूरत काले बालों वाला उसका सिर मुंड दिया गया। बुरी तरह रोती हुई ओल्गा इवानोव्ना उसके सिरहाने बैठी रही। लेकिन जब वह ज़रा अच्छा हुआ, तो उसने उसके सिर पर एक सफ़ेद रूमाल बांध दिया और अरब बद्दू की शक्ल में उसका चित्र बनाने लगी। दोनों ने इसे बड़ा मनोरंजक माना। बिल्कुल ठीक हो जाने के कोई तीन दिन बाद, जब उसने अस्पताल जाना शुरू कर दिया था, उसपर फिर एक विपत्ति आ गयी।

"मेरी तक़दीर बहुत बुरी है," दीमोव ने एक दिन खाना खाते वक़्त ओल्गा इवानोव्ना से कहा। "आज मुझे चार शवों की चीरफाड़ करनी पड़ी और मेरी दो उंगलियां कट गयीं। घर लौटने पर ही मैंने यह देखा।"

ओल्गा इवानोव्ना घबरा उठी। वह मुस्कराया और बोला कि कोई बात नहीं है और चीरफाड़ के दौरान अक्सर उसके हाथ पर नश्तर लग जाता है।

"मैं तन्मय हो जाता हूं और फिर सब कुछ भूल जाता हूं।"

ओल्गा इवानोव्ना घबरा कर सेप्सिस शुरू होने की आशंका में रही और रात-रात भर प्रार्थना करती रही कि सेप्सिस न हो। पर खैर सब ठीक रहा। और पहले की तरह सुखी और शांतिपूर्ण, चिन्ताहीन व कष्टहीन जीवन का ढर्रा फिर चल पड़ा। वर्तमान सुन्दर था ही और जल्द ही वसन्त आने वाला था—दूर से मुस्कराता हुआ, उन्हें हज़ार ख़ुशियों का सुखद आश्वासन देता हुआ कि सदैव प्रसन्नता ही रहेगी। अप्रैल, मई और जून के लिए नगर से दूर दाचा होगा—टहलो, प्रकृति की गोद में स्कैच बनाओ, मछली पकड़ो और बुलबुलों के गीत सुनो; और फिर जुलाई से पतझड़ तक वोल्गा पर कलाकारों की यात्रा, जिसमें ओल्गा इवानोव्ना के न जाने की

कोई कल्पना ही नहीं कर सकता था। उसने पटुए की दो सफ़र की पोशाकें बनवा ली थी और रंग, कूंची व किरमिच और रंग-पटल खरीद लिये थे। उसका चित्रकला का अभ्यास कैसा चल रहा है यह देखने के लिए र्‌याबोवस्की लगभग रोज़ ही आता। जब वह उसे अपने चित्र दिखाती, तो जेबों में हाथ डाल कर, होंठ भींच कर, नाक चढ़ाता हुआ वह कहता—

"हूं... यह बादल बहुत भड़कीला है। उसपर लौ शाम की नहीं है। अग्रभूमि गड़बड़ है और कुछ कमी है... झोंपड़ी दबोच दी गयी लगती है और वह रिरिया रही है... उस कोने को और ज्यादा गहरा करना चाहिए। वैसे सब मिला कर तसवीर इतनी बुरी नहीं है... साधुवाद।"

वह जितना ही ज्यादा गूढ़ ढंग से बोलता, उतनी ही आसानी ओल्गा इवानोव्ना को उसे समझने में होती।

३

जून में पवित्र त्रयक पर्व के दूसरे दिन को तीसरे पहर दीमोव कुछ मिठाइयां और खाने की चीजें ले कर अपनी बीवी के पास उपनगर गया। उसने पन्द्रह दिन से उसे देखा नहीं था और उसकी याद उसे बुरी तरह सता रही थी। रेल में और उसके बाद, जब वह घनी झाड़ियों में अपना दाचा ढूंढ रहा था, तो उसको बहुत ज़ोर की भूख लग रही थी। दीमोव अपनी बीवी के साथ बैठ कर खाने और फिर बिस्तर में लेट आराम करने के ध्यान में मग्न हो गया था। अपने हाथ की पोटली को देख कर, जिसमें कैवियार, पनीर और मछली थी, उसे ख़ुशी हो रही थी।

सूरज ढल चुका था, जब वह तलाश करके अपना दाचा पा सका। बूढ़ी नौकरानी ने उसे बताया कि मालकिन घर पर नहीं हैं, लेकिन शायद थोड़ी देर में वापस आ जायें। सादे काग़ज़ लगी नीची छतों, ऊंचे-नीचे, दरार पड़े फ़र्श वाले बदनुमा से दाचा में सिर्फ़ तीन कमरे थे। एक कमरे में एक बिस्तर था, दूसरे में तसवीर बनाने की किरमिच, रंग की कूचियां, मैला काग़ज़, मर्दों के कोट और टोप कुर्सियों और खिड़कियों पर बिखरे पड़े थे और तीसरे कमरे में दीमोव की भेंट तीन अजनबी आदमियों से हुई। दो तो काले बालों वाले और दाढ़ियां रखे हुए थे और तीसरा मोटा व्यक्ति

और शर्मीला, उससे सहानुभूति न करना पाप होगा। जरा सोचो, शादी प्रार्थना के फ़ौरन बाद होगी और सब लोग गिरजे से सीधे दुलहन के घर पैदल जा रहे हैं... उजला, गाती हुई चिड़ियां, घास पर सूर्य की किरणें और चमकीली हरी पृष्ठभूमि पर हम सब रंगीन धब्बे—कितना मौलिक, बिल्कुल फ़्रांसीसी अभिव्यक्तिवादियों की रुचि के अनुसार। लेकिन, दीमोव, मैं क्या पहन कर गिरजे आऊंगी?" व्याकुल चेहरा बनाते हुए ओल्गा इवानोव्ना ने कहा। "यहां मेरे पास कुछ नहीं है, वाक़ई कुछ नहीं है, न पोशाक, न फूल, न दस्ताने... तुमको मुझे बचाना ही पड़ेगा। इस वक़्त तुम्हारे यहां आने के मानी हैं कि यह भाग्य की इच्छा थी कि तुम मुझे बचाओ। चाभियां ले लो, प्यारे, घर जाओ और कपड़ों की अलमारी से मेरी गुलाबी पोशाक ले आओ। याद है? वह बिल्कुल सामने ही लटक रही है... और स्टोर के फ़र्शपर दायीं ओर तुम्हें दो दफ़्ती के बक्स मिलेंगे; जब तुम ऊपर वाला बक्स खोलोगे तो तुम्हें जालीदार कपड़े और दुनिया भर के टुकड़ों के सिवा और कुछ नहीं दीख पड़ेगा और उनके नीचे फुलवारी। जितनी फुलवारी हों, उनको होशियारी से निकाल लेना और कोशिश करना कि गिजगिजाये नहीं। मैं बाद में उनमें से कुछ चुनूंगी... और मेरे लिए दस्तानों का एक जोड़ा ख़रीद लेना।"

"अच्छा," दीमोव ने कहा, "मैं कल जा कर उन्हें भेज दूंगा।"

"कल?" उसकी ओर स्तब्धता से देखते हुए ओल्गा इवानोव्ना ने कहा। "कल तो सम्भव ही नहीं है। पहली गाड़ी कल नौ बजे छूटती है और शादी ग्यारह बजे है। नहीं, प्यारे, तुम्हें आज ही जाना है, ज़रूर आज! अगर तुम ख़ुद कल नहीं आ सकते हो, तो सब चीज़ें अरदली के हाथ भेज देना। जाओ, अभी... गाड़ी अब आती ही होगी। मेरे दुलारे, देर मत करो।"

"अच्छी बात है।"

"ओह, तुम्हें भेजते हुए मुझे कितना क्षोभ हो रहा है।" ओल्गा इवानोव्ना ने कहा और उसकी आंखों में आंसू भर आये। "तार बाबू से वादा करके मैंने कितनी बड़ी बेवक़ूफ़ी की है।"

चाय का गिलास निगल कर, एक बिस्कुट ले कर दीमोव नम्रता से मुस्कराते हुए स्टेशन चला गया। कैवियार, पनीर और मछली का मज़ा

४

जुलाई की एक निस्तब्ध चादनी रात मे ओल्गा इवानोव्ना वोल्गा नदी मे एक स्टीमर पर खडी बारी-बारी से पानी और नदी का सुन्दर किनारा देख रही थी। उसके पास र्‌याबोवस्की खड़ा हुआ उसे बता रहा था कि पानी की सतह पर पड़ने वाली काली छायाएं छायाएं नही, स्वप्न हैं, यह जादू भरा चमकीला पानी, असीम आकाश, ये उदास और चिन्ताकुल किनारे, सब हमे हमारे जीवन की निस्सारता बता रहे हैं और किसी महान, अविनाशी और आनन्दकारी चीज का अस्तित्व सिद्ध कर रहे हैं। अच्छा हो कि हर चीज भुला दी जाये, मर जाया जाये और एक यादगार बन जाया जाये! अतीत ओछा है, रागहीन है, भविष्य तुच्छ है और यह अनुपम, फिर कभी न आने वाली रात शीघ्र समाप्त हो जायेगी और अनादि-अनन्त का अंग बन जायेगी। क्यो, तो फिर जिन्दा क्यो रहें?

ओल्गा इवानोव्ना बारी-बारी से र्‌याबोवस्की की आवाज और रात की खामोशी सुन रही थी और अपने आपसे कह रही थी कि वह अमर है और वह कभी नही मरेगी। फिरोजी जल, जैसा कि उसने पहले कभी नहीं देखा था, आकाश, नदी के किनारे, काली छायाए और अज्ञात आनन्द, जिससे उसकी आत्मा विभोर हो उठी थी, सब चीजें उससे कह रही थी कि एक रोज वह महान कलाकार बनेगी और कही दूर, चांदनी से जगमगाती रात, असीम आकाश के पार सफलता, यश और जनता का प्रेम उसकी प्रतीक्षा में हैं... टकटकी लगाये देर तक अंधकार में घूरते-घूरते उसे लगा कि जैसे भीड़, रोशनी, गभीर संगीत की ध्वनि, वाहवाही की आवाजें, सफेद पोशाक में वह स्वयं और अपने ऊपर चारों ओर से फूलों की वर्षा–यह सब वह देख रही हो। वह यह भी सोच रही थी कि उसके पास रेलिंग पर झुका हुआ व्यक्ति दरअसल महान है, विलक्षण प्रतिभावान है, भाग्य का चहेता है... अभी तक का उसका कार्य आश्चर्यजनक, ताजा, अनोखा है और जब समय के साथ उसकी असाधारण प्रतिभा परिपक्व हो जायेगी, तब उसका कार्य आकर्षक और अत्यन्त उच्च श्रेणी का होगा और उसके चेहरे में, बोलने के ढंग मे और प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण में, इस सबकी झांकी दिखाई पड़ती है। छायाओ, शाम के रंगों, चांदनी की चमक का

का जादू अभिभूत कर लेता है। वह सुन्दर भी है और मौलिक भी, स्वतंत्र, स्वच्छन्द, सांसारिक बंधनहीन उसका जीवन पक्षियों के जीवन के समान है।

"ठंड हो रही है।" ओल्गा इवानोव्ना ने कहा और उसे कंपकंपी आ गयी।

र्याबोवस्की ने अपना कोट उसके शरीर से लपेट दिया और दुख भरे स्वर में बोला—

"मुझे लगता है कि मैं आपके कब्जे में हूं। मैं गुलाम हूं। आप आज इतनी मोहिनी क्यों हैं?"

वह लगातार उसकी ओर टकटकी लगाये देखता रहा। उसकी आंखों में कुछ ऐसी डरावनी चमक थी कि ओल्गा इवानोव्ना को उसकी ओर देखने में डर लग रहा था।

"मैं आपके प्रेम में पागल हूं..." उसके गाल पर सांस छोड़ते हुए वह फुसफुसाया, "आप सिर्फ़ एक शब्द कह दीजिये और मैं जिन्दा नहीं रहूंगा, कला त्याग दूंगा..." बहुत विकल हो कर वह बुदबुदाया।—"मुझे प्यार कीजिये, मुझे प्यार कीजिये..."

"इस तरह से बात मत कीजिये," आंखें बन्द करते हुए ओल्गा इवानोव्ना ने कहा। "यह बहुत बुरा है। और दीमोव का क्या होगा?"

"दीमोव की क्या परवाह? दीमोव क्यों? मुझे दीमोव से क्या लेना-देना है? वोल्गा, चांद, सौंदर्य, मेरा प्यार, मेरा आह्लाद, लेकिन कोई दीमोव नहीं... आह! मैं कुछ नहीं जानता... मुझे अतीत नहीं चाहिए, मुझे केवल एक क्षण दीजिये... एक छोटा सा क्षण!"

ओल्गा इवानोव्ना का दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था। उसने अपने पति के बारे में सोचने की चेष्टा की, लेकिन पूरा अतीत, उसकी शादी, दीमोव, बुधवार की शामें, सब कुछ अब उसे तुच्छ, नगण्य, धुंधला, बेकार और दूर, बहुत दूर लग रहा था... और आख़िरकार दीमोव की क्या परवाह है? दीमोव क्यों? दीमोव से उसे क्या मतलब? क्या वास्तव में ऐसा कोई व्यक्ति था, क्या वह स्वप्न नहीं था?

"उसको जितनी ख़ुशी मिली है, वह उस जैसे मामूली आदमी के

की ओर जाऊंगी, हां, अपने नाश की ओर, सबको चिढ़ाने के लिए... जीवन में हर चीज़ आज़मानी चाहिए। हे ईश्वर, कितना भयानक और कितना मोहक है यह!"

"क्या? क्या?" उसे बाहों से घेरते हुए और आवेश से उसके हाथों को चूमते हुए, जिनसे वह हल्के से उसे दूर हटा रही थी, कलाकार बुदबुदाया। "तुम मुझे प्यार करती हो न? हां? कहो हां! हाय! क्या रात है! कैसी स्वार्गिक रात है!"

"हां, कैसी सुन्दर रात है!" आंसुओं से चमकती हुई उसकी आंखों मे आंखें डाल कर वह फुसफुसायी, फिर फौरन इधर-उधर देख कर उसने उसे बांहों में भर लिया और उसके होंठो को चूम लिया।

"किनेश्मा पहुंच रहे हैं," डेक की दूसरी तरफ से किसी ने कहा। भारी क़दम सुनाई पड़े। यह जलपान गृह के कर्मचारी के गुज़रने की आवाज़ थी।

"सुनो," आनन्द से हंसते और रोते हुए ओल्गा इवानोव्ना ने उसे पुकारा, "हमारे लिए थोड़ी शराब ला दो।"

कलाकार उद्वेग से पीला पड़ गया। वह बेंच पर बैठ गया और ओल्गा इवानोव्ना को प्रशंसा और कृतज्ञता के भाव से देखते हुए उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं, क्लान्त मुस्कराहट से उसने कहा—

"मैं थक गया हूं।"

और उसने अपना सिर रेलिंग पर रख लिया।

५

दूसरी सितम्बर को दिन गर्म था, हवा स्थिर थी पर बादल छाये हुए थे। सवेरे तड़के वोल्गा के ऊपर हल्का कुहासा छाया रहा था और नौ बजे के बाद बूंदें पड़नी शुरू हो गयीं। आसमान साफ़ हो जाने की बिल्कुल ही आशा न रही। चाय पीते हुए र्याबोवस्की ओल्गा इवानोव्ना से कह रहा था कि चित्रकारी सब कलाओं से अधिक कृतघ्न और उबा देने वाली कला है, कि वह कलाकार है ही नहीं, और बेवकूफ़ों को छोड़ कर और किसी को उसकी प्रतिभा में विश्वास नहीं है। अचानक उसने चाकू उठा कर अपने सबसे सफल चित्र को खरोंच डाला। चाय के बाद

वह अन्यमनस्क सा खिड़की के पास बैठा नदी की ओर देखता रहा। वोल्गा चमक नहीं रही थी, वह धुंधली, मद्धिम और ठंडी लग रही। हर चीज़ उदास, सूने पतझड़ के आगमन की ओर इंगित करती सी थी। ऐसा लग रहा था जैसे किनारे की भव्य हरी दरियां, सूर्य की किरणों का हीरों जैसा प्रतिबिम्ब, नीली पारदर्शी दूरी और समस्त सुन्दर प्रकृति ने वोल्गा से छीन कर अगले वसन्त तक सन्दूक में बन्द कर दिया हो। और नदी के ऊपर कौए उसे चिढ़ाते हुए उड़ रहे थे—"नंगी! नंगी!" र्‍याबोवस्की उनकी कांव-कांव सुनते हुए सोच रहा था कि मैं जो कर सकता था, वह कर चुका हूं, अब और कुछ करने की प्रतिभा नहीं है कि इस संसार में सब कुछ आपेक्षिक और मूर्खतापूर्ण है, कि मुझे इस औरत के चक्कर में नहीं आना चाहिए था... मतलब यह कि वह व्यथित और उदास बैठा था।

ओल्गा इवानोव्ना पर्दे की ओट में खाट पर बैठी अपने सुन्दर सुनहरे बालों में उंगलियां फिरा रही थी और कल्पना में देख रही थी कि वह अपने दीवानख़ाने, सोने के कमरे, अपने पति के अध्ययन-कक्ष में है; उसकी कल्पना ने उसे थियेटर, दर्ज़िन और अपने नामी मित्रों के पास पहुंचा दिया। वे इस समय क्या कर रहे होंगे? क्या उन लोगों को कभी उसकी भी याद आयी होगी? सीज़न तो शुरू हो गया था और उसे अपनी बुधवार की शामों के बारे में सोचना था। और दीमोव? प्यारा दीमोव! कितनी नम्रता, बच्चों जैसी सरलता और शिकायत के स्वर में वह अपने पत्रों में उससे घर लौट आने की लगातार प्रार्थना किये जा रहा था! हर महीने वह उसको पचहत्तर रूबल भेजता था और जब उसने लिखा कि मैंने कलाकारों से सौ रूबल उधार लिये हैं, तो उसने सौ रूबल और भेज दिये थे। कितना अच्छा, उदार पुरुष है वह! यात्रा ने ओल्गा इवानोव्ना को थका दिया था, वह ऊब गयी थी, वह बेचैन थी कि किसानों के बीच से, नदी से उठने वाली नमी की इस गंध से किसी प्रकार बच कर भाग जाये, और उस शारीरिक गन्दगी की भावना को झाड़ कर फेंक दे, जो वह किसानों की झोंपड़ियों में रहते, गांव-गांव फिरते हुए हर समय अनुभव करती थी। यदि र्‍याबोवस्की ने कलाकारों को बीस सितम्बर तक साथ रहने का वचन न दे दिया होता, तो वे दोनों आज ही चले जाते। कितनी बढ़िया बात होती ...!

"हे भगवान!" र्‍याबोवस्की ने ठंडी सांस भरते हुए कहा, "यह सूरज पता नहीं कब निकलेगा! मैं सूरज की रोशनी से दमकते प्राकृतिक दृश्य का चित्र कैसे बनाता जाऊं, जब खुद सूरज का ही पता न हो!"

"तुम्हारे पास एक चित्र है, जिसमें आकाश पर बादल छाये हैं," श्रोल्गा इवानोव्ना ने श्रोट के बाहर निकलते हुए कहा, "क्या तुम्हें याद नहीं? उसमें सामने ही दाहिनी श्रोर एक जंगल है और गायों श्रौर बत्तखों का झुंड बाईं श्रोर है। तुम उसे पूरा कर डालो अब!"

"भगवान के लिए!" कलाकार ने मुंह बनाते हुए कहा, "पूरा कर डालो! क्या आप सचमुच मुझे इतना मूर्ख समझती हैं कि मैं अपना बुरा-भला नहीं जानता?"

"तुम मेरे लिए कितने बदल गये हो!" श्रोल्गा इवानोव्ना ने सांस भरते हुए कहा।

"यह भी अच्छा हुआ।"

श्रोल्गा इवानोव्ना का मुंह फड़कने लगा, वह जल्दी से अलावघर के पास पहुंच गयी और वहीं रोने लगी।

"और अब ये आंसू भी! बस, अब बन्द कीजिये। मेरे पास भी रोने के हज़ार कारण मौजूद हैं, पर मैं तो नहीं रोता।"

"हज़ार कारण!" श्रोल्गा इवानोव्ना ने सिसकी लेते हुए कहा, "सब से बड़ा कारण तो यह है कि आप मुझसे ऊब गये। हां!" और उसकी सिसकियां और भी बढ़ गयीं। "असली बात यह है कि आप हमारे प्रेम पर लज्जित हैं। आप डरते हैं कि कलाकारों को कहीं पता न चल जाये यद्यपि यह बात कहीं छिपाये नहीं छिपती है और वे लोग तो सब कुछ जानते हैं।"

"श्रोल्गा, मेरी आपसे एक ही प्रार्थना है," कलाकार ने अनुनय-विनय के स्वर में, अपनी छाती पर हाथ रखते हुए कहा, "केवल एक ही बात–मुझे परेशान मत कीजिये। मैं आपसे बस, यही चाहता हूं!"

"तो क़सम खाइये कि आपको मुझसे अब भी प्रेम है!"

"यह तो बड़ी मुसीबत है!" कलाकार ने दांत भींच कर कहा और एकदम से उठ खड़ा हुआ। "इसका परिणाम यही होगा कि मैं या तो वोल्गा में कूद पड़ूंगा या पागल हो जाऊंगा। मैं कहता हूं मेरी जान छोड़िये!"

"मुझे मार डालिये, हां, हां, मुझ मार डालिये!" ओल्गा इवानोव्ना चिल्लायी, "मुझे मार डालिये!"

वह फिर फूट-फूट कर रोने लगी और पर्दे के पीछे चली गयी। झोंपड़ी की फूस की छत पर वर्षा की बूंदें खड़खड़ाने लगीं। र्‍याबोवस्की अपना सिर पकड़े कमरे में कुछ देर तक एक कोने से दूसरे कोने तक चक्कर काटता रहा और तब उसके मुंह पर दृढ़ निश्चय का भाव झलक पड़ा मानो वह किसी से बहस में कोई बड़ा तर्क दे रहा हो, उसने टोपी पहनी, बन्दूक कन्धे पर डाली और झोंपड़ी से बाहर चला गया।

उसके जाने के पश्चात ओल्गा इवानोव्ना बड़ी देर तक रोती हुई खाट पर पड़ी रही। पहले उसने सोचा कि अच्छा हो कि वह जहर खा कर सो रहे और जब र्‍याबोवस्की लौटे, तो वह मरी पड़ी हो। परन्तु क्षण भर में ही उसके विचार अपने दीवानखाने, अपने पति के अध्ययन-कक्ष तक पहुंच गये और उसने कल्पना की कि वह चुपचाप दीमोव के पास बैठी शान्ति और स्वच्छता की भावनाओं का आनन्द ले रही है और फिर थियेटर में बैठी इतालवी गायक माज़ीनी का गायन सुन रही है। और सभ्यता, नगर के कोलाहल, नामी व्यक्तियों के लिए तड़प से उसके हृदय में टीस उठी। गांव की एक औरत झोंपड़ी में आयी और भोजन की तैयारी के लिए धीरे-धीरे चूल्हे की आंच तेज़ करने लगी। लकड़ी जलने की गन्ध फैली और हवा धुएं से नीली हो गयी। कलाकार अपने कीचड़ में सने भारी बूट चढ़ाये हुए आये। उनके मुंह वर्षा से भीगे हुए थे। वे चित्रों को देख रहे थे और अपने मन को यह कह कर बहला रहे थे कि वोल्गा बुरे मौसम में भी आकर्षक होती है। दीवाल पर टंगी सस्ती घड़ी की लटकन टिक-टिक कर रही थी... सर्द मक्खियां कोने में देव मूर्तियों के पास भीड़ लगाये भनभना रही थीं और बेंचों के नीचे उभरी हुई फ़ाइलों के अन्दर तिलचट्टे रेंग रहे थे...

र्‍याबोवस्की सूर्यास्त के समय झोंपड़ी में लौटा। उसने अपनी टोपी मेज पर पटकी और थकावट से चूर, पीला पड़ा, कीचड़ भरे बूट पहने-पहने ही बेंच पर धम से गिर पड़ा और अपनी आंखें बन्द कर लीं।

"मैं थक गया हूं..." उसने कहा, पलकें ऊपर उठाने के प्रयत्न में उसकी भौंहें फड़क रही थीं।

ओल्गा इवानोव्ना उसे दुलारने और यह दिखलाने की आतुरता में

कि वह उससे सचमुच क्रुद्ध नहीं है उसके पास पहुंच गयी, चुपचाप उसका चुम्बन लिया और उसके घटसली बालों में कंघी फेरी। उसके जी में आया कि उसके बालों में कंघी करे।

"क्या है?" उसने चौंकते हुए कहा मानो कोई चिपचिपी वस्तु उसे छू गयी हो। और अपनी आंखें खोलते हुए बोला—"यह क्या है? मुझे चैन से रहने दीजिये।"

उसने उसको अपने पास से हटा दिया और स्वय हट गया और ओल्गा इवानोव्ना को लगा कि उसके मुह से घृणा और क्रोध की भावना टपक रही है। ठीक उसी समय वह देहाती औरत र्‌याबोवस्की के लिए बदगोभी के शोरबे की प्लेट दोनों हाथों में सभाले हुए आयी और ओल्गा इवानोव्ना ने देखा कि उसके मोटे अंगूठे शोरबे में हैं। पेट के ऊपर साया कसे हुए यह गन्दी औरत यह शोरवा, जिस पर र्‌याबोवस्की टूट पडा, यह झोपडी, यह जीवन, जो शुरू में अपनी सरलता और कलात्मक बेढंगेपन के कारण इतना आनन्ददायक प्रतीत होता था, अब उसे भयकर असह्य लगने लगा। एकाएक उसने अपने को अपमानित महसूस किया, उसने रुखाई से कहा—

"हमें कुछ समय के लिए जुदा होना होगा, नही तो ऊब और खीज में हम लड़ बैठेंगे। उकता गयी हूं मैं। आज ही मैं चली जाऊंगी।"

"कैसे? झाड़ू पर चढ़ कर?"

"आज वृहस्पतिवार है और स्टीमर साढ़े नौ बजे आयेगा।"

"अच्छा? तो ठीक ही है... फिर चली ही जाओ," र्‌याबोवस्की ने नैपकिन न होने पर तौलिये से ओठ पोंछते हुए हल्के से कहा, "तुम्हारा मन यहां नहीं लगता और मैं इतना स्वार्थी नहीं हू कि तुम्हे रोके रखने का प्रयास करु। जाओ, हम फिर बीसवीं तारीख़ के बाद मिलेंगे।"

ओल्गा इवानोव्ना के मन का बोझ उतर गया और वह अपना सामान बाधने लगी। उसका मुह सन्तोष से दमक उठा। "क्या यह सचमुच सभव है?" उसने अपने मन से प्रश्न किया—"मैं शीघ्र ही अपने दीवानख़ाने में बैठ कर चित्र बनाऊंगी, अपने सोने के कमरे मे सोऊंगी और कपड़ा बिछे हुए मेज पर भोजन करूंगी?" उसके कन्धों से एक बोझ सा उतर गया था और वह कलाकार से रुष्ट नहीं थी।

"मैं अपने रंग और कूचियां तुम्हारे लिए छोड़ जाऊंगी, र्‌याबूशा," उसने कहा, "यदि कुछ बच जाये, तो तुम उन्हें साथ लेते आना...

अच्छा देखो जब मैं न रहूं, तब तुम आलसी न बन जाना, मन उदास न कर बैठ रहना, काम करना। तुम तो बड़े होशियार हो, र्याबूशा।"

नौ बजे र्याबोवस्की ने विदाई का चुम्बन किया ओल्गा इवानोव्ना के ख्याल में इसलिए कि उसे स्टीमर पर कलाकारों के सामने चुम्बन न करना पड़े। फिर वह उसको घाट तक पहुंचाने गया। स्टीमर शीघ्र ही आया और उसे ले कर चल पड़ा।

ढाई दिन में वह घर पहुंच गयी। अपना हैट और बरसाती उतारे बिना, घबराहट से हांफते हुए वह दीवानखाने में घुस गयी और वहां से खाने के कमरे में। दीमोव कमीज पहने, वास्कट के बटन खोले मेज पर बैठा कांटे से छुरी तेज कर रहा था। उसके सामने प्लेट में भुनी हुई मुर्गाबी रखी हुई थी। ओल्गा इवानोव्ना घर में यह निश्चय करके आयी थी कि उसे सारी बात अपने पति से छिपाये रखनी चाहिए और उसका विश्वास था कि ऐसा करने की योग्यता और शक्ति उसमें है भी। परन्तु अपने पति की खुली, नम्र, प्रसन्न मुस्कान और उसकी आंखों में चमकते हुए सुख को देख कर उसे ऐसा लगा कि ऐसे मनुष्य को धोखा देना उसके लिए उतना ही नीचतापूर्ण, घृणित और असंभव होगा जितना कि कलंक लगा कर बदनाम करना, चोरी अथवा हत्या करना। उसने उसी क्षण निश्चय किया कि जो कुछ बीती है, पूरी कह सुनाये। पति को चुम्बन करने और गले मिलने का अवसर प्रदान करके, वह उसके सामने घुटने टेक कर बैठ गयी और अपना मुंह दोनों हाथों से ढांप लिया।

"यह क्या? अरे यह क्या?" उसने स्नेहपूर्वक पूछा, "क्या बहुत उदास हो गयी हो?"

उसने अपना मुंह उठाया, जो शर्म से लाल हो उठा था, और अपराधी की भांति विनती भरी दृष्टि अपने पति पर डाली, परन्तु शर्म और डर ने उसको सच बात बताने से रोक दिया।

"कुछ भी नहीं..." उसने कहा, "मैं तो यों ही..."

"अच्छा, आओ बैठें," उसने पत्नी को उठा कर कुर्सी पर बैठाते हुए कहा, "सब ठीक है... थोड़ी सी मुर्गाबी लो। तुम्हें भूख लगी है, मेरी जान।"

वह उत्सुकतापूर्वक अपने परिचित वातावरण में सांस ले रही थी, मुर्गाबी खा रही थी और दीमोव स्नेहपूर्वक उसे देख रहा था और आनन्द से हंस रहा था।

जाड़ा सम्भवतः ग्राधा बीत चुका था जब दीमोव को सन्देह होने लगा कि उसे धोखा दिया जा रहा है। वह ग्रब ग्रपनी पत्नी से ग्रांखें नहीं मिला सकता था मानो स्वयं उसकी ग्रन्तरात्मा दूषित हो गयी हो। ग्रब वह उससे मिलता तो प्रसन्नता से मुस्कराता भी नहीं था, ग्रौर उसके साथ एकान्त में जितना कम हो सके रहने के लिए वह छोटे कद के, कटे बालों ग्रौर मुरझाये से चेहरे वाले ग्रपने एक मित्र कोरोस्तेल्योव को बराबर ग्रपने साथ भोजन के लिए लाने लगा। यह मित्र ग्रोल्गा इवानोव्ना के सम्बोधित करते ही घबराहट में ग्रपने कोट के बटन खोलने ग्रौर बन्द करने लगता ग्रौर फिर दाहिने हाथ से ग्रपनी बाईं मूंछ नोचने पर उतर ग्राता। भोजन के समय डाक्टर बात किया करते कि उदर वितान बहुत ऊंचा हो तो कभी-कभी दिल धड़कने का दौरा पड़ता है, या इधर तन्त्रिका रोग ग्रधिक फैलने लगे है, या यह कि कल दीमोव ने ग्रनीमिया से मरे एक रोगी की शव-परीक्षा की, तो पित्तकोश में कैंसर का पता चला। ऐसा लगता था कि वे इस प्रकार की डाक्टरी बातचीत केवल इसलिए करते रहते थे कि ग्रोल्गा इवानोव्ना को खामोश रहने ग्रर्थात झूठ न बोलने का ग्रवसर मिले। खाना खाने के बाद कोरोस्तेल्योव पियानो पर बैठ जाता ग्रौर दीमोव ठंडी सांस भर कर पुकारता –

"छोड़ो, यार, यह सब। कोई विषाद भरी धुन सुनाग्रो।"

कन्धे ऊंचे उठाये ग्रपनी उंगलियां फैला कर कोरोस्तेल्योव एक-दो सुर बजाता ग्रौर ऊंचे स्वर में गाने लगता – "दिखा दो जगह मुझ को, जहां रूसी किसान पीड़ा से नहीं कराहता"* ग्रौर दीमोव एक ग्रौर ठंडी सांस ले कर ग्रपना सिर ग्रपनी बन्द हथेली पर टिका लेता ग्रौर विचारों में डूब जाता।

ग्रोल्गा इवानोव्ना ग्रब ग्रत्यन्त ग्रसावधानी से रहने लगी थी। वह रोज प्रातः उठती, तो उसका चित्त ग्रधिक से ग्रधिक बिगड़ा होता। उस

---

*कवि निकोलाई नेक्रासोव (१८२१-१८७८) की एक प्रसिद्ध कविता पर बना गीत, जो जनवादी विचारों वाले रूसी बुद्धिजीवियों में लोकप्रिय था।

समय उसका निश्चय होता कि अब वह र्‌याबोवस्की से प्रेम नहीं करती और खुदा का शुक्र है कि दोनों के बीच सम्बन्ध का अन्त हो गया है। परन्तु एक प्याला कहवा पीने के बाद वह अपने को याद दिलाती कि र्‌याबोवस्की ने उसके पति को उससे छीन लिया है और अब वह बिना पति और बिना र्‌याबोवस्की के रह गयी है; फिर उसे याद आता कि उसके मित्र किसी अद्‌भुत चित्र की बात कर रहे थे, जिसे र्‌याबोवस्की प्रदर्शनी के लिए तैयार कर रहा था, जो चित्रकार पोलेनोव की शैली में प्राकृतिक दृश्य और दैनंदिन जीवन के चित्र का सम्मिश्रण सा था और जिस किसी ने भी वह देखा था वह उसकी प्रशंसा कर रहा था। और ओल्गा इवानोव्ना के मन मे विचार आता कि उसने यह चित्र मेरे ही प्रभाव में बनाया है और मेरे ही प्रभाव में उसने हर तरह से तरक्की की है; मेरा प्रभाव इतना लाभप्रद, इतना महत्वपूर्ण रहा है कि यदि मैं उसे छोड़ दूं, तो वह धूल में मिल जायेगा। उसे यह भी याद आता कि जब वह पिछली बार उसके यहां आया था, तो उसने कोई स्लेटी कोट पहन रखा था, जिसमें चांदी के धागे बिने थे और टाई नयी थी, और उसने बड़े भावभीने स्वर में पूछा था, "मैं सुन्दर हूं?" वास्तव में वह अपने लम्बे घुंघराले बालों और नीली आंखों के कारण बहुत सुन्दर था (या कम से कम ऐसा लग रहा था) और वह उससे प्यार से बातें कर रहा था।

यह सब और इसी प्रकार की और बाते याद करके स्वयं परिणाम निकालती हुई वह जल्दी-जल्दी कपड़े पहनती और बड़ी बेचैनी लिये र्‌याबोवस्की के स्टूडियो पहुंच जाती। वह उसे प्रायः प्रसन्नचित्त और अपने चित्र पर विमुग्ध पाती, जो वास्तव में अत्यन्त सुन्दर था। वह तरंग में होता, हंसी-ठट्ठे की बातें करता और गंभीर प्रश्नो को हंसी में टाल देता। ओल्गा इवानोव्ना को चित्र से ईर्ष्या और घृणा थी, परन्तु वह सदैव ही पांच मिनट तक उसके सामने शिष्ट मौन में खड़ी रहती, और तब जिस प्रकार लोग देव प्रतिमा के सामने ठंडी सास भरते हैं, भर कर कहती—

"हां तुमने ऐसी चीज अब तक नहीं बनायी। तुम जानते हो, मुझे तो उससे डर लगता है।"

तब वह उससे प्रेम करते रहने के लिए प्रार्थना करती और विनती करती कि उसे ठुकरा न दे और उस दुखियारी पर दया करे। वह रोती, उसके हाथ चूमती, उससे प्रेम का आश्वासन मांगती और यह बतलाती

कि उसके बिना वह भटक कर खो जायेगा। तब उसका मिज़ाज बिगाड कर और अपने आपको अपमानित महसूस करते हुए वह दर्जिन या एक जान-पहचान की अभिनेत्री के यहा नाटक के टिकट का इतजाम करने चली जाती।

जिस दिन वह स्टूडियो मे न मिलता, वह उसके लिए एक परचा छोड़ जाती कि तुम आज ही न आये तो जहर खा कर मर जाऊगी। डर के मारे वह मिलने जाता और भोजन के लिए रुका रहता। उसके पति के उपस्थित होते हुए भी उसे कोई लाज न आती और वह उसके लिए अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करता, और वह भी उसका उत्तर उन्ही शब्दो मे देती। दोनो समझते थे कि उनके सबंध उनके लिए बोझ सा हैं, कि दोनो अत्याचारी और शत्रु हैं। इससे उन्हे और भी क्रोध आता था और क्रोध मे उन्हें इस बात का ध्यान भी नही रहता था कि उनका व्यवहार कितना अभद्र है। यहां तक कि कटे बालो वाला कोरोस्तेल्योव भी सब कुछ समझ जाता था। भोजन के बाद र्याबोवस्की जल्दी से विदा हो कर चल देता।

"कहां जा रहे हैं?" ओल्गा इवानोव्ना ड्योढी मे घृणा की दृष्टि से देखती हुई उससे पूछती।

त्योरिया चढाते हुए आखें आधी बन्द करके वह किसी ऐसी महिला का नाम ले लेता, जिसे वे दोनो जानते थे। स्पष्ट होता कि वह उसकी ईर्ष्या की हसी उड़ाना और उसे चिढाना चाहता है। वह अपने सोने के कमरे मे जा कर लेट जाती। ईर्ष्या, क्रोध, अपमान और लज्जा के कारण वह तकिया दात से चबाती और ज़ोर-ज़ोर से सिसकिया भरने लगती। तब दीमोव कोरोस्तेल्योव को दीवानखाने ही मे छोड, सोने के कमरे मे जाता और कुछ झेंपते, कुछ घबराते हुए धीमे स्वर मे कहता—

"इतने ज़ोर से मत रोओ... रोना किसके लिए? तुम्हे तो चुप रहना चाहिए ... लोगों को इसका पता क्यो देती हो... जो हो गया उसे सुधारना असम्भव है।"

अपनी ईर्ष्या दबा न पाने पर, जिससे कि उसकी कनपटिया तक फड़कने लगती थी और अपने मन को यह समझाते हुए कि अभी भी गुत्थी को सुलझाया जा सकता है, वह उठ पड़ती, मुह-हाथ धोती, अपने आसू भरे मुख पर पाउडर थोपती और जिस महिला का नाम र्याबोवस्की ने

बनाया होता, उसी के घर की ओर भाग पड़ती। रयाबोव्स्की को वहाँ न पा कर वह दूसरी महिला के यहाँ, फिर तीसरी के यहाँ भागती ... पहले पहल तो उसे यों भाग-दौड़ करने पर लज्जा आती थी। परन्तु शीघ्र ही वह इसकी आदी हो गयी। कभी-कभी वह एक ही शाम को रयाबोव्स्की की खोज में अपनी जान-पहचान की सभी स्त्रियों के घर हो आती और वे सभी उसके उद्देश्य को समझती थीं।

एक बार उसने रयाबोव्स्की से अपने पति के विषय में कहा–

"मैं उसकी महान उदारता के बोझ से दबी जा रही हूं।"

यह वाक्य उसे इतना प्रिय लगा कि जब कभी उसकी भेंट उन कलाकारों में से किसी से होती, जो रयाबोव्स्की से उसके सम्बन्ध का रहस्य जानते थे, वह हर बार अपने हाथ से प्रबल संकेत करते हुए अपने पति के बारे में कहती–

"मैं उसकी महान उदारता के बोझ से दबी जा रही हूं।"

उनके जीवन का ढर्रा पिछले वर्ष की भांति ही चलता रहा। बुधवार की शामों को दावतें होतीं। अभिनेता संवाद सुनाता, कलाकार चित्र बनाते, वादक वायलिन बजाता, गायक गीत गाता और ठीक साढ़े ग्यारह बजे खाने के कमरे का द्वार खुल जाता और दीमोव मुसकराते हुए कहता–

"आइये, जनाब, कुछ खाना-पीना हो जाये।"

ओल्गा इवानोव्ना सदैव की भांति ही नामी लोगों की खोजती रहती, उनका पता लगाती और तब भी उसे सन्तोष नहीं होता और वह दूसरों की खोज में लग जाती। सदैव की भांति ही वह रोज रात को देर से घर लौटती, पर जब वह आती, तो उसे दीमोव कभी भी सोता हुआ न मिलता जैसा कि पिछले साल हुआ करता था। वह अपने अध्ययन-कक्ष में बैठा काम कर रहा होता। वह तीन बजे सोने जाता और आठ बजे उठ जाता था।

एक दिन संध्या समय, जब वह थियेटर जाने से पहले शीशे के सामने खड़ी हुई थी, दीमोव लम्बा कोट पहने और सफ़ेद टाई लगाये सोने के कमरे में आ गया। वह बड़े दीन भाव से मुसकराया और पहले की भांति उसने ख़ुशी से पत्नी की आंखों में आंखें डाल दीं। उसका चेहरा चमक रहा था।

"मैंने अभी-अभी अपना थीसिस प्रस्तुत किया है," उसने बैठ कर घुटनों पर हाथ फेरते हुए कहा।

"सफलता मिली?" ओल्गा इवानोव्ना ने पूछा।

"हां, हुई तो!" वह हंसा और अपनी गर्दन ऊंची उठा ली ताकि वह अपनी पत्नी का मुंह शीशे मे देख सके, क्योंकि वह अभी भी उसकी ओर पीठ किये खड़ी हुई अपने बालो को ठीक कर रही थी। "हां, हुई तो!" उसने फिर कहा, "इसकी भी बड़ी संभावना है कि मुझे जनरल पैथोलोजी का रीडर बना दिया जायेगा। रंग-ढंग तो ऐसा ही है।"

उसके प्रसन्न मुंह और प्रफुल्लित भाव से स्पष्ट था कि यदि ओल्गा इवानोव्ना उसके आनन्द और विजयोल्लास मे सम्मिलित हो जाती, तो वह उसे सब कुछ क्षमा कर देता, भूत और भविष्य दोनो ही और सब कुछ भुला देता। परन्तु वह यह नही समझती थी कि रीडर क्या होता है और जनरल पैथोलोजी क्या है। साथ ही उसे डर था कि कही थियेटर पहुचने में देर न हो जाये, इसलिए उसने कुछ भी नही कहा।

वह कुछ मिनट तक वहा बैठा रहा और फिर इस प्रकार मुसकराते हुए मानो क्षमा माग रहा हो, उठ कर चल दिया।

७

वह बड़ी ही बेचैनी का दिन था।

दोमोव के सिर मे भयकर पीड़ा थी। उसने सुबह चाय नही पी और न अस्पताल गया, बल्कि सारे दिन अपने अध्ययन-कक्ष मे कोच पर पड़ा रहा। ओल्गा इवानोव्ना सदैव की भाति ही बारह बजे के बाद र्याबोवस्की के पास चली गयी—उसे अपना बनाया हुआ स्कैच दिखाने और यह पूछने कि वह कल उसके यहा क्यों नही आया। वह जानती थी कि उसका स्कैच बहुत घटिया है और उसने वह केवल इसीलिए बनाया है कि जा कर कलाकार से भेंट करने का बहाना मिल जाये।

वह घन्टी बजाये बिना भीतर चली गयी और जिस समय वह ड्योढ़ी मे अपने ऊपरवाले रबर के जूते उतार रही थी, तो उसे स्टूडियो मे पाव की दबी-दबी आहट सुनायी दी, साथ ही औरत के कपड़ो की सरसराहट भी। जब उसने जल्दी से भीतर ताका, तो उसे तेजी से छिपते एक भूरी स्कर्ट की झलक दिखायी पड़ी, जो एक क्षण के लिए चमक कर एक बड़े चित्र के पीछे लुप्त हो गयी, जिस पर फर्श तक एक काला कपड़ा पड़ा

हुआ था। इसमें कोई सन्देह नहीं था कि कोई औरत उसके पीछे छि
हुई है। कितनी बार स्वयं ओल्गा इवानोव्ना इस पर्दे के पीछे छिपी थी
स्पष्ट था कि र्‌याबोवस्की सकपका गया था; उसने अपने दोनों हाथ उस
ओर फैला दिये मानो उसके आने पर उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा है
उसने बनावटी मुस्कराहट से कहा—

"आ ... आ ... हा! खुशी हुई आपको देख कर... कहिये क
ख़बर है?"

ओल्गा इवानोव्ना की आंखों में आंसू डबडबा आये। उसे शर्म और
कटुता का अनुभव हुआ और चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाये, व
अपनी बात उस दूसरी स्त्री के सामने नहीं कह सकती थी, जो उसकी
प्रतिद्वन्द्वी थी, वह धोखेबाज़, जो इस समय पर्दे के पीछे खड़ी थी और
शायद उस पर हंस रही थी।

"मैं आपको अपना स्कैच दिखलाना चाहती थी," उसने ऊंचे सहमे
स्वर में कहा और उसके ओठ कांपने लगे।

"आ... आ... हा, स्कैच?.."

कलाकार ने चित्र अपने हाथों में ले लिया और उस पर आंखें गड़ाते
मानो अन्यमनस्कता से दूसरे कमरे में चला गया। ओल्गा इवानोव्ना उसके
पीछे-पीछे चली गयी।

"चित्र, जोड़ नहीं अन्यत्र," वह यंत्रवत तुक मिलाते हुए बड़बड़ाने
लगा, "अन्यत्र, चित्र-विचित्र, यत्र-तत्र, पुत्र-कलत्र..."

स्टूडियो में जल्दी-जल्दी पग उठाने की चाप और कपड़ों की सरसराहट
सुनायी पड़ी। इसका अर्थ यह था कि "वह"जा चुकी है। ओल्गा इवा-
नोव्ना के मन में एकदम से यह इच्छा हुई कि ज़ोर से चिल्लाये, कलाकार
के सिर पर कोई भारी चीज़ दे मारे और भाग जाये, परन्तु उसे आंसुओं
ने अंधा और अपमान ने दलित बना दिया था, और उसे ऐसा लग रहा
था मानो अब वह कलाकार और ओल्गा इवानोव्ना नहीं रही, बल्कि
कोई तुच्छ जीव बन कर रह गयी है।

"मैं थक गया हूं..." कलाकार ने चित्र को देखते हुए और अपने
सिर को झटका दे कर अपनी थकावट का बोझ उतार फेंकने का प्रयत्न
करते हुए मुरझाये स्वर में कहा, "यह अच्छा तो है, परन्तु आज भी
स्कैच बनाया, पिछले साल भी स्कैच बनाया था, एक महीने बाद भी

स्कैच ही होगा... क्या आपका मन इससे ऊबता नहीं? आपके स्थान पर मैं होता, तो चित्र-कला छोड़ कर संगीत या ऐसे ही किसी कार्य को गंभीरता से पकड़ता। आप तो कलाकार नहीं हैं, आप संगीतकार हैं। परन्तु सच मानिये मैं बहुत थक गया हूं! मैं कुछ चाय मंगवाता हूं, मंगवाऊं?"

वह कमरे से बाहर चला गया और ओल्गा इवानोव्ना ने उसको अपने नौकर से कुछ कहते सुना। विदाई के झगड़े से बचने और विशेषकर अपने को रो पड़ने से बचाने के लिए जब तक र्‌याबोवस्की वापस आये, वह ड्योढ़ी में भाग आयी, अपने रबर के जूते पहने और बाहर निकल पड़ी। गली में बाहर पहुंचते ही उसने स्वतंत्रता से सांस ली और उसके मन को यह अनुभव हुआ कि उसने र्‌याबोवस्की को, कला को और उस असह्य अपमान की भावना को, जो उसे स्टूडियो में सहना पड़ा था, एक झटके में सदैव के लिए झाड़ कर फेंक दिया है। यह अध्याय समाप्त!

वह अपनी दर्जिन के यहां गयी, फिर जर्मन अभिनेता बरनाई के पास, जो कल ही आया था, वहां से स्वरलिपियों की एक दुकान पर। सारे समय वह सोचती रही कि कैसे र्‌याबोवस्की को एक निष्ठुर, कठोर, मर्यादापूर्ण पत्र लिखेगी और फिर वह वसन्त या गर्मी में दीमोव के साथ क्रीमिया चली जायेगी ताकि वहां अपने बीते काल को सदैव के लिए उतार फेंके, और फिर नया जीवन आरम्भ करेगी।

वह घर बहुत देर से पहुंची, कपड़ा बदले बिना वह सीधे दीवानखाने में पत्र लिखने बैठ गयी। र्‌याबोवस्की ने उससे कहा था कि तुम कलाकार नहीं हो, और अब बदले में वह उसे बतायेगी कि वह हर साल एक जैसे ही चित्र लगातार बनाता रहा है और एक ही बात को लगातार हर रोज़ कहता रहा है, कि वह अब चुक गया है और वह जो कुछ बन सकता था, बन चुका है और उससे अधिक कुछ नहीं बन सकता। वह यह भी जोड़ देना चाहती थी कि उसके अच्छे प्रभाव का ऋण उस र्‌याबोवस्की पर सदा हुआ है और अब जो उसका व्यवहार बिगड़ गया है, उसका कारण यही है कि उसके प्रभाव को हर प्रकार के संदिग्ध चरित्रों ने, जिनमें से एक ने चित्र के पीछे आज मुंह छिपाया था, चौपट कर दिया है।

"सुनो!" दीमोव ने अपने अध्ययन-कक्ष से दरवाज़ा खोले बिना ही आवाज़ लगायी।

"कहो, क्या चाहिए?"

"मेरे पास मत आना, बस दरवाजे पर आ जाओ। बात यह है... एक-दो दिन पहले मुझे अस्पताल में डिप्थीरिया लग गया है और अब... मेरा जी बहुत खराब है। जरा जल्दी से कोरोस्तेल्योव को बुलवा दो।"

ओल्गा इवानोव्ना अपने पति को सदैव दीमोव कह कर कुलनाम से पुकारती थी, जैसा कि वह अपने सभी पुरुष मित्रों के साथ करती थी। उसका नाम ओसिप था, यह नाम उसे पसन्द नहीं था। परन्तु इस बार वह चिल्ला उठी—

"नहीं, ओसिप, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता!"

"उसको बुलवा दो। मेरा जी बिगड़ रहा है..." दीमोव ने दरवाजे के भीतर से कहा और ओल्गा इवानोव्ना को सुनायी पड़ा कि वह लौट कर कोच के पास पहुंचा और लेट गया। "उसको बुलवा दो!" उसका खोखला सा स्वर सुनाई दिया।

"क्या सचमुच ऐसा हो सकता है?" ओल्गा इवानोव्ना ने भयभीत हो कर सोचा। "हे भगवान यह तो खतरनाक है!"

बिना किसी आवश्यकता के ही उसने मोमबत्ती उठायी और अपने सोने के कमरे में चली गयी। वह इसी उधेड़बुन में थी कि क्या करे कि उसे अपनी प्रतिछाया शीशे में दिखायी पड़ गयी। ऊंची फूली-फूली आस्तीन का जाकेट, जिसमें आगे पीली झालर लगी हुई थी और आड़ी-आड़ी धारियों वाला स्कर्ट पहने पीले, भयभीत चेहरे की उसकी आकृति उसे स्वयं डरावनी तथा घृणित लगी। उसके मन के भीतर दीमोव के लिए, अपने प्रति उसके अगाध प्रेम, उसके तरुण जीवन, यहां तक कि उसके सूने पलंग के लिए, जिसपर वह एक लम्बे समय से नहीं सोया था, करुणा का एक महासागर उमड़ पड़ा और उसकी नम्र, चिरस्थायी आज्ञाकारी मुस्कान की उसको याद आ गयी। वह फूट-फूट कर रोने लगी और उसने कोरोस्तेल्योव को एक बड़ा अनुरोधपूर्ण पत्र लिखा। रात के दो बजे थे।

८

ओल्गा इवानोव्ना का सिर नींद न आने से भारी था, उसके बाल उलझे हुए थे, उसके मुंह से अपराधी की सी भावना झलक रही थी, वह असुन्दर लग रही थी, जब प्रात: कोई सात बजे अपने सोने के

कमरे से बाहर निकली। एक काली दाढी वाले सज्जन, जो देखने में डाक्टर लगते थे, उसके पास से ड्योढ़ी की ओर गये। दवाओं की गंध फैली हुई थी। कोरोस्तेल्योव अध्ययन-कक्ष के दरवाज़े पर खड़ा अपनी बाईं मूछ दाहिने हाथ से ऐंठ रहा था।

"क्षमा कीजिये, परन्तु मैं आपको उनके पास नहीं जाने दूंगा," उसने रूखे से स्वर में ओल्गा इवानोव्ना से कहा, "कहीं बीमारी आपको भी न लग जाये। फिर, उसके पास आपका जाना व्यर्थ ही है, उसे तो अब सन्निपात हो गया है।"

"क्या उसे सचमुच डिप्थीरिया है?" ओल्गा इवानोव्ना ने फुसफुसाते हुए पूछा।

"जो कोई भी खामखाह ओखली में सिर देता है, मेरा बस चले, तो उसे जेल भिजवा दूं," कोरोस्तेल्योव उसके प्रश्न का उत्तर दिये बिना ही बड़बड़ाया, "पता है, उसे छूत कैसे लगी? मंगलवार को उसने एक छोटे लड़के के गले में से डिप्थीरिया की झिल्ली पाइप से चूस कर निकाली... क्या जरूरत थी? बस यों ही... मूर्खता... पागलपन..."

"क्या यह बहुत खतरनाक है?" ओल्गा इवानोव्ना ने पूछा।

"हां, कहते तो यही हैं कि बहुत खराब केस है। अब किसी प्रकार श्रेक को बुलवाना है।"

लाल बालों, लम्बी नाक और यहूदियों के लहजे वाला एक छोटा सा आदमी आया और उसके पीछे लम्बा, झुके कंधों और बिखरे बालों वाला व्यक्ति, जो पादरी सा लग रहा था और फिर एक युवा तगड़ा लाल मुंह का व्यक्ति, जो चश्मा लगाये था। वे सभी डाक्टर थे, जो अपने साथी को बारी-बारी देखते रहने और उसकी तीमारदारी के लिए आये थे। कोरोस्तेल्योव अपनी बारी खत्म हो जाने पर भी अपने घर नहीं गया और कमरों में प्रेत की भांति फिरता रहा। नौकरानी डाक्टरों के लिए चाय लाती और बारबार दौड़ कर दवा की दूकान जाती थी, इसलिए कमरों को साफ़ करने वाला कोई नहीं था। चारों ओर सन्नाटा था और उदासी छायी हुई थी।

ओल्गा इवानोव्ना अपने सोने के कमरे में बैठी अपने मन में सोच रही थी कि भगवान उसे अपने पति को धोखा देने के लिए दण्ड दे रहा है। वह मौन, शान्त, गूढ़ व्यक्ति, दयालुता की अधिकता ने जिसे कमज़ोर

कर दिया था, इस समय कोच पर पड़ा मौन ही पीड़ा को सहन कर र
था। यदि वह शिकायत करता या सन्निपात में ही कुछ बड़बड़ाता,
उसकी देखभाल करने वाले डाक्टरों को पता चल जाता कि स्थिति केव
डिफ्थीरिया की तरह हुई नहीं है। वे अगर कोरोस्तेल्योव से पूछते,
जो सब कुछ जानता था और यह अकारण ही नहीं था कि वह अप
मित्र की पत्नी को ऐसी निगाह से देख रहा था, जो यह कहती प्रती
होती थी कि असली दुष्टात्मा वही थी और डिफ्थीरिया तो केवल
उसका सहयोगी मात्र था। वोल्गा की चांदनी रात, प्रेम के आश्वासन,
किसान की झोंपड़ी का काव्यपूर्ण जीवन सब कुछ वह भूल गयी और उसे
केवल एक ही बात याद रही कि वह सिर से पांव तक किसी ग
चिपचिपी वस्तु में पड़ी है और कभी भी धो कर इस गन्दगी को स
नहीं कर सकती और ऐसा घटिया मौज उड़ाने की उसकी थोरी चंचल
के कारण ही हुआ है।

"ओह, मैं कितनी झूठी रही हूं!" उसने दुःखावेश के साथ अ
असान्त प्रेम को याद करते हुए अपने मन से कहा, "भस्म हो जाये य
सब कुछ!"

चार बजे वह कोरोस्तेल्योव के साथ खाने पर बैठी। कोरोस्तेल्योव ने कुछ नहीं खाया, बस लाल शराब पीता और भौंहें सिकोड़ता रहा। उसने भी कुछ नहीं खाया। वह ईश्वर से मौन प्रार्थना करती और मनौती मनाती रही कि दीमोव अच्छा हो जाये, तो मैं उससे फिर प्रेम करूंगी और पतिव्रता स्त्री बन कर रहूंगी। फिर अपने सारे दुःख को क्षण भर के लिए भूल कर वह कोरोस्तेल्योव की ओर देखती और सोचती, "क्या, इस प्रकार का साधारण, गुमनाम, मुरझाये मुंह और अशिष्ट व्यवहार वाला व्यक्ति होना उकताऊ नहीं है?" फिर उसे ऐसा लगता मानो अभी अभी ईश्वर का प्रकोप उसपर आ पड़ेगा क्योंकि छूत लगने के डर से वह अपने पति के अध्ययन-कक्ष में एक बार भी नहीं गयी थी। उसपर संताप की भावना छायी हुई थी और उसे इस विश्वास ने पीड़ित कर रखा था कि उसका जीवन ऐसा नष्ट हो गया है कि अब उसे कभी सुधारा नहीं जा सकता...

भोजन समाप्त होने पर शीघ्र ही अंधेरा हो गया। जब ओल्गा इवा-नोव्ना बैठकखाने में गयी, तो उसे कोरोस्तेल्योव सोफ़े पर सोता मिला।

उसका सिर रपहले धागे से कढ़ी रेशमी गद्दी पर पडा था। "खर्र-खर्र..." वह खर्राटे ले रहा था, "खर्र-खर्र..."

डाक्टर, जो आते और चले जाते थे, वे इस सारी अव्यवस्था पर कोई ध्यान नही देते थे। दीवानखाने मे खर्राटे लेता हुआ कोई बेगाना मनुष्य, दीवालो पर टगे हुए चित्र, अजीबोगरीब सज्जा, घर की मालकिन का उलझे बाल लिये घूमना और उसके अस्तव्यस्त कपडे – अब कोई बात भी किसी का ध्यान आकर्षित नही करती थी। एक डाक्टर किसी बात पर हस पड़ा, परन्तु उसकी हंसी अत्यन्त अजीब लगी और सभी बेचैन से हो गये।

ओल्गा इवानोव्ना जब दूसरी बार दीवानखाने मे गयी, तो कोरोस्तेल्योव आंखें खोले सोफे पर बैठा पाइप पी रहा था।

"उसे नाक का डिप्थीरिया है," उसने दबे स्वर मे कहा। "दिल भी ठीक से काम नही कर रहा। हालत बुरी है।"

"फिर श्रेक को क्यों नही बुलवाते?" ओल्गा इवानोव्ना ने पूछा।

"वह आया था। उसी ने तो देखा कि डिप्थीरिया नाक तक पहुच गया है। अब श्रेक भी क्या है? श्रेक-ब्रेक से कुछ नही होता। वह श्रेक है और मैं कोरोस्तेल्योव हूं और बस।"

समय अत्यन्त कष्टदायक मन्द गति से बीतता रहा। ओल्गा इवानोव्ना पूरे कपड़े पहने अपने बिस्तर पर, जो सवेरे से उलझा पडा था, ऊंघ रही थी। उसे ऐसा लगता था कि पूरा घर फ़र्श से ले कर छत तक लोहे के एक भारी ढेर से भरा हुआ है और लगता था कि बस यह ढेर हटा दिया जाये तो सभी खिल उठेंगे। चौंक कर वह उठी, तो उसने अनुभव किया कि यह लोहे का ढेर नही बल्कि दीमोव की बीमारी है।

"चित्र-मित्र," उसने अपने मन मे कहा और फिर ऊघते हुए– "चित्र... मित्र... विचित्र... और यह श्रेक कौन है? श्रेक... ब्रेक... क्रेक। अरे मेरे सारे मित्र कहा गये? क्या उन्हे पता नही कि हम विपत्ति मे फंसे हैं? हे भगवान, हमें बचाओ, दया करो... श्रेक... ब्रेक..."

फिर वही लोहे का ढेर... समय घिसटता जा रहा था और उसका कोई अन्त नही था, यद्यपि नीचे की मजिल मे घड़ी बराबर घण्टा बजाती लग रही थी। रह-रह कर घण्टी बजती थी, डाक्टर लोग दीमोव के पास आते थे... नौकरानी थाली मे एक खाली गिलास लिये कमरे में आयी।

"आपका बिस्तर ठीक कर दूं, मालकिन?" उसने पूछा।

कोई उत्तर न मिलने पर वह फिर बाहर चली गयी। नीचे घड़ी ने घण्टा बजाया। ओल्गा इवानोव्ना ने स्वप्न में देखा कि वोल्गा पर बर्फ हो रही है। फिर से उसके कमरे में कोई व्यक्ति आया, शायद कोई अपरिचित था। ओल्गा इवानोव्ना खाट पर से उठ खड़ी और उसने कोरोस्तेल्योव को पहचान लिया।

"क्या समय होगा?" उसने पूछा।

"लगभग तीन।"

"वह कैसे हैं?"

"कैसे? मैं तुम्हें बताने आया हूं कि वह मर रहा है..."

उसने सिसकी दबा ली और खाट पर उसके पास बैठ कर आस्तीन से आसू पोंछे। पहले तो वह कुछ समझ ही नहीं पायी, उसे काठ मार गया और फिर धीरे-धीरे वह अपने सीने पर सलीब का चिन्ह बनाने लगी।

"मर रहा है..." कोरोस्तेल्योव ने दुहराया और फिर से सिसकी भरी। "मर रहा है क्योंकि उसने अपने आप को बलिदान कर दिया... विज्ञान की कितनी बड़ी क्षति है यह!" उसने कटुता से कहा। "हम सब की तुलना में वह एक महान मनुष्य, एक अद्भुत मनुष्य था। कैसी प्रतिभा थी उसमें! हम सबको कितनी आशाएं थी उससे!" कोरोस्तेल्योव अपनी उंगलिया मरोड़ते हुए बोलता रहा। "हे भगवान! वह कितना बड़ा वैज्ञानिक होता, कितना महान वैज्ञानिक, जैसा ढूंढे न मिले! ओसिप दीमोव, ओसिप दीमोव! तुमने क्या कर लिया? हे भगवान!"

निराशा में कोरोस्तेल्योव ने अपना मुंह दोनों हाथों से ढांप लिया।

"हाय, कितनी बड़ी नैतिक शक्ति थी उसकी!" वह कहता रहा और किसी पर उसका क्रोध बढ़ता गया, "दयालु, पवित्र, स्नेहमय, निर्मल आत्मा, आदमी नहीं दर्पण था! उसने विज्ञान की सेवा की और विज्ञान ही के लिए प्राण दिये। बैल की तरह दिन-रात काम करता था। किसी ने भी उस पर तरस नहीं खाया और वह, तरुण विद्वान, भविष्य का प्रोफ़ेसर प्राइवेट डाक्टरी और रात-रात बैठ कर अनुवाद करने को विवश हुआ इन सब... चिथड़ों का दाम चुकाने के लिए!"

कोरोस्तेल्योव ने ओल्गा इवानोव्ना की ओर घृणा की दृष्टि से देखा,

चादर को दोनों हाथों से पकड़ा और क्रोध से उसे नोच डाला मानो अपराध उसी चादर का हो।

"उसने भी स्वयं अपने पर तरस नहीं खाया और किसी ने भी उस पर तरस नहीं खाया। पर अब बात करने से क्या लाभ?"

"हां, वह एक अद्भुत मनुष्य था!" दीवानखाने से गहरे स्वर मे सुनायी पड़ा।

श्रोल्गा इवानोव्ना को उसके साथ अपना पूरा जीवन प्रारम्भ से अन्त तक विस्तार से याद हो आया। हर छोटी-बड़ी बात याद हो आयी और एकदम से उसे लगा कि वह सचमुच एक अद्भुत मनुष्य था, उसकी जान-पहचान के सभी लोगों की तुलना मे एक विरला, महान व्यक्ति था। उसे अपने स्वर्गीय पिता और उनके सभी डाक्टर मित्रों का उसके प्रति व्यवहार याद आया और उसे अनुभव हुआ कि सभी उसको भविष्य का एक महान व्यक्ति समझते थे। दीवारे, छत, लैम्प और फर्श की दरी सभी उसको ताना देने लग रहे थे मानो कह रहे हो—"तू चूक गयी, तू चूक गयी!" वह सोने के कमरे से रोती हुई दौड़ी, दीवानखाने मे किसी अपरिचित व्यक्ति के पास से बढ़ी और लपक कर अपने पति के कमरे में पहुंच गयी। वह कोच पर निश्चल पड़ा था और कम्बल से कमर तक उसका शरीर ढका हुआ था। उसका मुंह भयानक ढंग से खिंचा और पतला हो गया था और उसपर ऐसा भूरा पीलापन छा गया था, जो किसी जीवित मनुष्य की त्वचा पर नहीं होता। केवल उसके माथे, उसकी काली भौंहों और उसकी परिचित मुस्कान से पता चलता था कि वह दीमोव है। श्रोल्गा इवानोव्ना ने उसकी छाती, माथे और हाथों को जल्दी-जल्दी छुआ। छाती अभी तक गर्म थी, परन्तु माथा और हाथ अप्रिय ढंग से ठंडे हो चुके थे। और अधमुंदी आंखें श्रोल्गा इवानोव्ना पर नहीं, बल्कि कम्बल पर लगी हुई थी।

"दीमोव!" उसने जोर से पुकारा, "दीमोव!"

वह उसे समझाना चाहती थी कि जो कुछ हुआ, गलत हुआ और अभी सब कुछ नष्ट नहीं हुआ है, जीवन को अभी भी सुन्दर और आनन्दमय बनाया जा सकता है, वह एक असाधारण, अद्भुत, महान व्यक्ति है और वह जीवन भर उसकी पूजा करेगी, उसके आगे शीश नवायेगी और सदैव उसका पवित्र भय मानेगी...

"दीमोव!" उसने उसका कंधा हिलाते हुए पुकारा। उसे विश्
नहीं होता था कि वह अब फिर कभी नहीं उठेगा। "दीमोव, दीमोव!

उधर दीवानखाने में कोरोस्तेल्योव नौकरानी से कह रहा था–

"पूछने की बात ही क्या है? गिरजाघर जाओ और वहीं पूछ ले
कि भिखारिनें कहां रहती हैं। वे शव को नहला देंगी और सब कुछ ठी
कर देंगी, सारा काम कर देंगी।"

१८९२

एक कलाकार की कहानी

१

यह छह या सात साल पहले की बात है, जब मैं 'त' नामक सूबे के एक जिले में बेलोकूरोव नामक एक नौजवान जमींदार की जमींदारी में रहता था। यह व्यक्ति सुबह बहुत जल्दी उठता, किसानों का सा एक कोट पहनता, शाम को बीयर पीता और मुझसे हमेशा इस बात की शिकायत किया करता कि उसे कभी भी किसी से कोई हमदर्दी नहीं मिली है। वह बाग मे बने हुए अपने बंगले मे रहता था और मैं मालिक के पुराने मकान के एक विशाल खम्भों वाले कमरे मे, जहां एक चौड़ा सोफा, जिसपर मैं सोया करता था तथा एक मेज, जिसपर मैं ताश खेला करता था, इनके अलावा और कोई सामान नहीं था। पुरानी अंगीठियो में हमेशा, यहां तक कि जब मौसम बिल्कुल शांत होता तब भी, एक भनभनाहट की सी आवाज आया करती थी। और जब बिजली कड़कती, तो सारा घर हिल उठता था और ऐसा लगता था मानो टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। इससे कुछ डर सा मालूम होता था, खास तौर से रात को जब अचानक बिजली की चमक से मकान की दसों बड़ी खिड़कियां चमक उठती थीं।

नियति से ही आलसी होने के कारण मैं कुछ भी काम नहीं करता था। मैं घण्टों तक बैठा हुआ खिड़की के बाहर आसमान, चिड़ियों, वीथिका आदि की तरफ देखा करता था। डाक द्वारा जो कुछ भी पढ़ने का मसाला मिलता, सब पढ़ता और सोता रहता। कभी-कभी मैं घर से बाहर निकल जाता और शाम गहरी होने तक इधर-उधर घूमता रहता।

एक दिन जब मैं घर लौट रहा था, तो अचानक एक ऐसी जमींदारी की ओर जा निकला, जो मेरे लिए अपरिचित थी। सूरज डूब रहा था और रई के खेतों पर शाम की परछाइयां लम्बी होने लगी थीं। पास पास लगे हुए, पुराने बहुत ऊंचे फ़र के पेड़ों की दो लम्बी, मजबूत दीवालों की तरह खड़ी हुई क़तारें वीथिका को अपूर्व और अवसादपूर्ण बना रही थीं। आसानी से बाड़ को लांघ कर मैं इसी वीथिका पर चलने लगा। चलते समय फर की

गुड़ियों जैसी नलियों पर, जिनकी जमीन पर कोई दो इंच मोटी तह है
मेरे पैर फिसले पड़ते थे। चारों ओर सन्नाटा और कुहरे का नज़ारा
था। केवल कहीं-कहीं ऊंचे पेड़ों की चोटियों पर सुनहली रोशनी कौंध उठ
ती और मकड़ी के जालों में पड़ कर इन्द्रधनुष का सा समां उत्पन्न क
देती थी। एक ताजी, लगभग दम घोंट देने वाली फफूंदी की गन्ध भर गई
थी। उसके बाद मैं लिंडन के पेड़ों वाली एक लम्बी वीथिका पर मुड़ा
यहां भी सब कुछ सुनसान और पुराना था। पिछले साल की गिरी हु
पत्तियां मेरे पैरों के नीचे पड़ कर मानो कराह उठती थीं और साल के
धुंधलके में पेड़ों के बीच सरसराहट सी उठती थी। दायीं तरफ के पुराने
बाग से पीलक पंछी की धीमी सनसनी सी आवाज़ आती। यह पक्षी भी
बूढ़ा ही रहा होगा। परन्तु अंत में लिंडन के पेड़ों की वीथिका समाप्त
हुई। मैं एक पुराने दो मंज़िले सफेद घर के बराबर बना जिसके आगे
एक बरामदा था। वहां अचानक मुझे एक तालाब, एक बड़ा तालाब,
एक स्नान-गृह, हरे पेड़ों का एक झुरमुट, और दूसरे किनारे पर एक
गांव दिखाई दिया। इस गांव के ऊंचे और संकरे गिरजाघर के ऊपर लगा
हुआ सलीब डूबते हुए सूरज की रोशनी में चमक रहा था। एक क्षण के
लिए मुझे ऐसा लगा कि मुझे ऐसा दृश्य दिखाई दे रहा है जो अत्यन्त
प्रिय, मनोरम और चिर-परिचित सा है, मानो मैंने अपने बचपन में कभी
इस दृश्य को देखा हो।

सफ़ेद पत्थर के फाटक पर, जिसमें हो कर अहाते से बाहर खेतों
की ओर जाने का रास्ता था, दो लड़कियां खड़ी हुई थीं। इस फाटक के
पुराने ढंग के ठोस खम्भों पर शेरों की मूर्तियां थीं। उन लड़कियों में से
एक, जो बड़ी थी, दुबली-पतली, गोरे रंग की अत्यन्त सुन्दर लड़की थी।
उसके भूरे बाल घने तथा मुंह छोटा और ज़िद्दी सा था। उसके मुख पर
एक कठोर भाव झलक रहा था। उसने मेरी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया।
दूसरी लड़की भी, जो अभी छोटी थी, अधिक से अधिक सत्रह या अठारह
साल की, दुबली-पतली और गोरी थी। उसका मुंह चौड़ा और आंखें
बड़ी थीं। जैसे ही मैं बगल से होकर गुज़रा, उसने ताज्जुब से मेरी तरफ
देखा, अंग्रेज़ी में कुछ कहा और सकुचा गयी। मुझे ऐसा लगा कि इन
दोनों सुन्दर मुखड़ों से भी मैं बहुत दिनों से परिचित हूं। और मैं
यह अनुभव करता हुआ घर लौटा जैसे मैंने कोई सुन्दर सपना देखा हो।

इस घटना के कुछ ही समय बाद, जब मैं और बेलोकूरोव दोपहर को घर के पास टहल रहे थे, अचानक एक गाड़ी घास के ऊपर सरसर करती हुई अहाते के भीतर आयी। उसमें उन्हीं लड़कियों में से एक लड़की बैठी हुई थी। यह बड़ी लड़की थी। वह कुछ किसानों के लिए चन्दा मांगने आयी थी, जिनकी झोंपड़ियां जल गयी थीं। अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक और विशद रूप में, बिना हमारी तरफ़ देखे हुए, उसने बताया कि सियानोवो गांव में कितने घर जल गये हैं, कितने आदमी, औरतें और बच्चे बेघर हो गये हैं तथा यह कि सहायक-समिति ने, जिसकी वह सदस्या थी, शुरू में क्या कुछ करने का फ़ैसला किया है। हमारे दस्तखतों के लिए चन्दे की लिस्ट हमारी तरफ बढ़ा कर उसने वापस ले ली और फौरन विदा होने लगी।

"आप हमें बिल्कुल ही भूल गये प्योत्र पेत्रोविच," उसने बेलोकूरोव से हाथ मिलाते हुए कहा। "कभी अवश्य आइये और अगर महाशय 'न' (उसने मेरा नाम लिया) अपनी कला के प्रशंसकों से परिचय प्राप्त करने के इच्छुक हों और आ कर हम लोगों से मुलाकात करना चाहें, तो मां को और मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

मैंने सिर झुकाया।

जब वह चली गयी, तो प्योत्र पेत्रोविच मुझे उसके बारे में बताने लगा। उसने बताया कि वह लड़की एक अच्छे खानदान की है तथा उसका नाम लीदिया वोल्चानीनोवा है और वह जमींदारी, जहां वह अपनी मां और बहन के साथ रहती है, तालाब के दूसरे किनारे के गांव की तरह शेल्कोव्का कहलाती है। कभी उसका पिता मास्को में एक उच्च पदाधिकारी था और इसी पद पर रहते हुए मरा था। हालांकि वे काफी धनवान थीं, परन्तु गर्मी और जाड़े भर वहीं दूसरी जगह न जा कर वहीं, अपनी जमींदारी में ही रहती थीं। लीदिया अपने ही गांव के ज़ेम्स्त्वो* स्कूल में अध्यापिका थी। उसे पच्चीस रूबल मासिक वेतन मिलता था। अपने

*ज़ेम्स्त्वो – सन् १८६४ के राजनीतिक सुधारों के बाद रूस के प्रत्येक जिले को आर्थिक क्षेत्र में सीमित स्वशासन अधिकार दिये गये। इस दृष्टि से जो प्रशासन संस्थाएं चुनी गयीं, उनको "ज़ेम्स्त्वो" कहते थे। इनके सदस्य प्रायः बड़े जमींदार-जागीरदार होते थे।

वेतन में प्रतिदिन वह अपने ऊपर एक भी पैसा खर्च नहीं करती थी उसे इस बात का गर्व था कि वह अपनी जीविका स्वयं चलाती थी।

"बड़ा मजेदार परिवार है," बेलोकूरोव बोला, "चलिये, एक रोज उनके यहां चलें। वे आपको देख कर बहुत खुश होंगी।"

एक छुट्टी वाले दिन दोपहर को हमें वोल्चानीनोव परिवार का ध्यान आया और हम लोग उनसे मिलने शेल्कोव्का पहुंचे। वे लोग—मां और दोनों बेटियां—घर पर थीं। मां, जिसका नाम येकातेरीना पाव्लोव्ना था, किसी समय सुन्दर रही होगी, परन्तु अब दमे की बीमारी, विषण्णता व अन्यमनस्कता की शिकार थी और अवस्था से अधिक मोटी हो चुकी थी। उसने चित्रकला के बारे में बातें करके मेरा मनोरंजन करने का प्रयत्न किया। अपनी बेटी से यह सुन कर कि मैं शेल्कोव्का आ सकता हूं उसने जल्दी से मेरे बनाये हुए प्राकृतिक दृश्यों के दो या तीन चित्रों की याद ताजी कर ली थी, जो उसने कभी मास्को में हुई नुमायश में देखे थे और अब मुझसे पूछने लगी कि मैं उन चित्रों में अपने क्या विचार व्यक्त करना चाहता था? लीदिया मेरे बनिस्बत बेलोकूरोव से ज्यादा बातें कर रही थी। गम्भीर हो कर और बिना मुस्कराये उसने उससे पूछा कि वह जेम्स्त्वो में काम क्यों नहीं करता और वह इस संस्था की एक भी बैठक में उपस्थित क्यों नहीं हुआ।

"यह ठीक नहीं, प्योत्र पेत्रोविच," उसने उसे उलाहना देते हुए कहा, "यह ठीक नहीं है, यह बहुत बुरी बात है।"

"सच है, लीदिया, सच है," मां ने स्वर में स्वर मिलाया, "यह ठीक नहीं है।"

"हमारा पूरा जिला बालागिन के हाथ में है," लीदिया मेरी तरफ मुखातिब हो कर कहने लगी, "वह जेम्स्त्वो बोर्ड का चेयरमैन है और उसने जिले के सभी पदों को अपने भतीजों और दामादों में बांट रखा है और वह जो चाहता है सो करता है। उसका विरोध होना ही चाहिए। नौजवानों को एक मजबूत पार्टी बनानी चाहिए, लेकिन आप देख रहे हैं कि हम लोगों के नौजवान कैसे हैं। यह शर्म की बात है, प्योत्र पेत्रोविच!"

जब वे लोग जेम्स्त्वो की बातें कर रहे थे, छोटी बहन जेन्या खामोश ' उसने गम्भीर वार्तालाप में कोई भाग नहीं लिया। उसके घरवाले ... बच्ची ही समझते थे और बच्चों की तरह ही वह अपने घरेलू

नाम मिमूस से पुकारी जाती थी, क्योंकि जब वह छोटी सी बच्ची थी तब अपनी अंग्रेज मास्टरनी को मिस के बजाय इसी नाम से पुकारा करती थी। वह सारा समय जिज्ञासापूर्वक मेरी तरफ ताकती रही और जब मैं एल्बम मे लगे हुए चित्र देखने लगा तो वह मुझे बताने लगी– "यह चाचा हैं... यह धर्म पिता हैं"। यह सब बताते हुए वह चित्रों पर उंगली फेरती जा रही थी और उस समय बच्चे की तरह वह मेरे कंधे से अपना कंधा सटाये थी। और मैं उसके कोमल, उभार रहित वक्ष, उसके सुन्दर कन्धों, उसकी चोटी और पटके से अच्छी तरह कसी हुई पतली सी देह को नजदीक से देख रहा था।

हम लोगों ने टेनिस खेला, बाग़ मे घूमे, चाय पी और फिर देर तक बैठे शाम का खाना खाते रहे। अपने उस विशाल खम्भों वाले खाली कमरे की अपेक्षा मुझे यह छोटा सा सुखदायी मकान अधिक अच्छा लगा, जिसकी दीवालों पर चित्रों की सस्ती नकलें नहीं थी और जहां नौकरों को "आप" कहा जाता था। मुझे यहां की प्रत्येक वस्तु मे नवीनता और ताजगी दिखाई दी। इसके लिए लीदिया और मिमूस धन्यवाद की पात्र थी। वहां की हरेक चीज से सुरुचि प्रकट होती थी। खाना खाते समय लीदिया फिर बेलोकूरोव से जेमस्त्वो के बारे मे बातें करने लगी। साथ ही उसने बालागिन और स्कूली पुस्तकालयों की भी चर्चा की। लीदिया एक उत्साही और सच्ची लड़की थी, जिसके अपने सिद्धान्त थे और उसकी बातें सुनने मे बड़ी अच्छी लगती थी हालांकि वह बहुत ज्यादा और कुछ ऊंची आवाज में बोलती थी–शायद इस वजह से कि वह स्कूल मे इस तरह बोलने की आदी हो गयी थी। दूसरी तरफ़ प्योत्र पेत्रोविच, जिसने अपने विद्यार्थी जीवन से ही किसी भी बातचीत को वाद-विवाद की तरफ मोड़ देने की आदत डाल रखी थी, बड़े उलझे हुए ढंग से क्लिष्ट और लम्बी-चौड़ी भूमिका बांध कर निश्चित रूप से अपने को चतुर और प्रगतिशील विचारों वाला सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहा था। बातचीत करने में हाथ हिलाते हुए उसने चटनी की प्याली लुढ़का दी जिससे मेजपोश पर चटनी बिखर गयी, परन्तु लगता था जैसे मेरे सिवा और किसी का भी इस तरफ़ ध्यान नहीं गया।

जब हम घर की तरफ चले तो चारों तरफ़ अन्धकार और शांति का साम्राज्य था।

ौर स्कूलों के बारे में ऊंची आवाज में बातें किया करती थी। यह दुबली, ुन्दर, कठोर लड़की, जिसका मुख छोटा, परन्तु सुडौल था, हमेशा ब कभी गम्भीर विषयों पर बातें छिड़ती तो रूखेपन के साथ मुझसे कहती—
"ये आपके मतलब की बातें नहीं हैं।"

वह मुझे पसन्द नहीं करती थी। मैं उसे इसलिए नापसन्द था, क्योंकि मैं प्राकृतिक दृश्यों के चित्र बनाने वाला चित्रकार था और अपने चित्रों में किसानों के दुखों का चित्रण नहीं करता था और इसलिए कि, उसके विचार में, मैं उन बातों की तरफ से उदासीन था, जिसमें उसकी गम्भीर आस्था थी। मुझे याद है, जब मैं बाइकाल झील के किनारे यात्रा कर रहा था, मेरी मुलाकात बुर्यात जाति की एक लड़की से हुई थी जो घोड़े पर सवार थी और चीनी कपड़े की नीली कमीज और सलवार पहने हुई थी। मैंने उससे पूछा था कि क्या वह अपना पाइप मुझे बेचेगी। जब हम लोग बात कर रहे थे, तो वह मेरे यूरोपियन चेहरे और टोप की तरफ नफ़रत से देख रही थी और क्षण भर में ही मुझसे बात करने में ऊब उठी। उसने अपने घोड़े को चाबुक मारा और उसे दौड़ाती हुई चली गयी। बिल्कुल उसी तरह लीदिया भी मुझे भिन्न विचारों का समझने के कारण मुझसे नफरत करती थी। उसने बाहरी तौर पर मेरे प्रति अपनी अरुचि को कभी भी प्रकट नहीं होने दिया था, पर मैं इसका अनुभव करता था। बरामदे की सबसे नीची सीढ़ी पर बैठा हुआ मैं चिड़चिड़ा उठता और कहता कि जब कोई स्वयं डाक्टर नहीं है, तो किसानों का इलाज करना उन्हें धोखा देना है और यह कि अगर पास में पांच हजार एकड़ जमीन हो, तो कोई भी आसानी से उदार और दानी बन सकता है।

दूसरी तरफ उसकी बहन मिसूस निर्द्वन्द्व थी। वह भी मेरी ही तरह अपना समय आरामतलबी में बिताया करती थी। जब वह सुबह सो कर उठती, तो फ़ौरन एक किताब उठा लेती और बरामदे में पड़ी हुई एक गहरी आराम-कुर्सी पर बैठ कर पढ़ने लगती। उसके पैर जमीन से कुछ ऊपर उठे रहते। या वह अपनी किताब ले कर लिंडन के कुंजों में जा छिपती या बाहर खेतों की तरफ निकल जाती। वह अपना पूरा दिन भूखे की तरह किताब पर ध्यान लगाये हुए काट देती। बस कभी-कभी जब उसकी आंखें थकी हुई और धुंधली लगतीं तथा उसका चेहरा अत्यधिक पीला पड़ जाता, तब यह अनुमान लगाया जा सकता था कि वह निरन्तर

पढ़ाई उसके दिमाग को कितना थका डालती है। जब मैं आता, तो वह झट सकुचाती, अपनी किताब बन्द कर देती और अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से मेरे चेहरे की तरफ़ देखती हुई जो कुछ भी घटना घटी होती वह उत्साहपूर्वक सुनाती, मिसाल के तौर पर, यह कि नौकरों के बड़े कमरे की चिमनी में कभी कालिख जल उठी, या यह कि एक आदमी ने तालाब से बहुत बड़ी मछली पकड़ी थी आदि। साधारण दिनों में वह आम तौर से एक हल्का ब्लाउज़ और एक गहरा नीला स्कर्ट पहनती। हम दोनों साथ-साथ घूमने जाते। मुरब्बा बनाने के लिए पेड़ों से चेरी तोड़ते, नाव पर घूमते। जब वह किसी फल को तोड़ने के लिए उछलती या नाव की डांड़ चलाती तो उसकी पतली और दुबली बाहें कमीज़ की पारदर्शक आस्तीनों में से दिखाई देने लगतीं। या मैं कोई चित्र बनाता और वह मेरे पास खड़ी हुई मुग्ध हो कर उसे देखती रहती।

जुलाई के अन्त में एक इतवार को मैं सुबह नौ बजे के लगभग वोल्चानीनोव परिवार के यहां आया। मैं सफ़ेद खुंबियों की तलाश में घर से काफ़ी दूर रहते हुए बाग़ में घूम रहा था। इन गर्मियों में सफ़ेद खुंबियां बहुत पैदा हुई थीं। मैं उन्हें ढूंढता फिर रहा था और उन जगहों पर निशान लगा रहा था, जहां मुझे खुंबियां मिली थीं ताकि बाद में जेन्या के साथ आ कर उन्हें बटोर सकूं। हवा में गर्मी थी। मैंने जेन्या और उसकी मां को छुट्टियों के दिन वाली हल्की पोशाकें पहने गिरजे से घर लौटते हुए देखा। जेन्या अपनी टोपी को हवा में उड़ने से बचा रही थी। उसके बाद बरामदे में चाय पीने की आवाज़ें मुझे सुनाई देने लगीं।

मुझ जैसे लापरवाह आदमी के लिए, जो अपनी सदा ही आरामतलबी के लिए सन्तोषजनक कारण ढूंढने की कोशिश करता रहता है, गर्मियों में हमारे ज़मींदारों के मकानों में छुट्टियों के दिनों की सुबह एक विशेष आकर्षण रखती है। जब हरियाली से परिपूर्ण उद्यान, जिसमें अभी ओस की नमी छायी रहती है, सूरज की रोशनी में चमकता और प्रसन्नता से जगमगाता है, घर के पास उगे हुए मिनजेनेट और करवीर के फूलों की सुगन्ध से वातावरण महकता है, जब नौजवान गिरजे से वापस लौट बाग़ में बैं[illegible] । करते होते हैं, उनकी पोशाकें सुन्दर और आकर्षक [illegible] पता होता है कि ये सब स्वस्थ, सन्तुष्ट और सुन्दर [illegible] कुछ भी काम नहीं करेंगे, तो यह इच्छा होती है कि

हमारा सम्पूर्ण जीवन इसी तरह व्यतीत होता। इस समय मेरे मन मे भी यही विचार उठ रहे थे, मैं बाग मे घूम रहा था और पूरे दिन, गर्मियों भर इसी तरह निरुद्देश्य और बेकार घूमते रहने को तैयार था।

जेन्या एक डलिया लिये बाहर आयी। उसके चेहरे पर एक ऐसा भाव था मानो वह जानती थी कि मैं उसे बाग मे मिलूगा या उसे इस बात का पूर्वाभास था। हम खुबियां बटोर रहे थे और बाते कर रहे थे और जब वह कोई सवाल पूछती, तो मेरा चेहरा देखने के लिए कुछ कदम आगे बढ आती।

"कल गाव मे एक चमत्कार हो गया," उसने कहा। "वह लगडी औरत पेलागेया साल भर से बीमार थी। किसी भी डाक्टर या दवाई से उसे कोई फायदा नही हुआ था। परन्तु कल एक बुढिया आयी और उसने उसके ऊपर कुछ मन्त्र सा पढा और वह ठीक हो गयी।"

"यह कोई बड़ी बात नही है," मैं बोला। "सिर्फ बीमार आदमियों और बुढियों मे ही चमत्कार नही ढूढना चाहिए। क्या तन्दुरुस्ती चमत्कार नही है? और क्या जिन्दगी स्वय चमत्कार नही है? जो कुछ भी हमारी समझ से परे है, वह चमत्कार है।"

"और क्या आप उनसे भयभीत नही होते, जो हमारी समझ से परे है?"

"नही! समझ मे न आने वाली घटनाओं का सामना मैं बहादुरी से कर सकता हूं और मैं उनसे प्रभावित भी नही होता। मैं उन सबसे ऊपर हू। मनुष्य को चाहिए कि वह अपने को शेर, चीते, तारे तथा प्रकृति की सब वस्तुओं से श्रेष्ठ समझे तथा उन चीजों से भी जो चमत्कारपूर्ण दिखाई देती हैं तथा उसकी समझ से परे हैं। अगर वह ऐसा नही समझता तो वह मनुष्य नही है, बल्कि एक चूहा है, जो प्रत्येक वस्तु से डरता रहता है।"

जेन्या को विश्वास था कि कलाकार होने के नाते मुझे बहुत कुछ मालूम है और जो बात मैं नही जानता उसके विषय मे ठीक अनुमान लगा सकता हू। वह मुझसे इस बात की अपेक्षा करती थी कि मैं उसका प्रवेश इस चिरंतन और सौंदर्य के साम्राज्य मे करा दू, उस उच्च लोक मे जहा, जैसा कि उसका अनुमान था, मैं उन्मुक्त हो कर विचरण करता हू। वह मुझसे ईश्वर, शाश्वत जीवन और उस चमत्कार के विषय मे बाते करती।

धीर थी, जो इस बात को मानने के लिए कभी भी तैयार नहीं था कि स्वयं मैं तथा मेरी कल्पना मृत्यु के पश्चात नष्ट हो जायेगी, कहता— "हां, मनुष्य अमर है", "हां, हमारे लिये शाश्वत जीवन सुरक्षित है।" वह सुनती, विश्वास करती और प्रमाण नहीं मांगती।

हम गांव पार की तरफ जा रहे थे। अचानक वह रुक गयी और बोली—

"हमारी मीशिया विलक्षण है, है न? मैं उसे बहुत प्यार करती हूं और उसके लिए किसी भी क्षण अपने प्राण देने के लिए तैयार हो जाऊंगी। परन्तु यह बताइये"—जेन्या ने अपनी उंगलियों से मेरी बांह छूते हुए पूछा, "यह बताइये, आप उससे हमेशा बहस क्यों करते रहते हैं? आप चिड़चिड़ा क्यों उठते हैं?"

"क्योंकि वह गलती पर है।"

जेन्या ने सिर हिलाया और उसकी आंखों में आंसू भर आये।

"यह सब बिल्कुल समझ से बाहर है!" उसने कहा।

उसी समय लीदिया कहीं से लौट कर आयी थी। सुन्दर, छरहरी, देहलता वाली वह युवती बरामदे की सीढ़ियों पर धूप में खड़ी थी, हाथ में चाबुक पकड़े एक आदमी को कुछ हुक्म दे रही थी। जोर से बोलते हुए उसने जल्दी से दो-तीन बीमार गांव वालों को निबटाया, फिर चेहरे पर व्यस्तता और परेशानी के भाव लिये वह कमरों में घूमती फिरी, एक के बाद दूसरी अनेक आलमारियां खोलीं और ऊपर चली गयी। बहुत देर में उसके घर वाले उसे ढूंढ़ने में सफल हो सके और उसे खाने के लिये बुला पाये। वह खाने की मेज पर उस समय आयी, जब हम लोग शोरबा खत्म कर चुके थे। इन सब छोटी-छोटी बातों की याद मुझे मधुर लगती है और उस पूरे दिन की बातें मुझे विस्तारपूर्वक याद हैं यद्यपि उस दिन कोई खास बात नहीं हुई थी। भोजन के बाद जेन्या एक गहरी आराम-कुर्सी पर लेट कर पढ़ने लगी। मैं बरामदे की सबसे निचली सीढ़ी पर बैठ गया। हम लोग खामोश थे। बादल घिर आये और धीरे-धीरे पानी पड़ने लगा। मौसम गर्म था, हवा बन्द हो गयी थी और ऐसा लगता था कि यह दिन कभी खत्म ही नहीं होगा। येकातेरीना पाव्लोव्ना बाहर बरामदे में आयी। उसकी आंखें अभी तक नींद से बोझिल थीं। उसके हाथ में पंखा था।

"ओह, मां," जेन्या ने उसका हाथ चूमते हुए कहा, "तुम्हारे लिए दिन में सोना अच्छा नहीं है।"

वे दोनों एक दूसरे को बहुत प्यार करती थीं। जब एक बाग मे जाती, तो दूसरी बरामदे मे खड़ी हो जाती और पेड़ो की तरफ देख कर पुकारती, "आ-ओ, जेन्या!" या "मां तुम कहा हो?" वे हमेशा एक साथ प्रार्थना करती थीं। दोनों के विश्वास एक से थे। और जब वे आपस में बातें नहीं करती होती थीं तब भी एक दूसरे के मन की बात को पूरी तरह समझ जाती थीं। लोगों के बारे मे उनकी धारणा भी एक सी थी। येकातेरीना पाव्लोव्ना भी शीघ्र ही मुझसे हिलमिल गयी और मुझे प्यार करने लगी और जब मैं दो-तीन दिन तक उनके यहां नहीं जा पाता, तो तुरन्त किसी को भेज कर मेरा कुशल-क्षेम पुछवा लेती। वह भी मेरे चित्रों को उत्साहपूर्वक देखती थी। मिसूस की ही तरह उसी तत्परता और स्पष्टता से वह मुझे सब बाते बता देती और अपने पारिवारिक रहस्य भी पूर्ण विश्वास के साथ मुझे बता देती।

उसके हृदय मे अपनी बड़ी लडकी के प्रति पूर्ण श्रद्धा थी। लीदिया स्नेह की बातें पसन्द नहीं करती थी। वह सिर्फ गम्भीर विषयो पर ही बातें करती थी। वह अपना जीवन बिल्कुल भिन्न प्रकार से बिताती थी और अपनी मां और बहन के लिए उसका व्यक्तित्व इतना पवित्र और रहस्यपूर्ण था, जितना कि जलसेना के प्रधान एडमिरल का मल्लाहों के लिए होता है, जो हमेशा अपने केबिन मे बैठा रहता है।

"हमारी लीदिया विलक्षण है," मां कभी-कभी कह उठती, "है न?"

अब भी, जब पानी धीरे-धीरे बरस रहा था, हम लोग लीदिया की बाते कर रहे थे।

"वह एक विलक्षण लड़की है," उसकी मा ने कहा और फिर आगे षड्यन्त्रकारियों की तरह धीमी आवाज में पीछे देख सहम कर बोली— "ऐसी लड़किया ढूढे नहीं मिलती। सिर्फ एक बात से मैं जरा परेशान हो उठी हूं। स्कूल, अस्पताल, किताबें—यह सब तो बिल्कुल ठीक है, परन्तु अति नहीं करनी चाहिए। वह तेईस वर्ष की हो चुकी है। अब उसे अपने विषय में भी गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए। अपनी किताबो और अस्पतालो मे खोये हुए पता भी नहीं चलेगा कि कब जीवन हाथ से निकल गया ...उसे शादी कर लेनी चाहिए।"

जेन्या ने, जो ज्यादा पढ़ने से पीली पड़ गयी थी तथा जिसके बाल बिखर रहे थे, अपना सिर ऊपर उठाया और अपनी माँ की तरह देखते हुए इस तरह कहा मानो अपने आपसे कह रही हो—

"माँ सब काम भगवान की मर्जी से होते हैं।"

और फिर वह अपनी किताब में खो गयी।

बेलोकूरोव अपना किसान का कोट और कढ़ी हुई कमीज पहने था। हम लोग टेनिस खेलते रहे। उसके बाद जब अंधेरा होने लगा तो बहुत देर तक भोजन पर बैठे रहे। फिर लीदिया स्कूल, बालागिन आदि के बारे में बातें करती रही, कि बालागिन ने पूरे जिले को अपने अंगूठे तले दबा रखा है। जब उस शाम को मैं वोल्चानीनोव परिवार को छोड़ कर वापस लौटा तो मुझे हृदय में इस लम्बे, आरामतलबी में कटे हुए दिन का एक ऐसा अवसादमय अनुभव हो रहा था कि इस दुनिया में हरेक चीज का अन्त अवश्य होता है चाहे वह कितनी ही बड़ी क्यों न हो। जेन्या हमें बाहर फाटक तक छोड़ने आयी और शायद इस कारण से कि वह इस पूरे दिन, सुबह से ले कर शाम तक मेरे साथ रही थी मुझे उसके बिना सूना-सूना सा लगने लगा और यह कि वह सुन्दर परिवार मेरे बहुत नजदीक आ चुका था और उन गर्मियों में पहली बार मेरे मन में चित्र बनाने की इच्छा ज़ोर मारने लगी।

"यह बताइये कि आप इस तरह की रूखी नीरस जिन्दगी क्यों बिता रहे हैं?" घर लौटते हुए मैंने बेलोकूरोव से पूछा। "मेरी जिंदगी नीरस और कठोर इसलिए है क्योंकि मैं एक कलाकार हूं, एक विचित्र व्यक्ति। अपने जीवन के प्रारम्भ से ही मैं द्वेषी, स्वयं से असन्तुष्ट और अपने कार्य के प्रति सदिग्ध रहा हूं। मैं हमेशा ग़रीब रहा हूं। साथ ही एक घुमक्कड़ की जिन्दगी बिताता हूं, परन्तु आप—आप तो एक स्वस्थ, सामान्य ज़मींदार और सज्जन व्यक्ति हैं। आप इस तरह की नीरस जिन्दगी क्यों बिताते हैं? आप जीवन के प्रति इतने उदासीन क्यों हैं? यही बताइये कि आप लीदिया या जेन्या से प्रेम क्यों नहीं करते?"

"आप भूल गये कि मैं एक दूसरी औरत को प्यार करता हूं।" बेलोकूरोव ने जवाब दिया।

वह ल्युबोव इवानोव्ना के बारे में कह रहा था, जो उसके साथ ही मकान में रहती थी। मैं हर रोज इस औरत को देखता था, जो बहुत

भारी, गोल-मटोल और अकड़बाज थी तथा हमेशा अपने साथ छाता लिये, राष्ट्रीय रूसी पोशाक और माला पहने, एक मोटी बतख की तरह बाग में घूमा करती थी और नौकर लगातार उसे खाना खाने या चाय पीने के लिए पुकारा करता था। तीन साल पहले उसने गर्मियों की छुट्टियां बिताने के लिए यहा एक बंगला लिया था और अब हमेशा के लिए बेलोकूरोव के बंगले मे रहने लगी थी। वह उससे दस साल बडी थी और उसपर बड़ा कठोर शासन करती थी। यहा तक कि जब वह घर से बाहर जाता उसे उस औरत से इजाजत लेनी पडती थी। कभी-कभी वह मर्दो जैसी गहरी सिसकियां जोर-जोर से भरा करती थी और तब मुझे उससे यह कहलाना पड़ता कि अगर वह बन्द नही करेगी, तो मुझे ये कमरे छोड़ देने पड़ेंगे और वह चुप हो जाती।

जब हम घर पहुंचे, तो बेलोकूरोव सोफे पर बैठ गया और मुह फुलाये सोचने लगा। मैं कमरे में इधर से उधर चहलकदमी करने लगा। मेरे हृदय में एक कोमल भावना उत्पन्न हो रही थी मानो मैं किसी से प्रेम करने लगा होऊं। मैं वोल्चानीनोव परिवार के बारे मे बाते करना चाह रहा था।

"लीदिया तो जेम्स्तवो के ही किसी सदस्य को प्रेम कर सकती है, जो उसी की तरह स्कूलों और अस्पतालो में रुचि रखता हो," मैंने कहा। "ओह, उस तरह की लड़की की खातिर किसी के लिए जेम्स्तवो मे भाग लेना तो साधारण सी बात है, बल्कि कोई भी उसके लिए लोहे के जूते घिस डालना भी मंजूर कर लेगा जैसा कि परियों की कहानी मे कहा जाता है। और मिसूस? कितनी प्यारी है मिसूस!"

बेलोकूरोव ने ए-ए-ए की आवाज करते हुए उस युग की व्याधि—निराशावाद के विषय में लेक्चर देने के लिए एक लम्बी-चौडी भूमिका बांधनी शुरू की। वह आत्म-विश्वासपूर्वक इस तरह बाते करता था कि मानो मैं उससे बहस कर रहा होऊ। सैकड़ो मीलों तक फैला हुआ निर्जन, थका देने वाला, जला हुआ स्तेपी का मैदान भी किसी मे इतनी ऊब नही पैदा कर सकता जितना कि वह आदमी, जो बैठा बातें करता है और जिसके बारे मे इस बात का पता नहीं रहता कि वह कब उठ कर जायेगा।

"यह निराशावाद और आशावाद का प्रश्न नहीं," मैंने चिड़चिड़ाते

हुए कहा, "यह एक साधारण सी बात है कि सौ में से निनानवे मर्दों में बुद्धि नहीं होती।"

बेलोकूरोव ने समझा कि यह तीर उसपर छोड़ा गया है और वह मान कर चला गया।

३

"प्रिंस मालोज्योमोवो में ठहरे हैं और उन्होंने तुम्हें सलाम कहला है," लीदिया ने अपनी मां से कहा। वह अभी-अभी भीतर आयी थी और अपने दस्ताने उतार रही थी। "उन्होंने मुझे बहुत सी नयी खबरें सुनायीं... उन्होंने वायदा किया है कि वह मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-केन्द्र खोलने के प्रश्न को सूबे की सभा में फिर उठायेंगे। परन्तु उनका कहना है कि सफलता की बहुत कम आशा है।" और मेरी तरफ़ मुड़ कर उसने कहा—"माफ़ कीजिये, मैं हमेशा भूल जाती हूं कि इन बातों में आपकी रुचि नहीं है।"

मुझे बुरा लगा।

"मेरी रुचि क्यों नहीं है?" कन्धे बिचकाते हुए मैंने पूछा। "आप मेरी राय जानने की परवाह नहीं करती, परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस समस्या में मेरी गहरी रुचि है।"

"सच?"

"जी हां! मेरी राय में मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-केन्द्र बिल्कुल व्यर्थ है।"

मेरी चिड़चिड़ाहट का उसपर प्रभाव पड़ा। उसने आंखें सिकोड़ते हुए मेरी तरफ़ देखा और पूछा—

"तो फिर क्या ज़रूरी है? प्राकृतिक दृश्य?"

"प्राकृतिक दृश्य भी नहीं। वहां कुछ भी ज़रूरी नहीं है।"

उसने दस्ताने उतारना समाप्त कर अभी डाक से आया अखबार खोला। एक मिनट बाद उसने शान्तिपूर्वक कहा—उसकी ध्वनि से स्पष्ट हो रहा था कि वह अपने को संयत करके बोल रही है—

"पिछले हफ्ते आन्ना प्रसव में मर गयी। अगर यहीं पास में ही कोई डाक्टरी-सहायता-केन्द्र होता तो वह बच जाती। और मैं सोचती हूं कि

हुए कहा, "यह एक साधारण सी बात है कि सौ में से निन्नानवे आदमियों में बुद्धि नहीं होती।"

बेलोफ़ूरोव ने समझा कि यह तीर उसपर छोड़ा गया है और वह बुरा मान कर चला गया।

३

"प्रिंस मालोज्योमोवो में ठहरे हैं और उन्होंने तुम्हें सलाम कहलाया है," लीदिया ने अपनी मां से कहा। वह अभी-अभी भीतर आयी थी और अपने दस्ताने उतार रही थी। "उन्होंने मुझे बहुत सी नयी खबरें सुनायीं... उन्होंने वायदा किया है कि वह मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-केन्द्र खोलने के प्रश्न को सूबे की सभा में फिर उठायेंगे। परन्तु उनका कहना है कि सफलता की बहुत कम आशा है।" और मेरी तरफ मुड़ कर उसने कहा—"माफ कीजिये, मैं हमेशा भूल जाती हूं कि इन बातों में आपकी रुचि नहीं है।"

मुझे बुरा लगा।

"मेरी रुचि क्यों नहीं है?" कन्धे बिचकाते हुए मैंने पूछा। "आप मेरी राय जानने की परवाह नहीं करतीं, परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस समस्या में मेरी गहरी रुचि है।"

"सच?"

"जी हां! मेरी राय में मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-केन्द्र बिल्कुल व्यर्थ है।"

मेरी चिड़चिड़ाहट का उसपर प्रभाव पड़ा। उसने आंखें सिकोड़ते हुए मेरी तरफ़ देखा और पूछा—

"तो फिर क्या जरूरी है? प्राकृतिक दृश्य?"

"प्राकृतिक दृश्य भी नहीं। यहां कुछ भी जरूरी नहीं है।"

उसने दस्ताने उतारना समाप्त कर अभी डाक से आया अखबार

मिनट बाद उसने शान्तिपूर्वक कहा—उसकी ध्वनि से स्पष्ट

कि वह अपने को संयत करके बोल रही है—

...हफ़्ते आन्ना प्रसव में मर गयी। अगर यहां पास में ही कोई

... होता तो वह बच जाती। और मैं सोचती हूं कि

[illegible] नहीं, यह एक साधारण सी बात है कि सी में से [illegible]
में वृद्धि नहीं होती।"

बेलोकुरोव ने समझा कि यह तीर उसपर छोड़ा गया है और वह [illegible]
मान कर चला गया।

३

"प्रिंस मालोज्योमोवो में ठहरे हैं और उन्होंने तुम्हें प्रणाम कहला[या]
है," लीदिया ने अपनी मां से कहा। वह अभी-अभी भीतर आयी थी [और]
अपने दस्ताने उतार रही थी। "उन्होंने मुझे बहुत सी नयी खबरें सुनायीं।
उन्होंने वायदा किया है कि वह मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-[केन्द्र]
खोलने के प्रश्न को सूबे की सभा में फिर उठायेंगे। परन्तु उनका कहना
है कि सफलता की बहुत कम आशा है।" और मेरी तरफ़ मुड़ कर उस[ने]
कहा—"माफ़ कीजिये, मैं हमेशा भूल जाती हूं कि इन बातों में आपकी
रुचि नहीं है।"

मुझे बुरा लगा।

"मेरी रुचि क्यों नहीं है?" कन्धे बिचकाते हुए मैंने पूछा। "[आप]
मेरी राय जानने की परवाह नहीं करतीं, परन्तु मैं आपको विश्वास दिला[ता]
हूं कि इस समस्या में मेरी गहरी रुचि है।"

"सच?"

"जी हां! मेरी राय में मालोज्योमोवो में डाक्टरी-सहायता-केन्द्र बिल्कु[ल]
व्यर्थ है।"

मेरी चिड़चिड़ाहट का उसपर प्रभाव पड़ा। उसने आंखें सिकोड़[ते]
हुए मेरी तरफ़ देखा और पूछा—

"तो फिर क्या जरूरी है? प्राकृतिक दृश्य?"

"प्राकृतिक दृश्य भी नहीं। वहां कुछ भी जरूरी नहीं है।"

उसने दस्ताने उतारना समाप्त कर अभी डाक से आया अखबार
खोला। एक मिनट बाद उसने शान्तिपूर्वक कहा—उसकी ध्वनि से स्पष्ट
हो रहा था कि वह अपने को संयत करके बोल रही है—

"पिछले हफ़्ते आन्ना प्रसव में मर गयी। अगर यहां पास में ही कोई
डाक्टरी-सहायता-केन्द्र होता तो वह बच जाती। और मैं सोचती हूं कि

एक कलाकार की कहानी

गहोतक दृश्यों को चित्रित करने वाले कलाकारों का भी इस विषय पर इतना मत होना चाहिए।"

"मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस बारे में मेरी अपनी निश्चित राय है," मैंने जवाब दिया। उसने अपने सामने अखबार को आड़ कर ली मानो मेरी बातें सुनना न चाहती हो। "मेरे ख्याल में वर्तमान परिस्थितियों में ये स्कूल, अस्पताल, पुस्तकालय, डाक्टरी-सहायता-केन्द्र आदि जनता की गुलामी की जंजीरों को और अधिक मजबूत बनाते हैं। किसान एक लम्बी जंजीर में जकड़े हुए हैं और आप लोग उस जंजीर को तोड़ते नहीं, बल्कि उसमें और नयी कड़ियां जोड़ते रहते हैं—इस बारे में मेरा यही विचार है।"

उसने आंखें उठा कर मेरी तरफ देखा और व्यंग्यपूर्वक मुस्करायी और मैं अपने महत्वपूर्ण विचारों को उसे सूत्र रूप में समझाने की कोशिश करने लगा।

"जो असली चिन्ता की बात है वह यह नहीं कि आन्ना बच्चा पैदा होने में मर गयी, परन्तु यह है कि ये सब आन्नायें, मावरायें, पेलागेयें आदि सुबह मुह-अंधेरे से ले कर रात हो जाने तक कठिन परिश्रम करती हैं, अपनी ताक़त से ज्यादा मेहनत करने की वजह से बीमार पड़ जाती हैं, वे जीवन भर अपने बीमार और भूखे बच्चों की चिन्ता में कांपती रहती हैं, जीवन भर उनका इलाज होता रहता है और बीमारी और मौत के डर से वे मुरझा कर जल्दी ही बुड्ढी हो जाती हैं और गन्दगी और बदबू में सड़ती हुई मर जाती हैं। उनके बच्चे भी जब बड़े हो जाते हैं, तो उसी कहानी को दुहराते हैं और इस तरह यह क्रम सैकड़ों-हजारों वर्षों तक इसी तरह चलता रहता है। इसके बन्धन में जकड़े हुए करोड़ों व्यक्ति जानवरों से भी गयी-बीती जिन्दगी बिताते हैं—जिसमें रोटी के लिए एक दूसरे की चिन्ता और भय निरन्तर बना रहता है। उनकी इस भयानक स्थिति का सबसे प्रधान कारण यह है कि उन्हें कभी भी आत्मचिन्तन का समय नहीं मिल पाता और न वे अपनी स्थिति और स्वरूप के विषय में ही सोच पाते हैं। सर्दी, भूख या भय, मेहनत का भार आदि बातें पहाड़ की तरह उनकी आत्मिक उन्नति के सम्पूर्ण रास्तों को अवरुद्ध कर देते हैं—और यही वह चीज है, जो मनुष्य को पशुओं से भेद और भिन्न बनाती है और सिर्फ़ यही वह चीज है, जो जीवन

को भोगने के योग्य रूप प्रदान करती है। आप लोग अस्पतालों और स्कूलों द्वारा उनकी मदद करने की कोशिश करते हैं, परन्तु ऐसा करके आप उन्हें गुलामी की जंजीरों से मुक्त नहीं करते। इसके विपरीत आप उन्हें और भी जकड़ देते हैं, क्योंकि आप उनमें नये अंधविश्वास जगा देते हैं, जिससे उनकी जरूरतें और भी बढ़ जाती हैं। यह बात तो कहना ही व्यर्थ है कि इसके लिए उन्हें जेम्सवो को दवाइयों और किताबों के वास्ते ज्यादा पैसा देना पड़ता है और इस तरह उन्हें पहले से भी ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है।"

"मैं आपसे बहस नहीं करना चाहती," अखबार को नीचे रखते हुए लीदिया ने कहा। "मैं यह सब पहले भी सुन चुकी हूं। मैं सिर्फ एक बात कहूंगी—हाथ पर हाथ रख कर बैठे नहीं रहा जा सकता। यह ठीक है कि हम लोग मानवता की रक्षा नहीं कर रहे हैं और सम्भव है कि हम लोग बहुत सी ग़लतियां भी कर रहे हों, परन्तु हम जो कुछ कर सकते हैं उतना तो करते ही हैं और हम जो कुछ कर रहे हैं वह उचित है। किसी भी सभ्य व्यक्ति के लिए सबसे श्रेष्ठ और सबसे पवित्र कार्य अपने आस-पास के लोगों की सेवा करना है और हम लोग अपनी शक्ति भर उनकी सेवा करने की कोशिश करते हैं। आप इसे पसन्द नहीं करते, परन्तु सभी को सन्तुष्ट करना तो असम्भव है।"

"सच बात है, लीदिया," उसकी मां बोली, "सच बात है।"

लीदिया के सामने वह हमेशा सहमी हुई सी रहती थी और जब लीदिया बोलती थी, तो चिंतित सी हो कर उसकी तरफ ताका करती थी। उसे इस बात का डर लगा रहता था, कि उसके मुह से कहीं बेकार की और बेमौके की बात न निकल जाये। वह उसका कभी खण्डन न कर हमेशा उसकी हां में हां मिलाया करती थी—सच बात है, लीदिया, सच बात है।

"किसानों को पढ़ना-लिखना सिखाने, ओछी नसीहतों वाली किताबें पढ़ाने और डाक्टरी-सहायता-केन्द्र खोल देने आदि से मृत्यु दर में या अज्ञान में कमी नहीं की जा सकती—उसी तरह, जिस तरह आपकी इन खिड़कियों से आती हुई रोशनी से इस बड़े बाग को रोशन नहीं किया जा सकता," मैंने कहा। "आप उन्हें कुछ भी नहीं देतीं। इन किसानों की जिन्दगी में दखलन्दाजी करके आप सिर्फ उनमें नयी-नयी चीज़ों की इच्छाएं पैदा

कर देती हैं, जिसके लिए उन्हे और अधिक मेहनत करनी पड़ती है।"

"हे भगवान! पर कुछ न कुछ तो करना ही चाहिए," लीदिया झुझला कर बोल उठी। उसकी आवाज से कोई भी यह भाप सकता था कि वह मेरे विचारो को तुच्छ समझ रही थी और उनसे घृणा करती थी।

"लोगो को कठोर शारीरिक श्रम से मुक्त कराना चाहिए," मैंने कहा। "हमे उनका बोझा हल्का करना चाहिए, उन्हे चैन की सास लेने दीजिये, जिससे कि वे अपनी पूरी जिन्दगी भट्टी झोकने, कपडे धोने और खेत सम्हालने में ही न लगा दें। उन्हे अपनी आत्मा के बारे मे, ईश्वर के विषय मे सोचने का भी अवसर मिले – उन्हे अवसर मिले कि वे अपनी आत्मिक शक्ति को उन्नत कर सके। मनुष्य का सबसे प्रधान कर्त्तव्य आत्मिक सक्रियता है – सत्य की निरन्तर खोज करना और जीवन का वास्तविक अर्थ समझना है। उनके लिए पशुओ की तरह कठोर परिश्रम करना अनावश्यक कर दीजिये, उन्हे अपने को स्वतत्र अनुभव करने दीजिये, और तब आप देखेंगे कि ये अस्पताल और ये किताबें उनके लिए कितना गहरा मजाक थी। एक बार जब आदमी अपने सच्चे कर्त्तव्य को समझ लेता है, उस समय उसे सिर्फ़ धर्म, विज्ञान और कला के द्वारा ही सन्तुष्ट किया जा सकता है, इन छोटी-छोटी बातो से नही।"

"उन्हें परिश्रम से मुक्त कर दिया जाये?" लीदिया हसी। "परन्तु क्या यह सम्भव है?"

"हां है! उनके परिश्रम का एक हिस्सा अपने ऊपर उठा लीजिये। यदि हम सब लोग, शहरी और देहाती, बिना किसी अपवाद के सभी उस परिश्रम को आपस मे बाटने को रज़ामन्द हो जायें, जो मनुष्य जाति अपनी भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए करती है, तो शायद हम लोगों मे से हरेक को हर रोज दो या तीन घंटे काम करना पडेगा। कल्पना कीजिये कि हम सब लोग – अमीर और गरीब – दिन मे सिर्फ़ तीन घटे ही मेहनत करेंगे और हमारा बाकी का समय हमारे लिए खाली रहेगा। आगे और कल्पना कीजिये कि अपने शरीर पर कम निर्भर रहने के लिए और कम मेहनत करने के लिए हम अपना काम करने के वास्ते मशीनो का आविष्कार करते हैं, हम अपनी जरूरतो को कम से कम करने की कोशिश करते हैं। हम स्वयं अपने को तथा अपने बच्चो को इतना सुदृढ़ बनाते हैं, ताकि वे भूख और ठंड से भयभीत न हों और हम हमेशा आन्ना,

७

मावरा और पेलागेया की तरह उनकी तन्दुरुस्ती के लिए चिन्तित न रहें। सोचिये कि उस समय हम लोग इलाज नहीं करायेंगे, प्रसाधन, तम्बाकू की मिलें, शराब बनाने वाले कारखाने नहीं खोलेंगे—हमारे पास कितना समय रहेगा। हम लोग सब मिल कर अपना बचा हुआ समय विज्ञान और कला की उन्नति में लगायेंगे। जिस तरह कि कभी-कभी किसान सब एक साथ मिल कर सड़कों की मरम्मत करते हैं, बिल्कुल उसी तरह हम सब मिल कर—एक समाज के रूप में—सत्य की खोज करने और जीवन के वास्तविक अर्थ का पता लगाने की कोशिश करेंगे और मुझे विश्वास है कि सत्य का पता बहुत जल्दी लग जायेगा। मनुष्य इस निरन्तर, दुखदायी, त्रासदायक मृत्यु के भय से छूट जायेगा और स्वयं मृत्यु से भी।"

"आप अपनी ही बातों का खण्डन कर रहे हैं," लीदिया ने कहा। "आप विज्ञान की बात करते हैं और स्वयं ही प्रारम्भिक शिक्षा का विरोध करते हैं।"

"प्रारम्भिक शिक्षा—जबकि मनुष्य के पास पढ़ने के लिए सिर्फ़ दुकानों, शराबखानों के बोर्ड और कभी-कभी ऐसी किताबें होती हैं, जिन्हें वह समझ नहीं पाता—ऐसी शिक्षा तो हम लोगों में रूस के पहले राजा रूरिक के समय से प्रचलित है, गोगोल का पेत्रूश्का इतने दिनों से पढ़ सकता है, फिर भी गांव की दशा, जो रूरिक के ज़माने में थी अब भी वैसी ही है। जिस चीज़ की जरूरत है वह पढ़ना-लिखना सिखाना नहीं है, परन्तु मानसिक क्षमता को प्रकट करने की आज़ादी है। जरूरत स्कूलों की ही नहीं, विश्वविद्यालयों की है।"

"आप चिकित्सा का भी विरोध करते हैं।"

"हां, करता हूं। इसकी जरूरत सिर्फ़ प्राकृतिक सत्यों के रूप में बीमारियों का अध्ययन करने के लिए होगी, उनका इलाज करने के लिए नही। अगर इलाज ही करना है, तो बीमारियों का न करके कारणों का करना चाहिये। मुख्य कारण को हटा दो—शारीरिक परिश्रम को और फिर कोई बीमारी ही नहीं रहेगी। मैं उस विज्ञान में विश्वास नही करता, जो बीमारियों को ठीक करता है," मैं उत्तेजित हो कर कहता गया। "जब कला और विज्ञान सच्चे हैं, तो उनका लक्ष्य क्षणिक, व्यक्तिगत उद्देश्य नही है, परन्तु शाश्वत और सार्वभौमिक है। वे सत्य की खोज और जीवन की वास्तविकता का पता चलाते हैं। वे ईश्वर की, आत्मा

की खोज करते हैं और जब उन्हें सामयिक आवश्यकताओं और बुराइयों से बांध दिया जाता है, अस्पतालों और पुस्तकालयों तक सीमित कर दिया जाता है, वे जीवन को सिर्फ गतिहीन और उलझनों से परिपूर्ण बना देते हैं। हमारे पास असंख्य डाक्टर, औषधियां बनाने वाले और वकील हैं, असंख्य मनुष्य पढ़ और लिख सकते हैं, परन्तु जीवविज्ञानी, गणितज्ञ, दार्शनिक, कवि बिल्कुल नहीं हैं। हमारी बुद्धि, हमारी सम्पूर्ण आत्मिक शक्ति अस्थायी और साधारण आवश्यकताओं की पूर्ति में व्यय की जाती है... वैज्ञानिक, लेखक, कलाकार कठोर परिश्रम करते हैं। उन की कृपा से हमारे जीवन की सुविधाएं दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं, हमारी शारीरिक आवश्यकताएं बढ़ती जा रही हैं, फिर भी सत्य हमसे कोसों दूर है और मनुष्य अब भी अत्यधिक लालची और घृणित प्राणी बना हुआ है, प्रत्येक वस्तु अधिकांश लोगों के पतन में सहायक हो रही है और जीवन की पूर्णता का ह्रास होता जा रहा है। ऐसी परिस्थितियों में कलाकार के कार्य का कोई मूल्य नहीं है और जितना ही अधिक वह प्रतिभासम्पन्न है उतनी ही उसकी भूमिका और अधिक विचित्र बनती जा रही है, समझ में ही नहीं आता कि उसकी भूमिका है क्या, क्योंकि जब कोई व्यक्ति उसके कार्य को देखता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वह लालची और घृणित पशु के मनोरंजन के लिए कार्य कर रहा है और वर्तमान व्यवस्था का समर्थक है। मैं काम करने की चिन्ता नहीं करता और न काम करूंगा... किसी से कुछ भी फ़ायदा नहीं; पृथ्वी को नर्क में डूब जाने दो!"

"मिसूस, बाहर चली जाओ।" स्पष्ट रूप से यह सोचते हुए कि मेरे शब्द उस लड़की के लिए हानिप्रद सिद्ध हो सकते हैं, लीदिया ने अपनी बहन को आज्ञा दी।

जेन्या ने दुखी हो कर अपनी मां और बहन की तरफ देखा और कमरे से बाहर चली गयी।

"ये बड़ी प्यारी बातें हैं, जिन्हें लोग अपनी उदासीनता का औचित्य सिद्ध करने के लिए कहा करते हैं," लीदिया ने कहा। "स्कूलों और अस्पतालों की बुराई करना अधिक आसान है, बनिस्बत इसके कि पढ़ाना और इलाज करना।"

"सच बात है, लीदिया, सच बात है," मां ने हां में हां मिलायी।

"आप काम बन्द कर देने की धमकी देते हैं," लीदिया ने कहा।

और स्पष्ट रूप से अपने कार्य को बहुत अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं। अच्छा हो कि हम लोग बहस बन्द कर दें, हम लोग कभी एक दूसरे से सहमत नहीं हो सकते क्योंकि मैं इन अधूरे पुस्तकालयों और अस्पतालों को, जिनके विषय में आप इतनी द्वेषपूर्ण राय रखते हैं, सब प्राकृतिक दृश्यों के चित्रों से अधिक मूल्यवान समझती हूं।" और एकदम मां की तरफ़ मुड़ कर वह बिल्कुल भिन्न स्वर में कहने लगी, "प्रिंस बहुत बदल गये हैं, जब वह पिछली बार हमारे यहां आये थे, तबसे अब बहुत बूढ़े हो गये हैं। उन्हें विशी भेजा जा रहा है।"

मुझसे बातें करने से बचने के लिए ही वह अपनी मां से प्रिंस के विषय में बातें करने लगी थी। उसका चेहरा तमतमा उठा और अपने भाव को छिपाने के लिए वह मेज पर और नीचे झुक कर मानो उसकी निगाह कमजोर हो अखबार पढ़ने का बहाना करने लगी। मेरी उपस्थिति उसके लिए असह्य हो उठी थी। मैंने नमस्कार किया और घर चला आया।

४

बाहर पूरी खामोशी छा रही थी। तालाब के दूसरे किनारे पर गांव निद्रा में डूब चुका था। एक भी रोशनी दिखाई नहीं दे रही थी। तालाब के पानी में सिर्फ़ तारों की परछाईं झलक उठती थी। शेरों वाले फाटक पर जेन्या मेरे साथ चलने के लिए निश्चल खड़ी हुई थी।

"गांव में सब लोग सो रहे हैं," अन्धकार में उसका चेहरा देखने का प्रयत्न करते हुए मैंने उससे कहा और मैंने देखा कि उसकी उदास निगाहें मुझ पर जमी हुई हैं। "भटियारे और घोड़े चुराने वाले चैन से सो रहे हैं, जब कि हम, सभ्य लोग, बहस कर रहे हैं और एक दूसरे को खिजा रहे हैं।"

यह अगस्त की एक उदास रात्रि थी—उदास इसलिए कि पतझड़ का आभास होने लगा था। गहरे लाल बादल के पीछे से चांद ऊपर निकल रहा था और सड़क पर तथा अंधेरे में डूबे खेतों पर जो उसके किनारों पर फैले हुए थे, एक धीमी रोशनी छिटका रहा था। रह-रह कर तारे टूट रहे थे। जेन्या मेरे साथ सड़क पर चलने लगी। उसने आसमान की तरफ़ देखने की कोशिश नहीं की, जिससे कि वह टूटते हुए तारों को न देख सके, जिनसे किसी कारणवश उसे डर लगता था।

उस संध्या की लालिमा, उन अद्भुत और सुन्दर दृश्यों की स्वामिनी हो, जिनके मध्य मैं अब तक स्वयं को नितान्त एकाकी और महत्वहीन समझता आया था।

"एक मिनट और ठहरिये," मैंने उससे प्रार्थना की, "मैं आपसे कोट मांगता हूं।"

मैंने अपना बड़ा कोट उतारा और ठंड से सिकुड़ते उसके कन्धों पर डाल दिया। आदमी के बड़े कोट में भद्दी और अजीब सी दिखाई देने के भय से वह हंसी और उसे फेंक दिया। उसी समय मैंने उसे अपनी बाहों में जकड़ लिया और उसके मुख, कन्धों और हाथों को अगणित चुम्बनों से भर दिया।

"कल तक के लिए विदा।" वह फुसफुसायी और धीरे से, मानो रात्रि की निस्तब्धता को भंग करने से भयभीत हो, वह मेरे सीने से लग गयी। "हम लोग एक दूसरे से अपने रहस्य नहीं छिपाते। मुझे तुरन्त ही अपनी मां और बहन को सब कुछ बताना होगा... यह बड़ी भयानक बात है! मां की तो कोई बात नहीं—मां आप को पसन्द करती हैं—परन्तु लीदिया!"

वह फाटक की तरफ़ भाग गयी।

"नमस्कार," वह चिल्लायी।

और फिर दो या तीन मिनट तक मैं उसके दौड़ने की आवाज़ सुनता रहा। मैं घर नहीं जाना चाहता था और न कोई काम ही था, जिसके लिए जाता। मैं कुछ देर तक हिचकिचाता हुआ स्तब्ध खड़ा रहा और धीरे-धीरे वापस लौटा, एक बार फिर उस मकान को देखने के लिए, जिसमें वह रहती थी—प्यारा, साधारण सा मकान, जो ऐसा लगता था मानो अपनी ऊपरी छोटी मंज़िल की खिड़कियों द्वारा मेरी तरफ़ देख रहा हो और इस सब व्यापार को समझ रहा हो। मैं बरामदे की बग़ल से गुज़रा और पुराने घने वृक्ष की छाया में टेनिस-कोर्ट के पास एक बैंच पर बैठ गया और वहां से मकान की तरफ देखता रहा। ऊपरी छोटी मंज़िल की खिड़कियों में, जहां मिसूस सोती थी, एक तेज़ रोशनी दिखाई दी, जो बदल कर हल्के हरे रंग की हो गयी—उन लोगों ने लैम्प को शेड से ढंक दिया था। हिलती हुई परछाइयां दिखाई देने लगी थीं... मेरे हृदय में कोमलता, शान्ति और अपने प्रति पूर्ण सन्तोष की भावना

भर रही थी। मुझे इस बात का सन्तोष था कि मैं अपनी भावनाओं मे बह रहा हूं और किसी से प्रेम करने लगा हू। परन्तु उसी समय मुझे यह सोच कर व्यग्रता सी होने लगी कि मुझ से कुछ ही कदम दूर, उस घर के एक कमरे में लीदिया थी, जो मुझे नापसन्द करती थी और शायद घृणा करती थी। मैं वहां बैठा हुआ सोचने लगा कि क्या जेन्या बाहर आयेगी। मैंने ध्यान दे कर सुना और मुझे लगा कि मैंने ऊपर बातें करने की आवाज़ें सुनीं।

एक घंटा बीत गया। हरी रोशनी बुझ गयी। अब परछाइयां दिखाई नही दे रही थी। चांद ठीक मकान के ऊपर, दूर आसमान मे चमक रहा था। उसकी चांदनी सोते हुए बाग़ और रास्तो पर पड रही थी। घर के सामने लगे हुए गुलाब और डहेलिया के फूल साफ दिखाई दे रहे थे, वे सब एक ही रंग के लगते थे। काफी ठंड हो गयी थी। मैं बाग से बाहर निकला, अपना कोट उठाया और चुपचाप घर की तरफ चल पड़ा।

जब दूसरे दिन खाना खाने के बाद मैं वोल्चानीनोव परिवार के यहां गया, तो बाग़ की तरफ खुलने वाला शीशे का दरवाज़ा खुला पडा था। मैं बरामदे में बैठ गया और प्रत्येक मिनट इस बात की प्रतीक्षा करने लगा कि अभी जेन्या फूलों के पीछे से, या किसी रास्ते से आयेगी, या मुझे घर से आती हुई उसकी आवाज सुनाई देगी। फिर मैं ड्राइंग रूम मे गया, वहां से खाना खाने के कमरे को देखा। वहां कोई भी नही था। खाना खाने के कमरे से ड्योढ़ी में जाने वाले गलियारे मे मैंने दो चक्कर लगाये। इस गलियारे में कई दरवाज़े थे और उन दरवाज़ो मे से एक से लीदिया की आवाज़ आती हुई मुझे सुनाई दी।

"ख़ुदा ने... भेजा... एक कौए," उसने ऊंची आवाज़ में शब्दो पर ज़ोर देते हुए, शायद इमला बोलते हुए कहा, – "ख़ुदा ने भेजा कौए के लिए पनीर का एक टुकड़ा... कौन है?" उसने मेरे पैरो की आवाज़ सुन कर अचानक पूछा।

"मैं हूं।"

"ओह! माफ कीजिये, मैं इस समय आपके पास नही आ सकती, मैं दाशा को सबक पढ़ा रही हूं।"

"क्या येकातेरीना पावलोव्ना बाग़ मे है?"

"नही, वह आज सुबह मेरी बहन के साथ पेंज़ा सूबे मे हमारी मौसी

के यहां चली गयी हैं। और जाड़ों में शायद वे लोग विदेश चले जायें," उसने कुछ देर बाद कहा। "ख़ुदा ने भेजा... कौए के लिए... पनीर का एक टुकड़ा... लिख लिया?"

मैं हाल में गया और तालाब और गांव की तरफ़ सूनी निगाहों से ताकता रहा। और मेरे कानों में यह ध्वनि गूंजती रही—"एक पनीर का टुकड़ा... ख़ुदा ने भेजा कौए के लिए... पनीर का एक टुकड़ा।"

और मैं उसी रास्ते से वापस लौट गया, जिससे हो कर पहली बार यहां आया था—पहले अहाते से हो कर घर के पास होता हुआ बाग़ में आया, फिर लिंडन के पेड़ों की वीथिका पर... यहां एक छोटा सा लड़का मेरे पास दौड़ा आया और उसने मुझे एक पर्चा दिया। "मैंने अपनी बहन को सारी बातें बता दी और वह इस बात पर ज़ोर दे रही है कि मुझे आप से अलग हो जाना चाहिए," मैंने पढ़ा, "मैं उसकी आज्ञा न मान कर उसे चोट नहीं पहुंचा सकती। भगवान आपको प्रसन्न रखेगा। मुझे माफ़ कर दें। काश आप जानते कि मैं और मां इस बात पर कितना रोई हैं।"

फिर इसके आगे फर के वृक्षों से बनी अंधेरी वीथिका थी, टूटी हुई चहारदीवारी... खेतों में, जहां तब राई खिल रही थी और चिड़ियां चहचहा रही थी, अब छंदे हुए गाय-घोड़े चर रहे थे। ढलानों पर जाड़े के पहले की बुआई के अनाज के पौधों की चमकीली हरियाली छा रही थी। दिन भर कठिन परिश्रम करने के उपरान्त थकान अनुभव करने की सी भावना मेरे मन पर छाने लगी और मुझे उन सारी बातों पर लाज अनुभव हुई, जो मैंने वोल्चानीनोव परिवार के यहां कही थीं और मुझे पहले की ही तरह अपना जीवन भार लगने लगा। घर पहुंच कर मैंने अपना सामान बांधा और उसी शाम पीटर्सबर्ग के लिए रवाना हो गया।

फिर वोल्चानीनोव परिवार वालों से मेरी मुलाक़ात कभी नहीं हुई। कुछ साल पहले जब मैं क्रीमिया जा रहा था, तो रास्ते में, रेल में बेलोकुरोव से मेरी मुलाक़ात हो गयी। पहले की ही तरह वह एक बड़ी सी कमीज़ और [illegible] का कोट पहने हुए था और जब मैंने उससे उसका मिज़ाज पूछा, तो उसने जवाब दिया कि भगवान को धन्यवाद है कि वह स्वस्थ है। वह बातें करने लगा। उसने अपनी पुरानी ज़मींदारी बेच कर ल्यूबोव इवानोव्ना के नाम दूसरी छोटी सी ज़मींदारी ख़रीद ली थी।

वह वोल्चानीनोव परिवार के विषय में बहुत कम बता सका। उसने बताया कि लीदिया अब भी शेल्कोव्का में रह रही है और स्कूल में पढ़ाती है। उसने धीरे-धीरे अपने चारों तरफ ऐसे हमदर्द जवानों की टोली इकट्ठी कर ली थी, जो अत्यन्त मजबूत थी, और पिछले चुनावों में इन लोगों ने बालागिन को हरा दिया था, जो उस समय तक सारे जिले को अपने अंगूठे के नीचे दबाये हुए था। जेन्या के बारे में उसने सिर्फ इतना बताया कि वह घर पर नहीं रहती और उसे नहीं मालूम कि वह कहां है।

मैं अब उस पुराने घर को भूलता जा रहा हूं और सिर्फ उस समय जब मैं चित्र बना रहा या पढ़ रहा होता हूं अचानक मुझे बिना किसी वजह के खिड़की की उस हरी रोशनी तथा उस रात, जब मैं अपने हृदय में प्यार लिए ठंड से हाथ मलता हुआ घर की तरफ लौट रहा था, तो उस समय गूंजी हुई अपने कदमों की आवाज मुझे याद आने लगती है। और इससे भी कम, कभी-कभी उन क्षणों में, जब मैं एकान्त के कारण दुःखी और निराश हो उठता हूं, मुझे हल्की-हल्की स्मृतियां सताने लगती हैं और धीरे-धीरे मैं यह अनुभव करने लगता हूं कि वह भी मेरे विषय में सोच रही है, कि वह मेरी प्रतीक्षा कर रही है और यह कि हम लोग फिर मिलेंगे...

मिसूस, तुम कहां हो?

१८९६

घोंघा

दो शिकारी, जिन्हें शिकार खेलने-खेलने देर हो गयी थी, रात बि
के लिए मिरोनोसित्सकोए गांव के मुखिया प्रोकोफ़ी के खलिहान में ठ
गये। उनमें से एक तो था पशु-चिकित्सक इवान इवानिच और दूसरा
बूरकिन—हाई स्कूल का अध्यापक। इवान इवानिच का कुल नाम कु
अजीब सा था—चिमशा-हिमालयस्की। यह उसे बहुत फबता न था औ
लोग उसे उसके नाम व पैतृक नाम इवान इवानिच से ही पुकारते थे
वह शहर के पास एक घोड़ा फ़ार्म में रहता था और खुली हवा का मज
लेने के लिए शिकार पर निकला था। अध्यापक बूरकिन हर साल गर्मि
काउंट प० की जागीर में गुजारता था और यहां सब उसे जानते थे।

उन्हें नींद नहीं आ रही थी। इवान इवानिच दरवाजे के बाहर चांदनी
में बैठा पाइप पी रहा था। वह बड़ी मूंछों वाला लम्बे क़द का दुबला-
पतला बूढ़ा सा आदमी था। बूरकिन अन्दर भूसे पर लेटा हुआ था और
अन्धेरा उसे छिपाये था।

वे एक दूसरे को क़िस्से सुना कर वक़्त काट रहे थे। बातों-बातों में
मुखिया की बीवी मावरा का भी ज़िक्र आया, जो बिल्कुल स्वस्थ और
समझदार औरत थी। यह औरत कभी अपने गांव के बाहर नहीं गयी थी।
उसने अपनी जिन्दगी में कभी रेलगाड़ी नहीं देखी थी, कभी किसी शहर
में क़दम नहीं रखा था, पिछले दस वर्ष उसने अंगीठी के पास बैठ कर
गुजार दिये थे और बाहर सड़क पर वह सिर्फ़ रात को ही निकलती थी।

"यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है," बूरकिन ने कहा, "इस संसार
में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो किसी से मिलना-जुलना स्वभावतः
पसन्द नहीं करते और घोंघे या केकड़े की तरह अपने खोल में ही घुसे
जाने की कोशिश करते हैं। शायद यह स्वभाव इस बात का द्योतक है कि
हमारे पूर्वजों की प्रवृत्तियां हममें फिर-फिर लौट आती हैं; यह उस काल
है, जब हमारे पूर्वजों ने सामाजिक जीवन नहीं सीखा था और

हर शख्स अकेला अपनी गुफा में पड़ा रहता था। या शायद ऐसे लोग मनुष्य की अनेक किस्मों में से एक हों, कौन जाने? मैं प्रकृतिविज्ञान से परिचित नहीं हूं और इन समस्याओं को हल करना मेरा काम नहीं है; मैं तो सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि इस दुनिया में मावरा जैसे लोग कोई अजूबा नहीं हैं। दूर क्यों जायें, यूनानी भाषा के अध्यापक हमारे सहयोगी बेलिकोव को ही ले लें, जिसकी अभी दो एक महीने हुए हमारे शहर में मौत हो गयी। आपने उसके बारे में अवश्य सुना होगा। उसमें अजीब बात यह थी कि मौसम कितना ही अच्छा क्यों न हो वह हमेशा रबर के ऊपरी बूट और भारी अस्तरदार गर्म कोट पहने रहता था और छाता हमेशा अपने साथ रखता था। छाते को वह हमेशा खोल में रखता था। अपनी घड़ी भी वह भूरे रंग के साबर के खोल में रखता था और जब कभी वह पेंसिल घड़ने के लिए चाकू निकालता, तो वह भी एक खोल में ही बंद होता। यहां तक कि उसका चेहरा भी एक खोल में ही बंद लगता, क्योंकि वह हमेशा ओवरकोट के खड़े कालर में छुपा रहता था। वह गहरे रंग की ऐनक लगाता था और मोटा स्वेटर पहने रहता था, कानों में रुई ठूसे रहता था और जब कभी घोड़ा-गाड़ी में बैठता, तो कोचवान से छतरी चढ़ा देने को कहता। बस यह कहिये कि उसमें निरन्तर एक ऐसी अदम्य इच्छा रहती थी कि वह अपने आपको चारों ओर से ढके रखे, अपने लिए कोई खोल बना ले, सबसे अलग और प्रभावों से सुरक्षित रह सके। वास्तविकता से वह झुंझला उठता था, घबड़ा जाता था, डर जाता था और शायद अपनी कायरता और वर्तमान से अपनी अरुचि छिपाने के लिए वह हमेशा विगत काल व उन चीजों की प्रशंसा करता रहता था, जिनका कभी अस्तित्व ही न था। जो मृत भाषाएं वह पढ़ाता था, वे भी वास्तव में उसके लिए ऊपरी बूट और छाता ही थीं, जिनकी आड़ में वह असली जिन्दगी से अपने को छिपाये रखता था।

"वह मिठास भरे लहजे में कहता—'ओह! कितनी सुरीली, कितनी सुन्दर है यूनानी भाषा!' और मानो अपने शब्दों की पुष्टि करते हुए वह अपनी आंखें आधी मींच कर और उंगली उठा कर फुसफुसाता—'अनथ्रोपोस!'*

---

*अनथ्रोपोस—मनुष्य। (यूनानी)

घोंघा

दो शिकारी, जिन्हें शिकार खेलते-खेलते देर हो गयी थी, रात बिताने
के लिए मिरोनोसित्सकोए गांव के मुखिया प्रोकोफ़ी के खलिहान में ठहर
गये। उनमें से एक तो था पशु-चिकित्सक इवान इवानिच और दूसरा
बूरकिन—हाई स्कूल का अध्यापक। इवान इवानिच का कुल नाम कुछ
अजीब सा था—चिमशा-हिमालयस्की। यह उसे बहुत फबता न था और
लोग उसे उसके नाम व पैतृक नाम इवान इवानिच से ही पुकारते थे।
वह शहर के पास एक घोड़ा फ़ार्म में रहता था और खुली हवा का मज़ा
लेने के लिए शिकार पर निकला था। अध्यापक बूरकिन हर साल गर्मियां
काउंट प० की जागीर में गुज़ारता था और यहां सब उसे जानते थे।

उन्हें नींद नहीं आ रही थी। इवान इवानिच दरवाज़े के बाहर चांदनी
में बैठा पाइप पी रहा था। वह बड़ी मूंछों वाला लम्बे क़द का दुबला
पतला बूढ़ा सा आदमी था। बूरकिन अन्दर भूसे .
अन्धेरा उसे छिपाये था।

वे एक दूसरे को क़िस्से सुना कर वक़्त
मुखिया की बीवी मावरा का भी ज़िक्र
समझदार औरत थी। यह औरत कभी
उसने अपनी ज़िन्दगी में कभी रेलगाड़ी
में क़दम नहीं रखा था, पिछले दस
गुज़ार दिये थे और बाहर सड़क पर

"यह कोई आश्चर्य की बात
में ऐसे लोगों की कमी नहीं है
पसन्द नहीं करते और घोंघे
जाने की कोशिश करते
हमारे पुरखों की
की देन है, जब

'आह, कहीं कुछ हो न जाये!' व्रत का आहार* मुआफ़िक नहीं पड़ता था, लेकिन वह सामान्य खाना इसलिए नहीं खाता था कि लोग कहेंगे कि बेलिकोव व्रत नहीं रखता। इसलिए वह मक्खन में तली हुई मछली खाता। यह उपवास का खाना नहीं था, लेकिन आप उसे सामान्य भोजन भी नहीं कह सकते। वह किसी औरत को नौकर नहीं रखता था इस ख़याल से कि लोग उसके बारे में न जाने क्या सोचेंगे और इसलिए उसने एक साठ बरस के बूढ़े को रसोइया रख लिया था। बूढ़े का नाम अफ़ानासी था और वह सनकी व शराबी था। किसी ज़माने में वह अरदली रह चुका था और उल्टा-सीधा खाना भी पका लेता था। अफ़ानासी आम तौर पर दरवाज़े पर हाथ बांधे खड़ा और गहरी सांस ले कर हमेशा एक ही बात दोहराता दिखाई देता था—

"'आजकल सभी हुज़ूर बन गये हैं!'

"बेलिकोव का सोने का कमरा छोटा सा था, बिल्कुल बक्से जैसा ही और उसके पलंग पर चंदोवा तना हुआ था। जब वह सोने लगता तो कम्बल सिर पर खींच लेता; गर्मी और घुटन होती, हवा बंद दरवाज़े पर सिर पटकती और चिमनी में सायं सायं करती रहती; रसोई से आहों की आवाज़ आती, अपशकुन जैसी आहें...

"और कम्बल के अन्दर भी उसे भय लगता कि कहीं कुछ हो न जाये, अफ़ानासी उसे क़त्ल न कर दे, चोर न घुस आये, और फिर रात भर उन्हीं आशंकाओं से भरे सपने देखता और सुबह, जब हम दोनों साथ-साथ स्कूल जाते तो उसका चेहरा उतरा हुआ और पीला होता, यह बिल्कुल स्पष्ट होता कि उस चहल-पहल भरे स्कूल से भी, जहां वह जा रहा है, वह रोम-रोम से घृणा करता है और उससे डरता है तथा यह भी कि उस जैसे स्वभावतः एकान्तप्रेमी व्यक्ति को मेरे साथ चलना नागवार है।

"वह कह उठता, 'दरजों में कितना शोर होता है,' मानो अपनी बोझिल मनोदशा की वजह ढूंढने की कोशिश कर रहा हो, 'यह तो हद से बाहर है।'

---

*ईसाइयों के यहां व्रत के समय गोश्त तथा दुग्ध पदार्थ—दूध, दही, मक्खन, अंडे आदि खाने की मनाही होती है, इनके अलावा और कुछ भी खाया जा सकता है।

य साथ टमाटरों के साथ बहुत जायकेदार शोरबा बनता है, 'इतना जायकेदार, इतना जायकेदार कि बस, पूछिये मत!'

"हम लोग उनकी बातें सुनते रहे और एकाएक ही हम सबको एक साथ एक ही बात सूझी।

"'इन दोनों की शादी क्यों न हो जाये,' हेडमास्टर की बीवी ने मेरे कान में कहा।

"न मालूम क्यों हम सबको एकाएक याद आया कि हमारा बेलिकोव कुंआरा है, और हम लोगों को यह अजीब सा लगा कि यह बात पहले कभी हमारे ध्यान में क्यों नहीं आयी, उसके जीवन के इस महत्वपूर्ण पहलू पर कभी हमारी नजर ही नहीं गयी। स्त्रियों के विषय में उसके क्या विचार हैं? उस समय तक हम लोगों ने कभी इन बातों पर सोचा भी नहीं था। हमें गुमान भी नहीं हो सकता था कि ऐसा व्यक्ति, जो हर मौसम में रबर के ऊपरी बूट पहनता है और चंदोवे के तले सोता प्रेम भी कर सकता है।

"हेडमास्टर की बीवी ने अपना विचार स्पष्ट करते हुए कहा, 'चालीस से ऊपर है और यह तीस बरस की है। मेरा ख़्याल है कि उससे शादी कर लेगी।'

"हमारे प्रान्तीय क्षेत्रों में ऊब की वजह से लोग क्या कुछ नहीं करते कितनी ही फ़िज़ूल और बेमतलब हरकतें! यह सब इसलिए होता है कि जो बातें ज़रूरी होती हैं वे कभी नहीं की जातीं। अब आप ही सोचिये हम लोगों को क्या पड़ी थी कि इस बेलिकोव की शादी करायें, जिसका विवाहित व्यक्ति के रूप में कल्पना भी असम्भव थी? हेडमास्टर की बीवी, इन्सपेक्टर की बीवी और स्कूल से संबंधित तमाम दूसरी महिलाओं में जैसे एकाएक जान आ गयी, उनकी सूरतें भी ज्यादा अच्छी लगने लगीं मानो सहसा उनको जीवन में कोई उद्देश्य मिल गया हो। अब हेडमास्टर की बीवी ने थियेटर में एक बाक्स रिजर्व करवाया और उसमें ये कौन-कौन? वार्या बैठी एक बड़ा सा पंखा झल रही थी, उसका चेहरा खिला हुआ था और उसकी बग़ल में बेलिकोव साहब तशरीफ़ रखे थे, छोटे से, सिकुड़े हुए मानो घर में से चिमटे से खींच कर लाये गये हों। मैंने छुट्टी शाम के चायपानी की दावत दी, तो महिलाएं हठ करने लगीं कि बेलिकोव और वार्या को जरूर बुलाऊं। गरज यह कि सिलसिला शुरू हो गया।

मालूम हुआ कि वार्या को शादी करने मे कोई आपत्ति नही है। उसका जीवन अपने भाई के साथ कोई सुख से नही कट रहा था। वे दिन भर एक दूसरे से बहस करते और लड़ते रहते थे। यह एक बहुत आम सी बात थी कि कोवालेंको सडक पर डग भरता हुआ चला आ रहा है। एक लम्बा-चौड़ा इनसान कढ़ाईदार कमीज़ पहने, बालो की एक लट टोपी से निकल कर माथे पर पड़ी हुई, एक हाथ में किताबों का बंडल, दूसरे मे एक मोटी सी गांठदार छड़ी। उसके पीछे उसकी बहन चली आ रही है। वह भी हाथ में किताबें लिये हुए।

"वह ज़ोर से बहस करती, 'लेकिन, मिखाइलिक, तुमने यह नही पढ़ी है, मैं जानती हूं! मैं दावे के साथ कह सकती हू कि तुमने यह हरगिज़ नही पढ़ी!'

"कोवालेंको अपनी छड़ी पटक कर चिल्लाता, 'और मैं तुमसे कहता हूं कि मैंने पढ़ी है!'

"'ओह, खुदा के वास्ते, मीचिक! तुम इस क़दर खफ़ा क्यों होते हो? आखिर हम सिद्धान्तों की बात कर रहे हैं।'

"'मैं कहता हूं कि मैंने यह पढ़ी है!' कोवालेंको पहले से भी ज्यादा चीख कर कहता।

"और अगर घर पर बाहर का कोई आदमी आता, तो निश्चित था कि दोनो लड़ने लगें। वह शायद ऐसी जिन्दगी से तंग आ गयी थी और उसकी इच्छा रही होगी कि उसका अपना घर हो, इसके अलावा उम्र का भी तकाज़ा था—पसन्द का आदमी ढूंढने के लिए वक्त भी कहा रह गया था! वह किसी से भी शादी कर सकती थी, यूनानी भाषा के अध्यापक से भी। वैसे एक बात यह भी है कि हमारी लड़कियों की यही हालत है, शादी करनी है तो किसी से भी कर लेगी। ख़ैर जो भी हो, वार्या हमारे बेलिकोव की ओर काफी खिंचने लगी थी।

"और बेलिकोव? वह कोवालेंको के यहा भी उसी तरह जाता था जैसे बाकी हम सब के यहां। वह मिलने जाता, बैठ जाता और चुपचाप बैठा रहता। वह चुपचाप बैठा रहता और वार्या उसे 'हवाएं बह रही हैं' गीत सुनाती या गहरी आंखों से ताकती, या एकाएक क़हक़हा मार कर हंस पड़ती—'हा-हा-हा!'

"प्रेम के मामले में, खासकर शादी के मामले में, दूसरों के सुझावों का

६०

बहुत बड़ा हाथ होता है। हर शख़्स — उसके साथी और महिलाएं भी बेलिकोव को इस बात का विश्वास दिलाने लगे कि उसे शादी कर लेनी चाहिए और यह कि उसके लिए जीवन में सिवा इसके कुछ भी बाक़ी नहीं रह गया है कि वह शादी कर ले; हम सब उसको बधाई देने और बुर्दबारी से गम्भीर मुद्रा में तुच्छ बातें कहा करते जैसे कि शादी मनुष्य के जीवन में बहुत बड़ा क़दम है या ऐसी ही और बातें; इसके अलावा वर्या आकर्षक तो थी ही, उसे सुन्दर भी कहा जा सकता था, फिर वह काफ़ी ऊंचे पद के सरकारी अधिकारी की बेटी थी, उसका अपना घर था, इससे भी बड़ी बात तो यह थी कि वह पहली औरत थी, जिसने उससे सहृदयता का व्यवहार किया था। बस, उसका सिर फिर गया और उसने फ़ैसला कर लिया कि शादी कर लेना उसका फ़र्ज़ है।"

"बस यही वक़्त था उसके रबर के ऊपरी बूट और छाता फेंक कर देने का," इवान इवानिच ने जोड़ा।

"जी नहीं, आप सोच भी नहीं सकते, यह तो बिल्कुल असंभव सिद्ध हुआ। उसने अपनी मेज़ पर वार्या की एक तसवीर रख ली। वह अक्सर मेरे पास आता और वार्या, पारिवारिक जीवन, विवाह की गम्भीरता आदि पर बातें करता। वह कोवालेंको के घर भी अक्सर जाता, लेकिन उसने अपनी आदत ज़रा भी नहीं बदली। उल्टे शादी कर लेने के फ़ैसले का उसपर बहुत बुरा असर हुआ; वह दुबला हो गया और पीला पड़ गया और लगने लगा कि वह अपने खोल में और अन्दर घुसता जा रहा है।

"मुंह ज़रा सा टेढ़ा कर एक हल्की सी मुस्कराहट के साथ वह मुझसे कहता — 'वरवारा साविश्ना मुझे पसंद है और मैं यह भी मानता हूं कि हर शख़्स को शादी कर लेनी चाहिए लेकिन... आप तो जानते हैं कि यह सब इस क़दर अचानक हो रहा है... इस पर ज़रा ग़ौर कर लेना ही ठीक होगा।'

"मैं उससे कहता, 'इसमें ग़ौर क्या करना है? शादी कर डालिये, बस क़िस्सा ख़त्म हुआ।'

"'नहीं, नहीं, शादी एक बहुत महत्वपूर्ण बात है। यह पहले से सोच लेना चाहिए कि भविष्य में मेरा क्या फ़र्ज़ होगा और क्या ज़िम्मेदारियां

"या फिर कभी वह इतना हंसता कि हंसते-हंसते उसकी आंखों में आंसू आ जाते ; उसकी हंसी गहरे सुर में शुरू होती और फिर इतनी ऊंची हो जाती कि वह पिपियाने लगता, और मुझसे पूछता—

"'आख़िर यहां आता क्यों है वह? आख़िर वह चाहता क्या है? चुपचाप बैठे-बैठे घूरता रहता है।'

"उसने बेलिकोव का एक नाम भी रख छोड़ा था—'मकड़ी, खून चूसने वाली मकड़ी'। हम लोग उससे यह जिक्र नहीं करते थे कि उसकी बहन का इरादा उसी 'मकड़ी' से शादी करने का है। एक बार जब हेडमास्टर की बीवी ने इस बात की तरफ़ इशारा किया कि क्या ही अच्छा हो अगर उसकी बहन बेलिकोव जैसे ठोस व इज़्ज़तदार आदमी के साथ अपना घर बसा ले, तो उसने भवें सिकोड़ लीं और बिगड़ कर कहा—

"'मुझे क्या लेना-देना है। वह चाहे तो किसी सांप से शादी कर ले। मैं दूसरों के मामलों में दख़ल नहीं देता।'

"अब सुनिये आगे क्या हुआ। किसी ने एक व्यंग्य-चित्र बनाया, जिसमें उसने दिखाया था कि बेलिकोव अपने रबर के ऊपरी बूट पहने, पतलून ऊपर चढ़ाये, सिर पर छाता लगाये वार्या के हाथ में हाथ डाले चला जा रहा है। चित्र के नीचे लिखा था 'आशिक़ अनथ्रोपोस'। चित्र उसकी हू-ब-हू नक़ल थी। चित्रकार ने उस चित्र पर कई दिन मेहनत की होगी, क्योंकि लड़कों और लड़कियों दोनों के स्कूलों व धार्मिक शिक्षालय के हर अध्यापक और हर सरकारी अफ़सर के पास उसकी एक एक प्रति भेजी गयी थी। बेलिकोव को भी उसकी एक नक़ल मिली। चित्र देख कर वह घोर चिन्ता में पड़ गया।

"हम दोनों मकान से एक साथ बाहर निकले। मई की पहली तारीख थी और इतवार का दिन, हम सब लोग—तमाम लड़के और अध्यापक—स्कूल के सामने जमा होने वाले थे और वहां से शहर के बाहर जंगल में जाने की बात तय हुई थी। ख़ैर, जब हम चले उसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं।

"वह बोला, 'कैसे निर्दय और द्वेषी लोग होते हैं दुनिया में!', और उसके होंठ कांपने लगे।

"इसी दरम्यान मरना तक आ गया। हम चले जा रहे थे, एकाएक देखते क्या हैं कि कोवालेंको साइकिल दौड़ाते चला आ रहा है और उसके

पीछे वार्या भी साइकिल पर चली आ रही है। हाफती हुई, मुह लाल, लेकिन मस्त और हसती हुई।

"उसने चिल्ला कर कहा, 'हम आप लोगों से पहले वहा पहुच जायेगे! कैसा सुहावना दिन है, कैसा सुन्दर! अद्भुत!'

"वे दोनों ओझल हो गये। हमारे बेलिकोव का चेहरा पीले से एकदम सफेद फक हो गया। वह स्तब्ध रह गया और ठिठक कर मेरी तरफ घूरने लगा...

"उसने आश्चर्य से पूछा, 'या खुदा, यह है क्या? क्या मेरी आखो को धोखा हुआ है? स्कूल के मास्टरो के लिए और खास तौर से औरतो के लिए क्या यह मुनासिब है कि वे साइकिल पर चढें?'

"'इसमे हर्ज ही क्या है?' मैंने पूछा। 'वे साइकिलो पर क्यो न चढ़ें?'

"'पर यह तो हद से ज्यादा है!' मुझे अविचलित देख कर वह भौचक्का रह गया और चीख उठा, 'यह क्या कहते हैं आप?'

"इस बात से उसको इतना धक्का पहुचा था कि उसने आगे जाने से इनकार कर दिया और घर वापस चला गया।

"दूसरे दिन मारे घबराहट के वह लगातार अपने हाथ मलता रहा और चौंकता रहा। उसकी सूरत से मालूम पडता था कि उसकी तबीयत ठीक नही है। जिन्दगी मे पहली बार उस दिन वह छुट्टी होने से पहले ही स्कूल से घर चला गया। उसने खाना भी नही खाया। शाम के वक्त, हालांकि अच्छी खासी गर्मी पड रही थी, वह गर्म कपडे पहन कर कोवालेको के मकान की तरफ पैर घसीटता हुआ चल दिया। वार्या कही बाहर गयी हुई थी, मुलाकात उसके भाई से ही हुई।

"'बैठिये,' कोवालेको ने बडे रूखेपन से भवे सिकोड कर कहा; उसके चेहरे पर अभी तक नीद का भारीपन बाकी था। वह खाने के बाद आराम करके उठा ही था और बहुत झुझलाया हुआ था।

"बेलिकोव लगभग दस मिनट तक खामोश बैठा रहा, फिर उसने कहना शुरू किया—

"'मैं आप के पास अपनी आत्मा का बोझ हल्का करने आया हू। मैं बहुत परेशान हूं, बहुत ही ज्यादा दुखी हू। किसी ओछे निन्दक ने मेरा और एक महिला का, जो हम दोनो को बहुत प्रिय है, एक व्यग्य-चित्र

बताता है। मैं अपना फ़र्ज़ समझता हूं कि आपको इस बात का यक़ीन दिला दूं कि इसमें मेरा कोई हाथ नहीं है... मैंने कोई बात ऐसी नहीं की, जिसकी वजह से इस क़िस्म का भोंडा मज़ाक़ किया जाता, बल्कि मेरा व्यवहार तो हमेशा वैसा ही रहा है जैसा कि किसी भी शरीफ़ आदमी का होना चाहिए।'

"कोवालेंको मुंह फुलाये चुप बैठा रहा। बेलिकोव ने कुछ देर इंतज़ार करने के बाद बड़ी धीमी, दुख भरी आवाज़ में फिर कहना शुरू किया –

"'मैं आपसे एक बात और भी कहना चाहता हूं। मैं कई साल से नौकरी कर रहा हूं और आप अभी नये आये हैं। एक अनुभवी सहयोगी की हैसियत से मैं आपको पहले से सचेत कर देना अपना कर्तव्य समझता हूं। आप साइकिल पर सवारी करते हैं। एक ऐसे व्यक्ति के लिए, जो नौजवानों को शिक्षा देता हो, मनोरंजन का यह तरीक़ा बहुत ही निन्दनीय है।'

"'क्यों?' कोवालेंको ने अपनी भारी आवाज़ में पूछा।

"'इसमें वजह बताने की कोई ज़रूरत नहीं, मिख़ाईल साविच; मैं समझता हूं कि यह तो बिल्कुल स्पष्ट है। अगर स्कूल के मास्टर साइकिल पर चढ़ने लगे, तो विद्यार्थियों के लिए सिर के बल चलने के सिवा और क्या बचता है? और फिर यह भी है कि चूंकि कभी बाक़ायदा इसकी इजाज़त नहीं मिली है, ऐसा करना ग़लत है। कल मैं तो दंग रह गया! और जब आपकी बहन को देखा, तब तो मुझे चक्कर आ गया। कोई युवती साइकिल पर चढ़े – यह तो बड़ी भयानक बात है!'

"'आप आख़िर चाहते क्या हैं?'

"'मैं सिर्फ़ आपको सचेत करना चाहता हूं, मिख़ाईल साविच। आप नौजवान हैं, अभी आपको बहुत दुनिया देखनी है। आपको अत्यधिक सतर्कता बरतनी चाहिए। आप इतने लापरवाह हैं, हद से ज़्यादा लापरवाह! आप कढ़ाईदार क़मीज़ें पहनते हैं, हमेशा हर तरह की किताबें उठाये सड़क पर चलते हैं, और अब तो आप साइकिल भी चलाने लगे हैं। हेडमास्टर साहब को ख़बर होगी कि आप और आपकी बहन साइकिल चलाते हैं, फिर बात स्कूल के संरक्षक के कानों तक पहुंचेगी और यह अच्छा नहीं है।'

"कोवालेंको ने गुस्से से लाल होते हुए कहा, 'अगर मैं और मेरी बहन

साइकिल चलाते हैं, तो इसमें किसी का क्या दखल? और जो कोई मेरे निजी मामलों में दखल देना चाहे, वह जहन्नुम में जाये।'

"बेलिकोव का चेहरा पीला पड़ गया और वह उठ खड़ा हुआ।

"'अगर आप मुझसे इस अदाज़ से बातचीत करेंगे, तो मैं और ज्यादा बात नहीं कर सकता,' उसने कहा। 'और मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि फिर कभी मेरे सामने अफसरों के बारे में इस तरह अपने विचार ज़ाहिर न कीजियेगा। हाकिमों का लिहाज़ ज़रूरी है।'

"कोवालेंको ने उसे नफरत से घूरते हुए पूछा, 'क्या मैंने हाकिमों के बारे में कोई बेजा बात कही है? बराय मेहरबानी आप मुझे छोड़ दें। मैं ईमानदार आदमी हूं और आप जैसे सज्जन से बातें करना पसन्द नहीं करता। मुझे चुगलखोरों से नफरत है।'

"बेलिकोव घबरा कर हड़बड़ी में कोट पहनने लगा। उसका चेहरा फक था, उसकी जिन्दगी में यह पहला मौका था कि किसी ने उसे इतनी सख्त बात कही हो।

"उसने कमरे से बाहर सीढ़ियों पर निकलते हुए कहा, 'आप चाहे जो कहें। मैं आपको सिर्फ इतनी चेतावनी देना चाहता हूं – मुमकिन है हमारी बातें किसी तीसरे आदमी के कानों में पड़ी हों और इसस बचने के लिए कि उन्हें ग़लत तरह से पेश किया जाये और कहीं कुछ हो न जाये, मेरी आपकी जो बातचीत हुई है, उसकी सूचना मुझे हेडमास्टर को देनी होगी मोटे तौर पर। यह करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं।

"'क्या? सूचना? जाओ... दे दो!'

"कोवालेंको ने उसकी गरदन पकड़ कर उसे धकेल दिया। बेलिकोव अपने रबर के ऊपरी बूटों के साथ खड़बड़ाता हुआ नीचे लुढ़क चला। ज़ीना काफ़ी ऊंचा और सीधा था लेकिन बेलिकोव सकुशल नीचे आ लगा, खड़े हो कर उसने अपनी नाक टटोली कि चश्मा सही सलामत है या नहीं। पर जिस वक्त वह सीढ़ियों पर लुढ़कता नीचे आ रहा था ठीक उसी वक्त वार्या दूसरी दो औरतों के साथ ड्योढ़ी में घुसी थी और वे नीचे खड़ी यह सब कुछ देख रही थीं। बेलिकोव के लिए यही बात सबसे अधिक भयानक थी। उसे यह गवारा होता कि उसकी गरदन टूट जाती या उसकी दोनों टांगें टूट जातीं बजाय इसके कि उसे इस हास्यजनक दशा में देखा जाता। अब सारे शहर में यह खबर फैल जायगी, हेडमास्टर के कानों तक

बात पहुंचेगी और फिर संरक्षक तक। हाय, कहीं कुछ हो न जाये! कोई एक और व्यंग्य-चित्र बना डाले और इस सब का नतीजा यह होगा कि वह नौकरी छोड़ने को बाध्य हो जायेगा...

"जब वह उठा, तो वार्या ने उसे पहचाना और उसकी हास्यजनक सूरत, उसका गिजगिजाया हुआ कोट और उसके रबर के ऊपरी बूट देख कर वह अपने को क़ाबू में न रख सकी और क़हक़हा मार कर हंस पड़ी। उसे गुमान भी नहीं था कि यह कैसे हुआ, उसका ख़्याल था बेलिकोव का पैर फिसल गया होगा।

"इस गूंजते हुए ज़ोरदार कहकहे ने शादी के प्रस्ताव का और बेलिकोव के जीवन का अंत कर दिया। उसने न यह सुना कि वार्या क्या कह रही है और न कुछ देखा। घर पहुंच कर उसने जो पहला काम किया, वह मेज पर से वार्या की तसवीर हटाना था। इसके बाद वह बिस्तर पर लेट गया और फिर कभी नहीं उठा।

"तीन दिन बाद अफ़ानासी मेरे पास आया और पूछने लगा, क्या डाक्टर को बुलाया जाये, क्योंकि मालिक बड़े अजब ढंग से व्यवहार कर रहे हैं। मैं बेलिकोव को देखने गया। वह चंदोवे के नीचे कम्बल ओढ़े खामोश लेटा हुआ था; कोई बात पूछने पर हां या ना भर कह देता। बस वह वहीं लेटा रहा और सर्द आहें भरता शराब की भट्ठी की तरह महकता अफ़ानासी मातमी सूरत बनाये, भवें ताने चारपाई के आस-पास चक्कर लगाता रहा।

"एक महीना गुज़रा और बेलिकोव मर गया। हम सब लोग उसके जनाज़े में गये। मेरा मतलब है वे तमाम लोग, जो दोनों स्कूलों और धार्मिक शिक्षालय से सम्बन्ध रखते थे। ताबूत में लेटे उसका चेहरा बहुत कोमल और आकर्षक और यहां तक कि हर्षमय भी मालूम पड़ता था मानो वह इस बात पर बहुत प्रसन्न हो कि आख़िरकार उसे एक ऐसे खोल में रख दिया गया है, जिसमें से उसे अब कभी बाहर नहीं निकलना पड़ेगा। हां, सचमुच उसने अपना आदर्श प्राप्त कर लिया था। और मानो उसके सम्मान में आकाश पर बादल छाये हुए थे, वर्षा हो रही थी और हम सब लोग रबर के ऊपरी बूट पहने हुए थे और छाते लगाये हुए थे। वार्या भी जनाज़े में थी और जब ताबूत क़ब्र में रखा गया, उसकी आंख से आंसू टपक पड़े। मैंने यह बात देखी है कि उक्राइनी औरतें या तो हंसती हैं या रोती हैं, बीच की स्थिति उन्हें मान्य नहीं।

दुनिया में अब कोई बदी बाकी नहीं रह गयी है और सब कुछ ठीक है। बायीं ओर, जहां गांव ख़त्म होता था, खुले खेतों का क्रम प्रारम्भ हो जाता था, जो सुदूर क्षितिज तक दिखाई दे रहा था; चांदनी में नहाये खेतों में भी हर चीज शान्त व स्थिर थी।

"हां, यही तो बात है," इवान इवानिच ने फिर कहा, "और हमारा शहरों में घुटे, संकीर्ण वातावरण में रहना, बेकार लेख लिखना, ताश खेलना — क्या यह सब भी खोल के भीतर रहना नहीं है? और निकम्मे लोगों, मुकदमेबाज बेवकूफों, फूहड़, काहिल औरतों के बीच सारी जिन्दगी बसर करना, बेकार बातें करना और सुनना — यह सब एक खोल ही नहीं, तो और क्या है? अगर आप सुनना चाहें, तो एक बहुत शिक्षाप्रद कहानी सुनाऊं।"

"नहीं, अब सोना चाहिए," बुरकिन ने कहा, "कल सुनाना!"

वे खलिहान के भीतर चले गये और भूसे पर लेट गये। कम्बल ओढ़ कर दोनों ऊंघ ही रहे थे कि बाहर किसी के हल्के-हल्के क़दमों की आहट सुनाई दी। कोई खलिहान के पास टहल रहा था, थोड़ी दूर चलता था, फिर रुक जाता था, और फिर वही हल्की पदचाप सुनाई पड़ने लगती थी। कुत्ते गुर्राने लगे।

"मावरा टहल रही है," बुरकिन ने कहा।

क़दमों की आहट फिर नहीं सुनाई दी।

"चुपचाप लोगों का झूठ बोलना देखते और सुनते रहना तथा फिर इस में झूठ को सहन करने के लिए बेवकूफ करार दिया जाना, अपमान और निरादर सहना और खुले आम यह कहने की हिम्मत न कर पाना कि मैं ईमानदार और आज़ाद लोगों के पक्ष में हूं, ख़ुद भी झूठ बोलना और मुस्कराना और यह सब कुछ सिर्फ रोटी के टुकड़ों की ख़ातिर, आरामदेह कोने, दो कौड़ी के तुच्छ पद के लिए — नहीं, नहीं, यों और जीना दुश्वार है!" इवान इवानिच ने करवटें बदलते हुए कहा।

"यह तो आपने बिल्कुल दूसरी ही बात छेड़ दी, इवान इवानिच," बुरकिन ने कहा, "चलिये अब सोया जाये।"

दस मिनट बाद बुरकिन सो गया। लेकिन इवान इवानिच लम्बी सांसें भरता और करवटें बदलता रहा, कुछ देर बाद वह उठ कर बाहर चला आया, और दरवाज़े के पास बैठकर उसने अपना पाइप सुलगा लिया।

गंध से सारा आंगन महक उठता मानो यह विश्वास दिलाते हुए कि रात्रि का भोजन भरपूर व स्वादिष्ट होगा।

डाक्टर द्मीत्री इग्नोनिच स्तार्त्सेव जैसे ही ज़ेम्स्त्वो के अस्पताल का चिकित्सक नियुक्त हुआ और 'स' से लगभग नौ मील पर स्थित द्यालिज में रहने के लिए आया, तभी उससे एक सुसंस्कृत व्यक्ति के नाते तूरकिन परिवार से अवश्य जान-पहचान करने के लिए कहा गया। एक दिन जाड़ों में उसकी भेंट इवान पेत्रोविच से सड़क पर करा दी गयी। मौसम, नाटक और हैजे के प्रकोप पर बात करने के बाद उसे निमंत्रण भी मिल गया। वसंत में एक धार्मिक त्योहार के दिन अपने रोगियों से निपट कर स्तार्त्सेव मनोरंजन की खोज में और साथ ही कुछ आवश्यक खरीददारी करने के लिए नगर की ओर चल पड़ा। पैदल, धीरे-धीरे आराम से चलता हुआ (उसने अभी अपनी घोड़ा-गाड़ी नहीं ली थी) व "जीवन घट से मधुरस पीने के पहले..." गुनगुनाता हुआ वह नगर की ओर चला।

नगर में उसने भोजन किया व पार्क में चहलक़दमी की तथा इवान पेत्रोविच के निमंत्रण की याद आते ही उसने तूरकिन परिवार के यहाँ जाने का निश्चय किया, ताकि वह देख सके कि वे किस प्रकार के लोग हैं।

"नमस्कार-दमस्कार!" ओसारे में ही इवान पेत्रोविच ने उसका स्वागत किया। "आप जैसे अतिथि को देख कर बहुत प्रसन्नता हुई। आइए अन्दर आइये, आपको अपनी पत्नी से मिलाऊं। मैं इनसे कह रहा था, वेरोच्का," पत्नी से परिचय कराते हुए उसने कहना जारी रखा, "काम के बाद अस्पताल में बैठे रहने का इन्हें कोई सांसारिक अधिकार नहीं है। यह इनका कर्तव्य है कि अपना खाली समय समाज को दें। क्यों, मैं ठीक कह रहा हूं न?"

"यहां बैठिये," अपने बगल की कुर्सी पर अतिथि को बिठाते हुए वेरा इयोसिफ़ोव्ना ने कहा। "आप मुझे रिझा सकते हैं, मेरे पति तो ओथेलो की तरह ईर्षालु हैं, पर हम उन्हें कुछ पता न चलने देंगे, है न?"

"मेरी प्यारी मुर्गी," इवान पेत्रोविच ने अपनी पत्नी के माथे को चूमते हुए, प्यार भरी आवाज़ में कहा। "आपने आने के लिए बहुत अच्छा मौक़ा चुना है," अपने अतिथि की ओर मुड़ते हुए वह बोला, "मेरी पत्नी ने अभी एक बहुत सुन्दरम उपन्यास पूरा किया है और आज वह हमें सुनायेंगी।"

एक विचारमग्न अतिथि ने, जिसके विचार कहीं दूर थे, बहुत ही धीरे से कहा—

"हां... सचमुच..."

एक घंटा बीत गया और एक और। पास में नगर के पार्क में आर्केस्ट्रा बज रहा था तथा कोई गायन मंडली गा रही थी। जब वेरा इओसिफ़ोव्ना ने अपनी कापी बन्द की, पांच-एक मिनट तक कोई कुछ नहीं बोला और सब 'लुचीनुश्का' लोक-गीत सुनते रहे, जो गायन-मंडली गा रही थी और गीत में वह अभिव्यक्त हुआ, जो उपन्यास में नहीं होता, पर जो जीवन की वास्तविकता है।

"क्या आप अपनी रचनाएं पत्रिकाओं में छपवाती हैं?" स्तार्त्सेव ने वेरा इओसिफ़ोव्ना से पूछा।

"नहीं," उसने उत्तर दिया, "मैं उन्हें कतई नहीं छपवाती। मैं उन्हें लिखती हूं और अपनी आलमारी में छिपा देती हूं। मैं उन्हें क्यों छपवाऊं? हमारे पास गुज़र करने के लिए काफ़ी है," सफ़ाई देते हुए उसने कहा।

और किसी कारणवश सब ने एक लम्बी सांस ली।

"और, किस्सो, अब तुम कुछ बजा कर सुनाओ हमें," इवान पेत्रोविच ने अपनी बेटी से कहा।

पियानो का ढक्कन उठा दिया गया, स्वरलिपि सामने लगी तैयार ही थी। येकातेरीना इवानोव्ना पियानो के पास बैठ गयी और उसकी उंगलियां पूरी शक्ति से कुंजियों पर पड़ीं, फिर एक बार, और फिर बार-बार पड़ती रहीं। उसके कंधे व छाती कांपने लगी और वह उसी आग्रह के साथ एक ही जगह पर प्रहार करती रही और लगता था जैसे वह पियानो की कुंजियों को उसके अन्दर ठूस देने पर तुली हुई हो। बैठक गूंज उठी, हर चीज़ थर्राने लगी—फ़र्श, छत, फ़र्नीचर... येकातेरीना इवानोव्ना ने एक मुश्किल धुन बजायी, जिसकी सारी दिलचस्पी उसकी जटिलता में ही थी। वह लम्बा और एकरूप था और सुनते-सुनते स्तार्त्सेव ने एक ऊंचे पहाड़ की चोटी से चट्टानों के लुढ़कने की कल्पना की। वे लुढ़क रही थीं, लुढ़कती रहीं, एक के बाद एक, और उसकी इच्छा हुई कि वे जल्दी से रुक जायें, यद्यपि येकातेरीना इवानोव्ना, जो अपने इस प्रयत्न से गुलाबी हो रही थी और जिसके बालों की एक लट उसके माथे पर लटक गयी थी, उसको

चकोरी भाषा में बोलता रहा, जो उसने मसखरेपन के लम्बे अभ्यास में अर्जित की थी और जो अब उसकी आदत बन गयी थी, जैसे "ब, सुन्दरम, मनच्छा नहीं, [illegible] के [illegible]..."

मगर मनोरंजन यहीं ख़त्म नहीं हुआ। जब खुश और सन्तुष्ट मेहमान अपने-अपने कोट और छड़ियां लेने ड्योढ़ी में आये, तो चौदह साल का नौकर पावा, जिसके बाल कटे हुए थे और चेहरा गदबदाया हुआ था, उनके इर्द-गिर्द दौड़-धूप करने लगा।

"हां तो, पावा, दिखा दे!" इवान पेत्रोविच ने कहा।

पावा ने मुद्रा बनायी, एक हाथ ऊपर उठाया और दुख भरे स्वर में कहा—

"बदनसीब कहीं की! बरबाद हो जा!"

और सब लोग हंस पड़े।

"दिलचस्प है!" डाक्टर ने घर से बाहर आते हुए सोचा।

एक रेस्तरां में जा कर उसने बीयर पी और फिर द्यालिज पैदल लौटा। रास्ते भर वह गुनगुनाता रहा—

तुम्हारी कोमल आवाज़ के
घुल जाने वाले स्वर...

पांच मील चलने के बाद, जब वह सोने के लिए बिस्तर पर पहुंचा, तो उसे ज़रा भी थकान महसूस नहीं हो रही थी, उल्टे उसे लग रहा था कि अभी और दस बारह मील वह सहर्ष चल सकता है।

"मनच्छा नहीं..." सोते-सोते उसे याद आया और वह हंस पड़ा।

२

स्तार्त्सेव बराबर तूरकिन परिवार के यहां जाने की सोचता रहा, किन्तु उसे अस्पताल में बहुत काम रहता और वह कभी एक-दो घण्टे ख़ाली नहीं निकाल पाता। साल भर इसी तरह काम और एकान्त में बीत गया। फिर एक दिन एक नीले लिफ़ाफ़े में उसके पास शहर से पत्र आया...

वेरा इओसिफ़ोव्ना को बहुत दिनों से सिरदर्द की शिकायत थी, किन्तु

हाल में विल्लो की रोज-रोज संगीतविद्यालय मे जाने की धमकियो से दर्द का दौरा जल्दी-जल्दी पडने लगा था। नगर के सब डाक्टर इलाज के लिए तूरकिन परिवार गये और अत मे स्तार्त्सेव का नम्बर भी आया। वेरा इग्रोसिफोव्ना ने उसे एक मार्मिक पत्र लिखा, जिसमे उससे आने को तथा उसका कष्ट दूर करने को कहा गया था। स्तार्त्सेव उसे देखने गया और उसके बाद आये दिन प्रायः ही तूरकिन परिवार के यहा जाने लगा सचमुच ही उसने वेरा इग्रोसिफोव्ना की पीड़ा कुछ कम करने मे सहायता की और सब मेहमानो को बता दिया गया कि वह बहुत बढिया, असाधारण, आश्चर्यजनक डाक्टर है। किन्तु अब वह तूरकिन के घर उसके सिरदर्द के कारण ही नही जाता था...

छुट्टी का दिन था। येकातेरीना इवानोव्ना पियानो का लम्बा व मुश्किल अभ्यास खत्म कर चुकी थी। वे सब भोजन के कमरे की मेज पर बैठे देर से चाय पी रहे थे। इवान पेत्रोविच कोई मज़ाकिया किस्सा सुना रहा था। दरवाजे की घंटी बजी; उसे खोलने और ड्योढी मे मेहमान का स्वागत करने जाना था। हलचल का फायदा उठाते हुए स्तार्त्सेव ने येकातेरीना इवानोव्ना के कान मे भावावेश से फुसफुसाया—

"भगवान के वास्ते मुझे और मत तडपाइये, मैं प्रार्थना करता हू। चलिये हम बाग़ मे चले!"

उसने अपने कंधे उचकाये जैसे वह आश्चर्य मे हो और समझी भी न हो कि वह क्या चाहता है, किन्तु उठी और बाहर चल दी।

"आप तीन-तीन, चार-चार घटे अभ्यास करती रहती हैं," उसके पीछे चलते हुए वह कह रहा था, "फिर आप अपनी मा के पास बैठ जाती हैं और आपसे बात करने का कोई मौका ही नही मिल पाता। मै प्रार्थना करता हूं मुझे केवल एक चौथाई घटे का समय दीजिये।"

शरद आ रहा था और पुराना बगीचा शात व उदास था, रास्ते पर गहरे रंग की पत्तियां छितरी हुई थी। दिन छोटे हो रहे थे. .

"मैंने आपको पूरे एक हफ़्ते से नही देखा है," स्तार्त्सेव बोलता गया, "काश आप मेरे इस कष्ट को समझ पाती! हम कही बैठ जायें। मुझे आपसे कुछ कहना है।"

बाग़ मे उनका एक प्रिय स्थान था—एक पुराने, घने, छायादार मेपल वृक्ष के नीचे एक बेंच। और अब वे उसी बेंच पर बैठ गये।

"आप क्या चाहते हैं?" येकातेरीना इवानोव्ना ने रूखी, उकताई आवाज़ में पूछा।

"मैंने आपको पूरे एक हफ़्ते से नहीं देखा है, आपकी आवाज़ सुने युग बीत गये। मैं शिद्दत से इंतज़ार करता हूं, मैं आपकी आवाज़ सुनने को प्यासा हूं। बोलिये!"

उसकी ताज़गी, उसकी आंखों के भोलेपन, मासूम गालों से वह अभिभूत हो गया। यहां तक कि उसकी पोशाक की चुन्नी में भी उसे कुछ मनोरम माधुर्य दिखाई दिया, उसकी सादगी और भोली छवि उसे बड़ी हृदयग्राही लगी। और इस भोलेपन के बावजूद वह उसे अपनी उम्र से अधिक बुद्धिमती और होशियार लगती थी। वह उससे साहित्य, कला या किसी अन्य विषय पर बात करता, लोगों और ज़िन्दगी के बारे में शिकायत करता, हालांकि कभी-कभी वह गंभीर बात के दौरान ही अचानक हंस पड़ती और घर भाग जाती। 'स' नगर की अन्य लड़कियों की तरह वह भी पढ़ती बहुत थी ('स' में लोग पढ़ते बहुत कम थे और स्थानीय पुस्तकालय के लोग कहा करते थे कि जवान यहूदियों और लड़कियों के लिए ही पुस्तकालय चल रहा है, नहीं तो यह बंद ही हो जाये); और इससे स्तार्त्सेव को बहुत ख़ुशी होती थी। हर बार जब वह उससे मिलता, तो बड़ी उत्सुकता से पूछता कि वह क्या पढ़ती रही है और जब वह बताती, तो मोहित बैठा सुना करता।

अब उसने पूछा, "पिछली भेंट के बाद इस हफ़्ते आप क्या पढ़ती रहीं? मुझे बताइये न!"

"मैं पीसेम्स्की की रचनाएं पढ़ती रही।"

"कौनसी?"

बिल्लो ने जवाब दिया, "'सहस्र आत्माएं'। पता है, पीसेम्स्की को नाम भी क्या मज़ेदार मिला है–अलेक्सेई फ़ेओफ़िलाकतिच!"

"अरे आप चल कहां दीं?" उसे एकाएक उठ कर घर की ओर जाते देख, स्तार्त्सेव घबरा कर चिल्लाया। "मुझे आपसे बहुत ज़रूरी बातें करनी हैं, मुझे कुछ बताना है आपको... मेरे साथ ठहरिये, अच्छा, चाहे पांच मिनट के लिए ही सही! मैं आपसे विनय करता हूं!"

... गयी मानो कुछ कहना चाहती हो, फिर बेढंगे तरीक़े से

"आप क्या चाहते हैं?" येकातेरीना इवानोव्ना ने रूखी, बाल आवाज में पूछा।

"मैंने आपको पूरे एक हफ्ते से नहीं देखा है, आपकी आवाज युग बीत गये। मैं विकलता से इंतज़ार करता हूं, मैं आपकी आवाज को प्यासा हूं। बोलिये!"

उसकी ताज़गी, उसकी आंखों के भोलेपन, मासूम गालों से अभिभूत हो गया। यहां तक कि उसकी पोशाक की चुन्नी में भी उसे मनोरम माधुर्य दिखाई दिया, उसकी सादगी और भोली छवि उसे हृदयग्राही लगी। और इस भोलेपन के बावजूद वह उसे अपनी उम्र अधिक बुद्धिमती और होशियार लगती थी। वह उससे साहित्य, कला किसी अन्य विषय पर बात करता, लोगों और जिन्दगी के बारे में शिकायत करता, हालांकि कभी-कभी वह गंभीर बात के दौरान ही अचानक हँस पड़ती और घर भाग जाती। 'स' नगर की अन्य लड़कियों की तरह वह भी पढ़ती बहुत थी ('स' में लोग पढ़ते बहुत कम थे और स्थानीय पुस्तकालय के लोग कहा करते थे कि जवान यहूदियों और लड़कियों के लिए ही पुस्तकालय चल रहा है, नहीं तो यह बंद ही हो जाये); और इससे स्तार्त्सेव को बहुत ख़ुशी होती थी। हर बार जब वह उससे मिलता, तो बड़ी उत्सुकता से पूछता कि वह क्या पढ़ती रही है और जब वह बताती, तो मोहित बैठा सुना करता।

अब उसने पूछा, "पिछली भेंट के बाद इस हफ्ते आप क्या पढ़ती रहीं? मुझे बताइये न!"

"मैं पीसेम्स्की की रचनाएं पढ़ती रही।"

"कौनसी?"

बिल्लो ने जवाब दिया, "'सहस्र आत्माएं'। पता है, पीसेम्स्की को नाम भी क्या मज़ेदार मिला है—अलेक्सेई फ़ेओफ़िलाक्तिच!"

"अरे आप चल कहां दी?" उसे एकाएक उठ कर घर की ओर जाते देख, स्तार्त्सेव घबरा कर चिल्लाया। "मुझे आपसे बहुत ज़रूरी बातें करनी हैं, मुझे कुछ बताना है आपको... मेरे साथ ठहरिये, अच्छा, चाहे पाँच [illegible] ही सही! मैं आपसे विनय करता हूं!"

[illegible] मानो कुछ कहना चाहती हो, फिर बेढंगे तरीके से

वृक्षों की कतारें थीं और उनमें से हर एक का साया रास्ते पर पड़ रहा था। अगणित पेड़ों की शाखें सफ़ेद पत्थरों पर छा रही थीं, हर चीज़ या तो सफ़ेद थी या काली। चारों ओर से ज़्यादा रोशनी मालूम हो रही थी। मैदान के पंखानुमा पत्ते रास्ते के पीछे रेत व क़ब्रों के सफ़ेद पत्थरों पर साफ़-साफ़ नज़र आ रहे थे। पत्थरों पर लिखे अक्षर स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। एकाएक स्तालेंव के मन में विचार आया कि शायद वह जीवन में पहली और आख़िरी बार यह सब देख रहा है—एक ऐसी दुनिया, जो दूसरी सभी दुनियाओं से भिन्न है, ऐसी दुनिया, जहां चांदनी भी ऐसी मधुर और मुलायम है मानो यह जगह उसका पालना हो, जहां जीवन नहीं है, बिल्कुल नहीं, लेकिन जहां हर स्याह पत्थर और हर समाधि में रहस्य की मौजूदगी प्रतीत होती है—रहस्य, जो शान्त, सुन्दर और शाश्वत जीवन की आशा दिलाता है। समाधियों के पत्थरों से, मुरझाते हुए फूलों से, पत्तों की पतझड़ वाली गंध से क्षमा, दुःख और शान्ति फूटती सी लगती है।

हर तरफ़ सन्नाटा था। सितारे मानो अतिशय विनम्रता में आसमान से झांक रहे थे और स्तालेंव की पगध्वनि उस शान्ति में असंगत और तीखी लगती थी। लेकिन जब गिरजाघर का घड़ियाल बजने लगा और वह अपने को मरा और हमेशा के लिए दफ़नाया हुआ मानने की कल्पना में तल्लीन हो गया, तभी उसे लगा मानो कोई उसे ताक रहा हो और क्षण भर के लिए उसके दिमाग़ में यह बात कौंध गयी कि यह शान्ति और स्तब्धता नहीं, बल्कि अस्तित्वहीनता की गंभीर उदासी, दबी घुटी निराशा है...

डिमैंटी का स्मारक छोटे से गिरजाघर की शक्ल का बना था और उसकी छत पर एक फ़रिश्ते की मूर्ति बनी थी। बहुत पहले कभी इतालवी संगीत-नाटक मंडली 'स' नगर में आयी थी और मंडली की एक गायिका यहीं मर गयी थी। यह स्मारक उसी की क़ब्र पर बनाया गया था। नगर में किसी को भी अब उसकी याद नहीं थी, पर गिरजाघर के द्वार पर लटकता दीपक चांदनी से ऐसे चमक रहा था मानो जल रहा हो।

आस-पास कोई नहीं दिखाई दे रहा था और यहां आधी रात में आयेगा भी कौन? लेकिन स्तालेंव इन्तज़ार करता रहा और मानो चांदनी से उसकी कामना जाग उठी हो, वह बेताबी से इन्तज़ार करता रहा और कल्पना करता रहा आलिंगनों की, चुम्बनों की... क़ब्र के पास वह लगभग

कागज निकाले और एक जर्मन कारिन्दे का बेहद भोंडी और हास्
रूसी भाषा में लिखा पत्र पढ़ कर सुनाने लगा।

बेमन से उसे सुनते हुए स्तार्त्सेव ने सोचा, "लगता है कि ये
उसे काफ़ी बड़ा दहेज भी देंगे।"

बिना सोये रात बिता देने के कारण वह भौंचक्का सा हो रहा
मानो उसे कोई मीठी नशीली चीज़ खिला दी गयी हो। एक तरफ़ त
दिल में एक स्वप्निल, आनन्दमय, गरमाहट देने वाली सुखद अनुभूति
रही थी और दूसरी ओर उसके दिमाग़ का कोई ठंडा भारी अंश तर्क
रहा था—

"संभल जाओ, समय रहते संभल जाओ! क्या वह तुम्हारे यो
है? यह लाड़ से बिगड़ी हुई, ज़िद्दी लड़की है, जो तीसरे पहर तक सो
है और तुम गिरजाघर के एक मामूली कर्मचारी के बेटे हो, जेम्स्त्वो
डाक्टर हो..."

उसने सोचा, "तो क्या हुआ?"

दिमाग़ तर्क कर रहा था, "इसके अलावा अगर तुमने उससे शा
की तो उसके संबंधी तुम्हें जेम्स्त्वो की डाक्टरी छोड़ कर नगर में आ क
बसने को बाध्य करेंगे।"

उसने सोचा "तो शहर में रहने में क्या हर्ज है? ये लोग उसे दहेज
देंगे ही और शहर में घर बसा लिया जायेगा..."

आख़िरकार येकातेरीना इवानोव्ना ऐसी तरोताज़ा और नाच की पोशाक
में भली लगती हुई निकली कि स्तार्त्सेव उसकी ओर सिर्फ़ ताकता रहा,
जी भर ताकता रहा और ताकते-ताकते ऐसा आनन्दविभोर हो उठा कि एक
शब्द भी बोल न सका; वह सिर्फ़ ताकता रहा और हंसता रहा।

येकातेरीना इवानोव्ना बाहर जाने के लिए तैयार थी और स्तार्त्सेव
को वहां ठहरने का अब चूंकि कोई काम न था, वह भी उठ खड़ा हुआ
और बोला कि अब मुझे भी घर जाना है, वक़्त हो गया, मेरे मरीज़
इन्तज़ार कर रहे होंगे।

इवान पेत्रोविच बोला, "अच्छा। जाना है तो जाइये। और, हां, आप
किट्टी को भी अपनी गाड़ी पर क्लब पहुंचाते जाइये।"

 अंधेरा था, बूंदा-बांदी हो रही थी और उन्हें पन्तेलिमोन की

बैठे गले की खासी की आवाज से ही पता चला कि गाडी कहा है। गाडी की छतरी तनी हुई थी।

इवान पेत्रोविच अपनी बेटी को गाडी पर चढाते हुए और उन दोनो से विदा लेते हुए बराबर मज़ाक़ करता रहा –

"अच्छा जाओ! नमस्कार-दमस्कार!"

वे रवाना हो गये।

"मैं कल कब्रिस्तान गया था," स्तार्त्सेव ने कहना शुरू किया, "कितनी निर्दय और अनुदार बात थी..."

"आप कब्रिस्तान गये थे?"

"हा, गया था और वहा करीब दो बजे तक आपकी राह देखता रहा। मैं इतना परेशान रहा..."

"अगर आप मज़ाक भी नही समझ पाते, तो परेशान हुआ कीजिये।"

येकातेरीना इवानोव्ना उसे इस सफलता के साथ मूर्ख बनाने और इतनी आतुरता से प्रेम किये जाने पर खुश हुई और जोर-जोर से हसने लगी। दूसरे ही क्षण वह घबड़ा कर जोर से चीख पडी, क्योकि घोडे एकदम क्लब की ओर मुड़े, जिससे गाड़ी हिचकोला खा गयी। स्तार्त्सेव ने येकातेरीना इवानोव्ना का आलिंगन किया। डर कर वह स्तार्त्सेव के सहारे टिक गयी और वह उसके होठों व ठुड्डी का चुम्बन करने और उसे अपने बाहुपाश मे कस कर जकड लेने से अपने को रोक न सका।

वह रुखाई से बोली, "बस, बहुत हुआ।"

क्षण भर बाद वह गाडी मे न थी, क्लब की तेज़ रोशनी से रौशन दरवाज़े पर खड़े पुलिस के सिपाही ने घिनौनी आवाज मे चिल्ला कर पन्तेलिमोन से कहा –

"अबे गधे, खड़ा क्या देखता है? आगे बढ़!"

स्तार्त्सेव घर गया, पर फौरन फिर वापस चल पडा। दूसरे के मागे हुए फ़ाक-कोट पहने और कड़ी सफेद टाई लगाये, जो एक ओर को फिसल गयी थी, वह क्लब की बैठक मे आधी रात को बैठा जोश से येकातेरीना इवानोव्ना से कह रहा था –

"जिन्होंने प्यार नही किया, वे कितना कम जानते हैं! मुझे तो लगता है कि आज तक कोई भी प्रेम का सच्चाई और सफलता के साथ वर्णन ही नहीं कर सका, वास्तव मे इस कोमल, सुखद, यातनापूर्ण भावना का

वर्णन कर सकना असंभव है और जिस किसी को इसका एक बार भी अनुभव हुआ है, वह फिर इस भावना को शब्दों में व्यक्त करने का प्रयत्न ही न करेगा। पर इस वर्णन की क्या जरूरत? यह अनावश्यक बकवास क्यों? मेरा प्रेम असीम है... मैं आपसे अनुरोध करता हूं, अनुनय-विनय करता हूं कि आप मेरी पत्नी बन जाइये!" अंत में स्तार्त्सेव ने कह ही दिया।

"द्मीत्री इयोनिच," बड़ी गंभीर बन कर येकातेरीना इवानोव्ना कुछ रुक कर बोली, "इस सम्मान के लिए मैं आपकी आभारी हूं, मैं आपका आदर करती हूं, किन्तु..." वह उठ कर खड़ी हो गयी और खड़ी-खड़ी ही बोलती रही, "लेकिन, मुझे माफ़ करना, मैं आपकी पत्नी नहीं बन सकती। हम लोग साफ़-साफ़ एक-दूसरे को समझें। आप जानते हैं, द्मीत्री इयोनिच, कि मुझे जीवन में कला से सबसे अधिक अनुराग है, मैं संगीत पर जान देती हूं, उसकी पूजा करती हूं। मैं अपना पूरा जीवन उसे अर्पित कर चुकी हूं। मैं संगीतज्ञ होना चाहती हूं, प्रसिद्धि, सफलता, स्वाधीनता चाहती हूं, और आप चाहते हैं कि मैं इस शहर में रहती रहूं, यहां की बेरौनक, व्यर्थ की जिन्दगी बसर करूं, जो मुझे कभी की असह्य हो चुकी है। बस किसी की बीवी होऊं, न, धन्यवाद! मनुष्य को जीवन में ऊंचा, ज्वलंत लक्ष्य बनाना चाहिए और गृहस्थ जीवन मुझे हमेशा के लिए बांध डालेगा, द्मीत्री इयोनिच!" (वह हल्का सा मुसकरायी, क्योंकि द्मीत्री इयोनिच का नाम लेते ही उसे बरबस अलेक्सेई फ़ेओफ़िलाक्तिच नाम की याद आयी।) "द्मीत्री इयोनिच! आप बड़े उदार, कृपालु, बुद्धिमान व्यक्ति हैं, बाक़ी सबसे आप बहुत अच्छे हैं..." यह कहते-कहते उसकी आंखों में आंसू भर आये, "मुझे हृदय से आपके साथ सहानुभूति है, लेकिन... मेरा ख़्याल है कि आप समझ सकेंगे..."

वह पलट कर बैठक से बाहर निकल गयी ताकि रो न दे।

स्तार्त्सेव का दिल अब घबराहट में नहीं फड़फड़ा रहा था। क्लब से निकल कर गली में आते ही उसने पहला काम यह किया कि टाई खोल कर अपना की ओर एक गहरी सांस ली। वह कुछ झेंपा हुआ था, कुछ उसके अहम् को ठेस पहुंची थी — उसने अस्वीकृति की कल्पना भी न की थी और वह विश्वास नहीं कर पा रहा था कि उसके सारे सपने, वासनाएं और आशाएं यूं इस अति साधारण ढंग से ख़त्म हो जायेंगी मानो शौकिया

और दुष्ट दार्शनिक सिद्धान्त बघारने लगते हैं कि उन्हें छोड़ कर सब ही बनना है। जब स्तार्त्सेव किसी उदार व्यक्ति से भी कहता कि शुक्र है कि इनसान तरक्की कर रहा है और एक वक्त आयेगा, जब हमें पासों की सजा से नजात मिल जायेगी और पासपोर्ट की झंझट न रहेगी, तो वह व्यक्ति स्तार्त्सेव की तरफ़ तिरछी निगाह से देखता, जिसमें अविश्वास भरा होता और पूछता, "तब फिर लोग सड़कों पर जिसको जी चाहेगा गला काट सकेंगे?" जब रात में कहीं खाना खाते या चाय पीते स्तार्त्सेव कहता कि हर व्यक्ति को काम करना चाहिए और काम के बिना जीवन असम्भव है, तो लोग इसे अपनी निन्दा समझ कर जोर-जोर से बहस करने लगते। साथ ही ये लोग न तो कुछ करते थे, बिल्कुल कुछ नहीं करते थे और न किसी चीज में दिलचस्पी लेते थे, जिससे इन लोगों से बात करने के लिए विषय ढूंढ़ निकालना असम्भव ही हो जाता था। और स्तार्त्सेव बातचीत से बचता, इन लोगों के साथ सिर्फ़ ताश खेलता या खाना खाता; अगर किसी परिवार में किसी घरेलू उत्सव में भाग लेने के लिए वह आमंत्रित होता, तो वह चुपचाप बैठा खाना खाया करता और अपनी प्लेट की ओर ही देखा करता। ऐसे मौक़ों पर होने वाली बातचीत हमेशा ग़ैरदिलचस्प, मूर्खतापूर्ण और अन्याय भरी ही होती और वह खीज कर उत्तेजित हो जाता; इसीलिए कि वह हमेशा चुप रहता और चूंकि वह अपनी प्लेट की ओर ही गंभीर शान्ति से घूरा करता, शहर में लोग उसे "घमण्डी पोलैण्डवासी" कहते, हालांकि पोलैण्डवासी वह कभी न था।

नाच-गाने और नाटक जैसे मनोरंजन से वह दूर भागता। हां, हर शाम तीन घण्टे ताश जरूर खेलता और इसमें पूरा मजा लेता। एक और मनोरंजन था, जिसमें उसे धीरे-धीरे अज्ञात रूप से आनन्द आने लगा था; यह था शाम को अपनी जेबों से दिन भर मरीजों से ली गयी फ़ीस के नोट निकालना—इनमें से कुछ पीले होते, कुछ हरे, कुछ से इत्र की खुशबू आती और कुछ से सिरके, मछली की चर्बी या लोहबान की—ये नोट कभी सत्तर रूबल तक पहुंच जाते। जब उसके पास कई सौ रूबल हो जाते, तो वह उन्हें 'म्युचुअल क्रेडिट सोसायटी' में जमा करा देता।

येकातेरीना इवानोव्ना के जाने के बाद वह तूरकिन परिवार में चार साल में केवल दो बार ही गया था और वह भी वेरा इओसिफ़ोव्ना के

ग्रामंत्रण पर, जिसके सिरदर्द का इलाज ग्रब भी चल रहा था। येकातेरीना इवानोव्ना हर गर्मी में अपने माता-पिता के पास ग्रा जाती, पर स्तार्त्सेव की उससे भेंट नही हुई ; ऐसा संयोग ही नही ग्राया।

ग्रौर ग्रब चार वर्ष गुज़र गये थे। एक दिन सवेरे, जब हवा मे स्थिरता ग्रौर गरमाहट थी, ग्रस्पताल में उसे एक पत्र मिला। वेरा इग्रोसिफोव्ना ने द्मीत्री इग्रोनिच को लिखा था कि उसे उसकी बहुत याद ग्राती है ग्रौर उसे ग्रवश्य ग्रा कर उससे मिलना चाहिए ग्रौर उसका कष्ट दूर करना चाहिए ; ग्रौर यह कि ग्राज उसका जन्म दिन भी है। पत्र के ग्रंत मे एक पंक्ति यह जुड़ी थी—"ग्रम्मा के ग्रनुरोध मे मैं भी ग्रपना ग्रनुरोध जोडती हूं। ये०।"

स्तार्त्सेव ने इस मसले पर गौर किया ग्रौर शाम को तूरकिन के यहां गया। इवान पेत्रोविच ने "नमश्कार-दमश्कार" कह कर उसका स्वागत किया। उसकी ग्रांखों मे मुस्कराहट थी।

वेरा इग्रोसिफोव्ना काफ़ी बूढी हो गयी थी ग्रौर उसके बाल सफ़ेद हो गये थे, उसने स्तार्त्सेव का हाथ दबा कर बनते हुए सास भरी ग्रौर कहा—

"डाक्टर, ग्राप मुझे रिझाना नहीं चाहते, ग्राप कभी हम से मिलने नहीं ग्राते, ग्रापके लिए तो मैं बूढ़ी हुई। पर यह लड़की भी ग्रा गयी है, शायद वह ज्यादा ख़ुशकिस्मत साबित हो।"

ग्रौर किल्लो? वह दुबली ग्रौर पीली पड गयी थी, ग्रधिक सुन्दर ग्रौर मनमोहक हो गयी थी। ग्रब वह येकातेरीना इवानोव्ना थी, महज किल्लो नही। उसकी ताजगी ग्रौर बच्चों जैसी निश्छलता की भावभगी खत्म हो चुकी थी। ग्रब हाव-भाव में, निगाह में कुछ नया, कुछ जो सहमा हुग्रा ग्रौर ग्रपराधी सा था, ग्रा गया था मानो तूरकिन परिवार मे वह ग्रब ग्रपनापन महसूस न करती हो।

ग्रपना हाथ स्तार्त्सेव के हाथ मे रखते हुए वह बोली, "हम लोगों को मिले युग बीत गया!" स्पष्ट था कि उसका दिल जोरो से धक-धक कर रहा था। उसके चेहरे पर ग्रांखें जमाये ग्रौर जिज्ञासा से उसे घूरते हुए वह बोली, "ग्राप कितने मोटे हो गये हैं! पहले से कुछ सावले पड गये हैं, पर ग्राम तौर पर ज्यादा परिवर्तन नहीं हुग्रा है।"

स्तार्त्सेव को वह ग्रब भी ग्राकर्षक, ग्रत्यन्त ग्राकर्षक लगी, पर उसमे

अब कहीं कुछ कमी या कुछ बेशी मालूम पड़ती थी। वह कह नहीं सकता था कि यह क्या है, पर यह कमी या बेशी उसे पहले जैसी भावना अनुभव करने से रोक रही थी। उसे उसके चेहरे का फीका रंग अच्छा नहीं लग रहा था, उसका नया भाव अच्छा नहीं लग रहा था, उसकी हल्की मुस्कान, उसकी आवाज अच्छी नहीं लग रही थी और थोड़ी देर में उसे उसकी पोशाक, कुर्सी, जिसपर वह बैठी थी, विगत में कुछ, जब वह उससे ब्याह करते-करते रह गया था, सब कुछ नापसन्द लगने लगा। उसे अपने वे आशाएं, सपने याद आये, जिन्होंने चार वर्ष पहले उसे उद्वेलित कर दिया था, और उसे कुछ अजीब सा लगने लगा।

चाय और केक आये। फिर वेरा इयोसिफ़ोव्ना ने ज़ोर से अपना उपन्यास पढ़ा, जिसमें उन बातों का वर्णन था, जो जीवन में कभी होतीं नहीं और स्तार्त्सेव उसके सफेद बालों से घिरे सुन्दर चेहरे को देखता हुआ रहा और इन्तज़ार करता रहा कि कब उपन्यास ख़त्म हो।

वह सोचता रहा था, "अनाड़ी वे नहीं होते, जो कहानी लिख नहीं पाते, बल्कि वे होते हैं, जो कहानियां लिखते हैं और इस बात को छिपा नहीं पाते।"

"अनच्छा नहीं," इवान पेत्रोविच ने कहा।

फिर येकातेरीना इवानोव्ना ने देर तक और जोर-शोर से पियानो बजाया और जब उसने बजाना ख़त्म किया, तो लोगों ने देर तक उसकी प्रशंसा की और उसे धन्यवाद दिया।

स्तार्त्सेव ने सोचा, "अच्छा ही हुआ कि मैंने इससे शादी नहीं की।"

येकातेरीना इवानोव्ना ने स्तार्त्सेव की ओर ताका, स्पष्ट था कि वह आशा कर रही थी कि वह उससे बगीचे में चलने को कहेगा पर वह कुछ नहीं बोला।

वह उसके पास आ पहुंची और बोली, "आइये हम बात करें। आप कैसे हैं? कैसा कट रहा है आपका वक्त? इन सारे दिनों मैं आपके बारे में ही सोचती रहती थी," घबराहट में उसने कहना जारी रखा, "मैं आपको पत्र लिखना चाहती थी, आपसे मिलने द्यालिज आना चाहती थी, यहां आने का तय भी कर लिया था, पर फिर मैंने इरादा बदल दिया – न जाने अब आप मेरे बारे में क्या सोचते होंगे। आज आपके आने की मुझे उत्कट प्रतीक्षा थी। चलिए बाग में चलें।"

वे बगीचे में पहुंचे और उसी पुराने मेपल वृक्ष के तले बेंच पर जा बैठे, जहां चार वर्ष पहले बैठे थे। अंधेरा हो गया।

"हां, अब बताइये, क्या हाल-चाल हैं आपके?" येकातेरीना इवानोव्ना ने पूछा।

"धन्यवाद, चल रहा है," स्तार्त्सेव ने जवाब दिया।

वह यह नहीं सोच पा रहा था कि और क्या कहे। दोनों चुप बैठे रहे।

अपने चेहरे पर हाथ रखते हुए येकातेरीना इवानोव्ना ने कहा, "मेरा मन घबरा सा रहा है, पर आप ख्याल न कीजियेगा। घर आ कर मैं इतनी खुश हूं, सब लोगों से मिल कर इतनी खुश हूं कि मैं इस खुशी की आदी नहीं हो पाती। क्या क्या यादें हैं! मैं सोचती थी, हम आप भोर होते तक बैठे बातें करते रहेंगे।"

स्तार्त्सेव को उसका चेहरा और चमकती आंखें दिखाई पड रही थीं और यहां अंधेरे में वह ज्यादा युवा लग रही थी, पहले वाला बच्चों जैसा भाव भी उसके चेहरे पर फिर से आ गया लगता था। सचमुच सरल जिज्ञासा से वह उसकी ओर ताक रही थी मानो और ज्यादा निकट पहुंच कर इस व्यक्ति को समझ लेना चाहती हो, उस व्यक्ति को, जो एक समय उससे इतनी लगन से, ऐसी सुकुमारता से, ऐसी निराशा से प्रेम करता था। उसकी आंखें उस प्रेम के लिए स्तार्त्सेव को धन्यवाद दे रही थीं। और उसे भी हर बात याद आ रही थी, छोटी से छोटी बात भी, कैसे वह कब्रिस्तान मे टहलता रहा था और कैसे भोर होने पर, थकान से चूर हो घर लौटा था, और एकाएक वह उदास हो गया और विगत पर उसे खेद होने लगा। उसकी आत्मा मे एक छोटा सा दीपक जल उठा। उसने पूछा–

"याद है आपको वह रात, जब मैं आपको क्लब छोड़ने गया था? पानी बरस रहा था, अंधेरा था..."

आत्मा मे दीपक प्रज्वलित हो उठा और अब उसे बात करने, अपने जीवन की नीरसता पर दुख प्रकट करने की लालसा हुई...

उसने गहरी सांस ले कर कहा, "आप मुझसे मेरी जिन्दगी के बारे मे पूछती हैं। हम यहां रहते ही कहां हैं? हम जिन्दा नहीं रहते। हम बूढ़े और मोटे होते जाते हैं, जीवन की रास हम ढीली छोड़ देते हैं।

दिन आते हैं, गुजर जाते हैं, जिन्दगी कट जाती है, धुंधली और बदरंग जिन्दगी, जिसपर विचारों और अनुभूतियों के प्रभाव ही नहीं पड़ते... दिन रुपया बनाने में गुजर जाते हैं, शाम मनहूसियों, गप्पियों, ताश खेलने वालों के साथ क्लब में; उनमें से हर एक से मैं नफ़रत करता हूं। यह जिन्दगी किस ढब की है, आप ही बताइये।"

"पर आपका काम! वह तो जीवन में एक पवित्र उद्देश्य है। आप अपने अस्पताल के बारे में इतने चाव से बातें किया करते थे। तब मैं अजीब ही लड़की थी, बहुत बड़ी संगीतज्ञ होने की कल्पना करती थी। महान पियानो वादिका बनने की कल्पना में रहती थी। आजकल सभी जवान लड़कियां पियानो बजाती हैं, मैं भी औरों की तरह पियानो बजाती थी। मुझमें कोई विशेषता नहीं थी। मैं वैसी ही संगीतज्ञ हूं जैसी माता जी उपन्यासकार हैं। हां, तब मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता था, पर बाद में, मास्को में, मैं अक्सर आपके बारे में सोचा करती थी। डाक्टर होने में कितना आनन्द है, दुखियों की सहायता करने, जनता की सेवा करने में कितना सुख है, कितना आनन्द है!" बड़े उत्साह से येकातेरीना इवानोव्ना ये बातें दोहरा रही थी। "जब मैं मास्को में आपके बारे में सोचती थी, तो आप मुझे आदर्श, महान व्यक्ति लगते थे..."

स्तार्त्सेव को याद आया कि हर शाम वह किस सन्तोष से अपनी जेब से नोट निकालता है और उसकी आत्मा का दीपक बुझ गया।

वह घर वापस जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। येकातेरीना इवानोव्ना ने उसके हाथ में अपना हाथ डाला और अपनी बात जारी रखी—

"जितने लोगों को मैं जानती हूं आप उन सबसे अच्छे हैं। हम लोग एक दूसरे से मिलते और बातचीत करते रहेंगे! क्यों, है न? मुझसे वादा कीजिये। मैं पियानो अच्छा नहीं बजा पाती, मुझे अब ऐसा कोई गुमान नहीं है और मैं कभी आपके सामने न पियानो बजाऊंगी और न संगीत की बात करूंगी।"

जब वे फिर घर पहुंचे और स्तार्त्सेव ने रोशनी में उसका चेहरा देखा और उसकी उदास, तीखी, कृतज्ञ निगाह देखी, जिससे वह उसकी तरफ़ ताक रही थी, उसका मन विकल हुआ और उसने एक बार फिर सोचा—

"अच्छा ही हुआ कि मैंने इससे शादी नहीं की।"

उसने जाने के लिए अनुमति मांगी।

पड़ता है। मोटा-ताज़ा, गदबदा घंटियाँ बजाते तीन घोड़ों गाड़ी पर बैठ कर जब गुजरता है और उतना ही लाल और मस्त पन्तेलेमोन कोचवान की सीट पर बैठा होता है, तो दृश्य देखने लायक होता है—पन्तेलेमोन की गरदन पर चर्बी की परतें लटकती होती हैं बाँहें सामने आगे बढ़ी हुई होती हैं मानो वे काठ की हों, सामने आनेवाले गाड़ीवानों पर वह चिल्लाता है—"हटो-ओ-ओ दा-आ-आहिने चलो!" और ऐसा लगता है कि गाड़ी मे कोई मनुष्य नहीं जा रहा बल्कि किसी मूर्ति की सवारी निकल रही है। उसकी डाक्टरी इस जोर शोर से चल रही है कि उसे दम मारने की फुरसत भी नहीं मिलती; पास देहात में उसने जागीर ले ली है, शहर में दो मकान खरीद लिये हैं और एक तीसरे पर निगाह लगाये हुए है, जो और भी बड़े मुनाफ़े का सौदा है। 'म्युचुग्रल क्रेडिट सोसायटी' के दफ्तर में जब कभी वह सुनता है कि कोई मकान नीलाम होने वाला है, वह बिना इजाजत लिये घर में घुस जाता है, अधनंगी औरतों, बच्चों का ख्याल किये बिना हर कमरे में जाता है और हर दरवाजे पर छड़ी खटखटाते हुए कहता है—

"यह पढ़ाई का कमरा है? यह क्या सोने का कमरा है? यह कौन सा कमरा है?" मौजूद औरतें और बच्चे उसकी ओर डर से देखते हैं।

वह बराबर हांफता रहता है और माथे से पसीना पोंछता जाता है।

उसके काम बहुत बढ़ गये हैं, फिर भी उसने ज़ेम्स्त्वो के डाक्टर का पद नहीं छोड़ा है, लालच के मारे वह जो कुछ जहां मिलता इकट्ठा करता जाता है। अब द्यालिज व शहर दोनों में सब लोग उसे इग्रोनिच कह कर पुकारते हैं—"इग्रोनिच कहां जा रहा है?" या "क्या इग्रोनिच को बुलाना ठीक न होगा?"

गरदन पर पड़ी चर्बी की परतों के कारण ही शायद उसकी आवाज तीखी हो गयी है। उसका मिज़ाज भी बदल गया है और अब वह चिड़चिड़ा और गुस्सैल हो गया है। मरीज देखते ही वह गुस्सा हो उठता है। अपनी छड़ी बेसब्री से फर्श पर ठोकता है और कर्कश आवाज में चिल्लाता है—

"मेहरबानी कर गैरज़रूरी बात न करे, मैं जो पूछता हूं, वही बतायें!"

वह अकेला रहता है, उसका जीवन नीरस है, उसे किसी चीज में दिलचस्पी नहीं है।

द्यालिज मे रहते हुए उसके जीवन मे अकेली खुशी, शायद आखिरी

रोमांस

१

चर्चा थी कि सागर तटबंध पर एक नया चेहरा नज़र आ रहा है कोई कुत्ते वाली महिला है। द्मीत्री द्मीत्रिच गूरोव के लिए याल्टा हर चीज़ जानी-पहचानी सी हो गयी थी, उसे यहां आये दो हफ़्ते हो गये थे, और अब वह भी नये आने वालों में दिलचस्पी लेने लगा था। वेर्ने मण्डप में बैठे हुए उसने तटबंध पर मंझले क़द की, हल्के सुनहरे बालों वाली एक महिला को घूमते देखा। वह बेरेट पहने थी और उसके पीछे-पीछे पोमेरानियन नस्ल का छोटा सा सफ़ेद कुत्ता दौड़ रहा था।

और फिर वह दिन में कई बार पार्क में और बग़ीचे में उसे दिखायी दी। वह अकेली ही घूमती होती—वही बेरेट पहने और उसी सफ़ेद कुत्ते के साथ। कोई नहीं जानता था कि वह कौन है, सो सब उसे बस कुत्ते वाली महिला ही कहते थे।

उसे देखकर गूरोव सोचता, "अगर इसका पति या कोई परिचित इसके साथ नहीं है, तो इससे जान-पहचान कर लेना बुरा नहीं होगा।"

वह अभी चालीस का भी नहीं हुआ था, पर उसके एक बारह साल की बेटी थी और दो बेटे हाई स्कूल में पढ़ रहे थे। उसकी शादी जल्दी ही कर दी गयी थी, जब वह विश्वविद्यालय में द्वितीय वर्ष का छात्र था, और अब उसकी पत्नी उससे ड्योढ़ी उम्र की लगती थी। वह रोबीली स्त्री थी—ऊंचा कद, सीधी देह, भौंहें काली सी; और वह स्वयं को चिंतनशील व्यक्ति कहती थी। वह बहुत पढ़ती थी, लिपि में कड़ियों का पालन नहीं करती थी, पर पति को द्मीत्री नहीं, बल्कि प्राचीन उच्चारण के हिसाब के अनुसार दिमीत्री कहती थी। गूरोव मन ही मन उसे अदूरदर्शी, संकीर्णमना, अनाकर्षक मानता था, उससे डरता था और इसलिए घर से बाहर रहना ही उसे ज़्यादा अच्छा लगता था। बहुत पहले से ही वह उससे बेवफ़ाई करने लगा था और अक्सर करता था। शायद यही कारण था

कि स्त्रियों के बारे में उसकी राय प्राय: सदा ही खराब होती थी, और जब उसके सामने उनकी चर्चा चलती तो वह उन्हें "घटिया नस्ल!" ही कहता था।

उसे लगता था कि उसे इतने कटु अनुभव हो चुके हैं कि वह अब स्त्रियों को जो चाहे कह सकता है। लेकिन इस "घटिया नस्ल" के बिना दो दिन भी जीना उसके लिए मुश्किल था। पुरुषों का साथ उसे नीरस लगता था, वह अजीब सा महसूस करता था, उनसे वह ज्यादा बातें नहीं करता था और उसका व्यवहार बड़ा औपचारिक सा होता था। पर स्त्रियों के बीच वह किसी तरह का संकोच नहीं अनुभव करता था, सदा बातचीत का विषय ढूंढ लेता था और उसका व्यवहार सहज-स्वाभाविक होता था; उनके साथ चुप रहना भी उसे आसान लगता था। उसके रूप-रंग में, उसके स्वभाव में, सारे चरित्र में ही कोई अनबूझ सम्मोहन था, जिससे स्त्रियां सहज ही उसकी ओर आकर्षित हो जाती थीं। उसे इस बात का आभास था, और स्वयं उसे भी कोई शक्ति उनकी ओर खींचे लिये जाती थी।

बारम्बार के सचमुच ही कटु अनुभवों से वह कब का यह समझ चुका था कि किसी भी स्त्री के साथ घनिष्ठता, जो आरम्भ में जीवन में एक सुखद विविधता लाती है और एक प्यारा सा, हल्का-फुल्का रोमांस ही लगती है, भद्र लोगों के लिए, विशेषतः मास्कोवासियों के लिए, जो स्वभाव से ही सुस्त और अनिश्चयी होते हैं, बड़ी मुश्किल समस्या बन जाती है, और अन्ततः स्थिति असह्य हो जाती है। लेकिन हर बार किसी रोचक स्त्री से भेंट होने पर पुराने अनुभव की यह कटुता जाने कहां खो जाती थी, और जीवन का आनन्द लेने को जी करता था, सब कुछ इतना सरल और रोचक लगता था।

और एक दिन जब वह पार्क में खाना खा रहा था, बेरेट पहने वह महिला धीरे-धीरे आकर बगल वाली मेज के पास बैठ गयी। उसके चेहरे के हाव भाव, उसकी चाल, उसकी पोशाक और केश विन्यास से गुरोव समझ गया कि वह सभ्रांत कुल की है, विवाहिता है, याल्टा में पहली बार आयी है, कि वह अकेली है और यहां उसका मन नहीं लग रहा है . याल्टा जैसी जगहों में बिगड़े चाल-चलन के जो किस्से सुनने में आते हैं, उनमें बहुत कुछ झूठ होता है। गुरोव उन्हें ओछी बातें समझता था और जानता था कि ऐसे किस्से ज्यादातर वही लोग गढ़ते हैं, जो खुशी

से प्यार करते, बशर्ते उन्हें ऐसा करना आता। पर अब, जब वह महिला उससे तीन कदम दूर बगल की मेज के पास आ बैठी, तो उसे सहज ही पायी जा सकने वाली विजय और पहाड़ों की सैरों के वे किस्से याद हो आये और उसके मन में एक प्रलोभन जागा, जल्दी से एक क्षणिक संबंध बना लेने का, एक अनजान स्त्री के साथ, जिसका वह नाम तक नहीं जानता, रोमांस का विचार उसके मनोमस्तिष्क पर हावी हो गया।

उसने कुत्ते को पुचकार कर बुलाया और जब वह उसके पास आ गया, तो उंगली हिलायी। कुत्ता गुर्राने लगा। गूरोव ने फिर से उंगली हिलायी।

महिला ने उसकी ओर देखा और तुरंत ही आंखें नीची कर लीं।

"काटता नहीं है," यह कहते हुए उसका चेहरा गुलाबी हो उठा।

"इसे हड्डी दे सकता हूं?" और जब महिला ने "हां" में सिर हिलाया, तो गूरोव ने नम्रता से पूछा, "आपको याल्टा आये काफ़ी दिन हो गये?"

"पांच दिन।"

"मैं तो दूसरा हफ़्ता काट रहा हूं"

कुछ देर तक वे चुप रहे।

"समय तो जल्दी ही बीत जाता है, पर यह जगह बड़ी उकताऊ है!" महिला ने गूरोव की ओर देखे बिना ही कहा।

"यह कहना भी एक फ़ैशन की ही बात है कि यह जगह बड़ी उकताऊ है। किसी कस्बे-वस्बे में सारी उम्र रहते हुए तो लोग ऊबते नहीं, पर यहां आते ही शिकायत करने लगते हैं, 'हाय, कितनी ऊब है!, हाय, कितनी धूल है!' कोई सुने तो सोचे जनाब सीधे ग्रेनादा से पधारे हैं!"

वह हंस दी। फिर दोनों अपरिचितों की ही भांति चुपचाप खाना खाते रहे, पर खाने के बाद वे साथ-साथ चल पड़े, और उनके बीच हल्की-फुल्की, हास्य-विनोद भरी बातचीत होने लगी। यह दो आज़ाद, संतुष्ट लोगों की बातचीत थी, जिनके लिए सब बराबर होता है–कहीं भी जाया जाये, कुछ भी किया जाये। वे घूम रहे थे और ये बातें कर रहे थे कि समुद्र पर कैसा विचित्र प्रकाश पड़ रहा है; जल का रंग कोमल नीला-फ़िरोज़ी .. चंद्र किरणें उस पर सुनहरी चादर बिछा रही थीं। वे दिन भर की गर्मी के बाद बड़ी उमस हो रही है।

गूरोव ने बताया कि वह मास्को का रहने वाला है, कि उसने भाषा और साहित्य की शिक्षा पायी थी, पर काम बैंक में करता है; कभी उसने ओपेरा में गाने की तैयारी भी की थी, पर फिर यह विचार छोड़ दिया, कि मास्को में उसके दो मकान हैं... और महिला ने गूरोव को बताया कि वह पीटर्सबर्ग में बड़ी हुई, पर विवाह उसका स० नगर में हुआ, जहां वह दो साल से रह रही है, कि वह और महीना भर याल्टा में रहेगी और फिर शायद उसका पति उसे लेने आयेगा—वह भी कुछ दिन आराम करना चाहता है। वह किसी भी तरह यह नहीं बता पा रही थी कि उसका पति कहां काम करता है—प्रदेश के सरकारी कार्यालय में या जिला कार्यालय में, और उसे स्वयं इस बात पर हंसी आ रही थी। गूरोव ने यह भी जाना कि उसका नाम आन्ना सेर्गेयेव्ना है।

होटल के अपने कमरे में लौटकर वह उसके बारे में सोचता रहा, कि कल शायद फिर उसकी भेंट होगी; ऐसा होना ही चाहिए। जब वह सोने के लिए लेटा, तो उसे ख्याल आया कि कुछ साल पहले तक वह महिला विद्यालय में ही पढ़ती थी, जैसे अब उसकी बेटी पढ़ रही है; उसे याद आया कि आन्ना सेर्गेयेव्ना की हंसी में, अपरिचित व्यक्ति के साथ बातें करने के उसके अंदाज़ में अभी कितना अल्हड़ता भरा संकोच है। निश्चय ही वह जीवन में पहली बार ऐसे वातावरण में अकेली थी, जहां दूसरों की नज़रें उस पर थीं, और मन में एक ही विचार छिपाकर पुरुष उससे बातें करते थे, और वह इस विचार को भांपे बिना नहीं रह सकती थी। गूरोव को उसकी सुकोमल गर्दन, उसकी हल्की सुरमई आंखें याद आईं।

"उसे देख कर मन में एक विचित्र दया सी उठती है," यह सोचते हुए वह सो गया।

२

उनकी जान-पहचान हुए एक हफ़्ता बीत गया। छुट्टी का दिन था। कमरों में उमस हो रही थी, बाहर धूल के सतून उठ रहे थे, टोपियां उड़-उड़ जाती थीं। दिन भर प्यास सताती रही। गूरोव बार-बार मण्डप में जाता और कभी आन्ना सेर्गेयेव्ना को सोडा वाटर ले देता, कभी आइसक्रीम खाने को कहता। समझ में नहीं आता था कि कहां जाया जाये।

शाम को जब हवा ज़रा थम गयी, तो वे घाट पर गये स्टीमर देखने।

घाट पर घूमने वालों की भीड़ थी; किसी के स्वागत के लिए लोग आए थे, उनके हाथों में गुलदस्ते थे। और यहां याल्टा की सजी-धजी भीड़ की दो विशिष्टताएं साफ देखी जा सकती थीं: अधेड़ महिलाएं युवतियों जैसे वस्त्र पहने थीं और बहुत से जनरल थे।

समुद्र में ऊंची लहरें उठती रही थीं, इसलिए स्टीमर देर से आया, जब सूरज डूब चुका था, और घाट पर लगने से पहले देर तक इधर-उधर मुड़ता रहा। आन्ना सेर्गेयेव्ना आंखों के आगे लार्नेट पकड़े स्टीमर और सवारियों को देखती रही, मानो किसी परिचित को ढूंढ रही हो, और जब वह गूरोव से कुछ कहती, तो उसकी आंखें चमकने लगतीं। वह बहुत बोल रही थी, और उसके प्रश्न असंबद्ध थे, वह कुछ पूछती और उसी क्षण यह भूल भी जाती कि क्या पूछा है; फिर भीड़ में उसने लार्नेट खो गया।

सजी-धजी भीड़ छंट रही थी और अब लोगों के चेहरे दिखाई नहीं दे रहे थे, हवा बिल्कुल थम गई थी। गूरोव और आन्ना सेर्गेयेव्ना यह प्रतीक्षा करते से खड़े थे कि स्टीमर से और तो कोई नहीं उतर रहा। आन्ना सेर्गेयेव्ना चुप थी, गूरोव की ओर नहीं देख रही थी, बस फूल सूंघे जा रही थी। गूरोव बोला—

"शाम को मौसम अच्छा हो गया है। अब कहां चलें? गाड़ी ले कर कहीं चला जाये?"

आन्ना सेर्गेयेव्ना ने कोई जवाब नहीं दिया।

तब गूरोव ने उसके चेहरे पर आंखें गड़ा दीं, सहसा उसे बाहों में भर लिया और उसके होंठों पर चुम्बन लिया, फूलों की सुगंध और नमी उसके नथुनों मे भर गई और उसने सहमी नज़र इधर-उधर दौड़ायी—किसी ने देखा तो नहीं?

"चलिये, आपके यहां चलें..." वह हौले से बोला।

और दोनो जल्दी-जल्दी चल दिये।

आन्ना सेर्गेयेव्ना के कमरे में उमस थी, इत्र की महक आ रही थी, जो उसने जापानी दुकान में खरीदा था। उसकी ओर देखते हुए गूरोव अब सोच रहा था, "जीवन में कैसी-कैसी मुलाकातें होती हैं!" उसके जीवन मे मृदु स्वभाव की बेफ़िक्र स्त्रियां आयी थी, जो प्रेम से हर्षविभोर होतीं, और क्षणिक सुख पा कर भी उसका आभार मानतीं; और उसकी पत्नी

जैसी स्त्रियां थी, जिनके प्रेम में कोई सच्चाई न थी, वे बड़बोली थी, बहुत बनती थी, उनका प्रेम हिस्टीरिया की तरह उठता था, और प्रेम में उनके हाव-भाव ऐसे होते थे, मानो यह प्रेम नहीं, मन की प्यास नहीं, बल्कि कोई अत्यधिक महत्वपूर्ण चीज है; दो-तीन अत्यन्त रूपवती स्त्रिया भी थीं, जिनके मन मे भावनाओं का तूफान नही उठता था, बस कभी-कभार चेहरे पर हिंस्र भाव झलक उठता, एक ऐसी हठपूर्ण इच्छा कि जीवन जो कुछ दे सकता है उससे अधिक खसोट ले, और ये स्त्रिया जवानी की दहलीज लाघ चुकी थीं, नखरे भरी थी, बुद्धिमान नही थी, सोचती-विचारती नही थी, पर अपना हक जमाती थी, और गूरोव जब उनसे प्रति उदा पड़ जाता, तो उनका रूप उसके मन मे घृणा जगाता और उनकी शमीज की लेस उसे मछली के शल्क जैसी लगती।

लेकिन यहां वही संकोच, अनुभवहीन यौवन की वही अनगढ़ता थी और एक अजीब सी अनुभूति थी। ऐसी सकपकाहट सी महसूस हो रही थी, मानो किसी ने सहसा दरवाजे पर दस्तक दी हो। जो कुछ घटा था, उसपर आन्ना सेर्गेयेव्ना की, इस "कुत्ते वाली महिला" की प्रतिक्रिया विचित्र थी–अत्यंत गम्भीर, मानो यह उसका पतन ही हो, ऐसा लग रहा था और यह अजीब, बेमौके की बात थी। उसका चेहरा मुरझा गया, गालो पर बाल लटक रहे थे, दुख मे डूबी वह विचारमग्न बैठी थी–ह्वह किसी प्राचीन चित्र में बनी पतिता सी।

"यह अच्छा नहीं हुआ," वह बोली। "अब आप ही मुझे बुरी समझेंगे।"

कमरे मे तरबूज रखा हुआ था। गूरोव ने एक फाक काटी और धीरे-धीरे खाने लगा। कम से कम आधा घटा चुप्पी छाई रही।

आन्ना सेर्गेयेव्ना के रोम-रोम से पाकदामनी का अहसास होता था, वह भोली, भद्र स्त्री थी, उसका जीवन अनुभव अभी थोड़ा ही था, वह बड़ी मर्मस्पर्शी लग रही थी। मेज पर जल रही एकमात्र मोमबत्ती की मद्धम रोशनी उसके चेहरे पर पड रही थी, स्पष्ट था कि उसके हृदय म घोर उथल-पुथल हो रही है।

"मैं तुम्हें बुरी क्यों समझने लगा?" गूरोव ने पूछा। "तुम खुद नही जानती हो क्या कह रही हो।"

"हे प्रभु, मुझे क्षमा करो।" आन्ना सेर्गेयेव्ना न कहा और उसकी आखें आंसुओ से भर आयी। "बड़ी भयानक बात है यह।"

"मैं क्या सफ़ाई दे सकती हूं? मैं नीच, पतिता हूं, मुझे अपने आप से नफ़रत हो रही है और सफ़ाई की तो मैं सोच ही नहीं सकती। मैंने पति को नहीं, अपने आप को धोखा दिया है। मेरा पति, हो सकता है, ईमानदार, अच्छा आदमी हो, पर वह अरदली है! मुझे नहीं पता वह क्या नौकरी करता है, कैसा काम करता है, पर मैं जानती हूं कि वह अरदली है। जब उससे मेरी शादी हुई थी, तो मैं बीस बरस की थी, मेरे मन में अथाह कौतूहल था, मैं अधिक अच्छे, सुंदर जीवन की कामना करती थी। मैं अपने आप से कहती थी कि कोई दूसरा जीवन भी तो है। मैं जीना चाहती थी, जीना, जीना... मैं कौतूहल के मारे मरी जा रही थी... आप यह सब नहीं समझते, पर ईश्वर क़सम, अपने आप पर मेरा बस नहीं रहा था, मुझे जाने क्या होता जा रहा था, मुझे कोई रोक नहीं सकता था, मैंने पति से कहा कि मैं बीमार हूं, और यहां चली आयी। यहां भी मैं बावली सी, नशे की सी हालत में घूमती रही... और अब मैं एक तुच्छ कुलटा औरत हूं, जिससे कोई भी नफ़रत कर सकता है।

गूरोव यह सुनते-सुनते उकता गया, उसे उसके भोलेपन पर, इस प्रायश्चित्त पर, जो इतना अप्रत्याशित और असामयिक था, खीझ हो रही थी। यदि आन्ना सेर्गेयेव्ना की आंखों में आंसू न होते तो वह सोच सकता था कि वह मज़ाक कर रही है या फिर नाटक। गूरोव धीरे से बोला –

"मेरी समझ में नहीं आता तुम चाहती क्या हो?"

उसने गूरोव की छाती में अपना मुंह छिपा लिया और उससे सट गयी।

"मुझ पर विश्वास कीजिये, भगवान के वास्ते," वह कह रही थी। "मुझे सच्चा, पाक जीवन ही अच्छा लगता है, पाप से मुझे घिन है। मैं ख़ुद नहीं जानती मैं क्या कर रही हूं। आम लोग कहते हैं – बुद्धि मारी गयी। अब मैं भी यह कह सकती हूं: शैतान ने मेरी बुद्धि भ्रष्ट कर दी।"

"बस, बस..." वह बुदबुदा रहा था।

वह उसकी निश्चल, भयभीत आंखों में आंखें डाल कर देख रहा था, उसे चूम रहा था, स्नेह भरे स्वर में धीरे-धीरे बोल रहा था, और वह धीरे-धीरे शांत हो गयी, फिर से उसका मन खिलने लगा; दोनों हंसने लगे।

फिर जब वे बाहर निकले, तो तटबंध पर एक भी व्यक्ति नहीं था। सरु वृक्षों से घिरा नगर निष्प्राण लग रहा था, परन्तु तट से टकराता समुद्र अभी भी शोर कर रहा था। लहरों पर एक बड़ी नाव डोल रही थी और उसपर उनींदा सा लैम्प टिमटिमा रहा था।

एक घोड़ा-गाड़ी लेकर वे ओरेयांदा चले गये।

"होटल मे मुझे तुम्हारा कुलनाम पता चला – बोर्ड पर लिखा है फोन दीदेरित्स। तुम्हारा पति क्या जर्मन है?" गूरोव ने पूछा।

"नहीं, उसका दादा शायद जर्मन था, खुद उसका बपतिस्मा रूसी आर्थोडोक्स चर्च मे ही हुआ था।"

ओरेयांदा मे वे गिरजे से थोड़ी दूर एक बेंच पर बैठ गये और चुपचाप नीचे समुद्र की ओर देखने लगे। भोर के कोहरे के पीछे से याल्टा का हल्का सा आभास ही होता था, पहाड़ो की चोटियो पर निश्चल सफेद बादल छाये हुए थे। पेड़ो की पत्तिया हिल-डुल नहीं रही थीं, टिड्डे झकार कर रहे थे और समुद्र का नीचे से आता एकसार शोर शांति की, चिर निद्रा की बात कह रहा था। जब यहां याल्टा और ओरेयादा नहीं थे, तब भी नीचे ऐसा ही शोर होता था, अब भी हो रहा है और जब हम नहीं रहेंगे तब भी यही उदासीन दबा-दबा सा शोर होता रहेगा। और इस स्थायित्व में, हम मे प्रत्येक के जीवन और मृत्यु के प्रति इस पूर्ण उदासीनता में ही शायद हमारी शाश्वत मुक्ति, पृथ्वी पर जीवन की निरंतर गति और निरंतर परिष्कार का स्रोत निहित है। अब यहा एक युवा स्त्री के बगल मे बैठे हुए, जो ऊषा वेला मे इतनी सुंदर लग रही थी, समुद्र, पर्वतों, बादलो और असीम आकाश के इस स्वार्गिक दृश्य पर विमुग्ध और शात गूरोव के मन में यह ख़्याल आ रहा था कि इस संसार मे सभी कुछ वस्तुतः कितना सुंदर है, उस सब के अतिरिक्त, जो हम अस्तित्व के सर्वोपरि ध्येय को भूल कर, अपनी मानव गरिमा को भूल कर सोचते और करते हैं।

कोई आदमी उनकी ओर आया, शायद चौकीदार रहा होगा, उनपर नज़र डाल कर वह चला गया। और यह छोटी सी बात भी इतनी रहस्यमय और सुंदर लग रही थी। फेओदोसिया से आता जहाज भोर के उजाले मे दिखाई दे रहा था, उसपर कोई बत्ती नहीं जल रही थी।

"घास पर ओस पड़ रही है," चुप्पी को तोड़ते हुए आन्ना सेर्गेयेव्ना ने कहा।

वे शहर लौट आये।

अब वे रोज़ाना दोपहर को सागर तट की सड़क पर मिलते, नाश्ता करते, खाना खाते, घूमते और सागर के मनोरम दृश्य का रसपान करते। आन्ना सेर्गेयेव्ना शिकायत करती कि उसे नींद ठीक से नहीं आती, कि उसके दिल में धुकधुकी होती रहती है। कभी डाह से और कभी इस भय से कि गूरोव के मन में उसके लिए पर्याप्त आदर भाव नहीं है, वह बार-बार एक से ही सवाल पूछती रहती। और अक्सर पार्क में या बगीचे में, जब आस-पास कोई न होता, तो गूरोव सहसा उसे अपनी ओर खींच लेता और ज़ोर से चुम्बन लेता। यह पूरी आरामतलबी, दिन-दहाड़े ये चुम्बन, जब यह डर लगा रहता कि कोई देख तो नहीं रहा, गर्मी और समुद्र की गंध, आँखों के सामने निरंतर झिलमिलाती सजीली पोशाकें और आराम से टहलते संतुष्ट लोगों की भीड़—इस सब ने मानो उसे एक नया आदमी बना दिया। वह आन्ना सेर्गेयेव्ना से यह कहता रहता कि वह कितनी प्यारी है, उसमें कितना सम्मोहन है; वह अपने प्रेम में अधीर हो उठा था, आन्ना सेर्गेयेव्ना से एक क़दम भी दूर न हटता; उधर वह प्रायः सोच में डूब जाती और उससे यह स्वीकार करने को कहती कि वह उसकी इज्जत नहीं करता, उसे ज़रा भी नहीं चाहता, कि उसे केवल एक तुच्छ औरत ही मानता है। प्रायः रोज़ ही शाम को वे घोड़ा-गाड़ी ले कर शहर से बाहर कहीं चले जाते, ओरेयांदा या झरने पर; और उनकी सैर बड़ी अच्छी रहती, मन में अनुपम, भव्य सौंदर्य की छाप लिये ही वे लौटते।

आन्ना सेर्गेयेव्ना के पति के आने की प्रतीक्षा थी, परंतु उसका पत्र आया, जिसमें उसने सूचित किया था कि उसकी आँखें दुख रही हैं, और पत्नी से अनुरोध किया था कि वह शीघ्रातिशीघ्र घर लौट आये। आन्ना सेर्गेयेव्ना जल्दी-जल्दी जाने की तैयारी करने लगी। वह गूरोव से कहती—

"अच्छा हुआ जो मैं जा रही हूं। मेरा भाग्य मुझे बचा रहा है।"

स्टेशन जाने के लिए उसने घोड़ा-गाड़ी ली, गूरोव उसे छोड़ने चला। दिन भर के सफ़र के बाद वे स्टेशन पर पहुंचे। जब दूसरी घंटी बज गयी, तो डिब्बे में बैठते हुए वह गूरोव से कह रही थी—

"एक बार और आपको देख लूं... एक बार और। बस।"

वह रो नहीं रही थी, पर इतनी उदास थी कि बीमार लगती थी और उसका चेहरा कांप रहा था।

... आती है, और ऐसे मौसम में जवानी के दिनों की याद
आती है। तुषार का परिधान ओढ़े चीड़ और लिंडन के पुराने वृक्ष सहृदय प्रतीत होते हैं और उत्तरवासी को वे दक्षिण के ताड़ वृक्षों से अधिक चित्ता-कर्षक लगते हैं और उनके निकट पर्वतों और समुद्र की बातें सोचने की इच्छा नहीं होती।

गुरोव मास्कोवासी था। जिस दिन वह मास्को लौटा, उस दिन मौसम बड़ा सुहावना था, हल्का पाला पड़ रहा था और जब उसने अपना मोटा ओवरकोट और गर्म दस्ताने पहने, और पेत्रोव्का सड़क का चक्कर लगाया, और जब शनिवार की संध्या को गिरजों के घंटों का कर्णप्रिय नाद सुना, तो हाल ही की यात्रा का और उन स्थानों का, जहां वह हो कर आया था, सारा आकर्षण फीका सा पड़ गया। वह धीरे-धीरे मास्को के जीवन में रमने लगा, अब वह हौके से तीन-तीन अख़बार पढ़ता और कहता कि मास्को के अख़बार तो वह उसूल के तौर पर नहीं पढ़ता। अब उसका मन रेस्तरां और क्लबों में, दावतों और जयंती समारोहों में जाने को करता, और उसके अहम् को इस बात से तुष्टि होती कि नामी वकील और कलाकार उसके यहां आते हैं, कि डाक्टर क्लब में प्रोफ़ेसर के साथ वह ताश खेलता है। अब वह छक कर अपने प्रिय व्यंजन खाता था...

उसे लगता था कि यही कोई एकाध महीना बीतते न बीतते आन्ना सेर्गेयेव्ना की याद धुंधली पड़ जायेगी और बस कभी-कभी ही हृदयग्राही मुस्कान लिये वह उसके सपनों में आया करेगी, जैसे उससे पहले दूसरी स्त्रियां आया करती थीं। लेकिन महीने से अधिक बीत गया था, जाड़ा अपने पूरे जोर पर आ गया था और उसकी स्मृति में सब कुछ इतना स्पष्ट था मानो वह कल ही आन्ना सेर्गेयेव्ना से बिछुड़ा हो। और यादें दिन पर दिन ताज़ी होती जा रही थीं। संध्या की नीरवता में जब उसे अपने कमरे में बच्चों की आवाज़ें सुनाई देतीं, या जब वह रेस्तरां में गीत-संगीत सुनता, या फिर चिमनी में से बर्फ़ीली आंधी की हू-हू आ रही होती, उसके स्मृति-पटल पर सहसा सब कुछ स्पष्टतः उभर आता: घाट पर वह शाम, और पहाड़ों में भोर का कोहरा, और फ़ेओदोसिया से आया जहाज़ और वे चुम्बन। वह कमरे के चक्कर काटता सब कुछ याद करता रहता और मुस्कराता जाता, और फिर यादें स्वप्नों का रूप ले लेतीं और कल्पना में अतीत उस सब के साथ घुल-मिल जाता, जो आगे होगा। आन्ना सेर्गेयेव्ना

... बेकार रात है, कम गरम, फीके दिन हैं! बदहवास हो, ताश खेलना, ठूस-ठूस कर खाना, शराबें पीना, वही [illegible] बातें करना। निरर्थक कामों और घिसी-पिटी बातों में ही सबसे ... समय बीत जाता है, शक्ति का बड़ा भाग खप जाता है, और अंततः ... जाता है एक तुच्छ, निरुत्साह जीवन, मात्र बकवास, और इससे ... का, कहीं भाग जाने का कोई रास्ता नहीं मानो तुम किसी ... में या जेल में बंद हो!

गूरोव सारी रात नहीं सोया, उसका मन विद्रोह करता रहा, सारा दिन उसके सिर में दर्द होता रहा। इसके बाद की रातों में उसे ठीक से नींद नहीं आयी, वह बिस्तर में बैठा सोचता रहता या ... से चक्कर काटता रहता। बच्चों से वह तंग आ गया था, बैंक ... तंग आ गया था, न कहीं जाने का मन करता था, न कुछ बा... करने का।

दिसम्बर में बड़े दिन की छुट्टियों में वह सफ़र को तैयार हो गया। पत्नी से कहा कि एक नौजवान के काम से पीटर्सबर्ग जा रहा है, और स० नगर को रवाना हो गया। किसलिए? वह स्वयं भी नहीं जानता था। वह बस आन्ना सेर्गेयेव्ना को देखना, उससे बात करना और हो सके तो उससे एकांत में मिलना चाहता था।

वह सुबह-सुबह स० नगर पहुंचा। होटल में उसने सबसे अच्छा कमरा लिया, जिसके फ़र्श पर मोटा कपड़ा बिछा हुआ था, मेज़ पर धूल से बदरंग हुआ क़लमदान था और क़लमदान पर हाथ में टोप उठाये घुड़सवार जड़ा हुआ था, घुड़सवार का सिर टूटा हुआ था। दरबान ने उसे आवश्यक जानकारी दी—फ़ोन दीदेरित्स पुरानी कुम्हारोंवाली गली में रहता है, अपने मकान में, जो होटल से ज्यादा दूर नहीं है, अच्छा ..., आदमी है, उसके पास अपने घोड़े हैं और शहर में सब उसे जानते ...

गूरोव धीरे-धीरे चलता हुआ पुरानी कुम्हारोंवाली गली में गया, वहां मकान ढूंढ लिया। मकान के ऐन सामने काफ़ी लंबा, बदरंग ..., जंगला था, जिस पर कीलें ठुकी हुई थीं।

"ऐसे जंगले की क़ैद से तो कोई भी भाग जाना चाहेगा," कभी खिड़कियों और कभी जंगले की ओर देखते हुए गूरोव को ख़्याल आ रहा था।

वह मन ही मन सोच रहा था—आज छुट्टी का दिन है, और शायद पति घर पर ही होगा। वैसे भी यों एकदम घर में घुस जाना और आन्ना सेर्गेयेव्ना को सकपका देना बड़ी बेहूदा बात होगी। अगर रुक्का भेजा जाये, तो वह भी शायद पति के हाथ लगेगा, और तब सारा मामला बिगड़ जायेगा। सबसे अच्छा यही होगा कि मौक़े का इंतज़ार किया जाये। सो वह सड़क पर चक्कर काट रहा था और इस मौक़े की ताक में था। उसने देखा कैसे एक भिखमंगा फाटक के अंदर गया और उसपर कुत्ते झपटे, फिर घंटे भर बाद उसे पियानो के स्वर सुनाई दिये, स्वर अस्पष्ट से थे। शायद आन्ना सेर्गेयेव्ना पियानो बजा रही थी। सहसा बड़ा फाटक खुला और उसमें से कोई बुढ़िया निकली, उसके पीछे वही सफ़ेद कुत्ता दौड़ता आ रहा था। गूरोव कुत्ते को बुलाना चाहता था, पर सहसा उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा और वह घबराहट के मारे यह याद नहीं कर पाया कि कुत्ते का नाम क्या है।

वह टहल रहा था और इस बदरंग जंगले के प्रति घृणा उसके मन में तीव्रतर होती जा रही थी। वह खिसियाता हुआ यह सोच रहा था कि आन्ना सेर्गेयेव्ना उसे भूल चुकी है और शायद किसी दूसरे के साथ मन बहला रही है, और एक युवा स्त्री के लिए, जिसे सुबह से शाम तक यह कमबख़्त जंगला देखना ही बदा है, ऐसा करना बिल्कुल स्वाभाविक ही है। वह होटल के अपने कमरे में लौट आया, बड़ी देर तक किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा बैठा रहा, फिर उसने खाना खाया, और फिर देर तक सोता रहा।

जागा तो बाहर अंधेरा हो चुका था। अंधेरी खिड़कियों पर नज़रें गड़ाये वह सोच रहा था, "क्या बेवकूफी है यह सब, नाहक की परेशानी। जाने क्यों सो भी लिया। अब रात को क्या करूंगा?"

वह अपने बिस्तर पर बैठा हुआ था, जिस पर अस्पतालों जैसा मटमैला सा कम्बल बिछा हुआ था, और झुंझलाता हुआ अपने आप को चिढ़ा रहा था—

"लो, मिल गयी कुत्ते वाली महिला... लो, हो गया रोमांस... बैठे रहो अब यहां।"

सुबह स्टेशन पर ही उसे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा इश्तहार दिखाई दिया था—'गेशा' का पहला प्रदर्शन होने वाला था। उसे यह याद आया और वह थियेटर को चल दिया।

पहले इंटरवल में पति सिगरेट पीने चला गया, आन्ना सेर्गेयेव्ना अपनी सीट पर ही बैठी रही। गूरोव उसके पास गया और बलात मुस्कराते हुए, कांपते स्वर मे बोला—

"नमस्ते।"

आन्ना सेर्गेयेव्ना ने नजरें उठा कर उसकी ओर देखा और उसका चेहरा फक रह गया, फिर एक बार और भयभीत नजर उसपर डाली, उसे अपनी आंखो पर विश्वास नही हो रहा था, उसने पखा और लार्नेट एक ही हाथ मे कस कर भीच लिये – प्रत्यक्षत. वह अपने आप को सभालने की कोशिश कर रही थी, ताकि बेहोश न हो जाये। दोनो चुप थे। वह बैठी हुई थी, गूरोव खडा था, उसके यो सकते मे आ जाने से भयभीत था। साजो के सुर मिलाने के स्वर आने लगे, सहसा सब कुछ बहुत भयानक लगने लगा, मानो चारों ओर से सब उनकी ओर ही देख रहे हों। तब वह उठी और तेज़ क़दमों से बाहर को चल दी, गूरोव उसके पीछे-पीछे चला, दोनों बेढंगे से चले जा रहे थे गलियारो मे, सीढियो पर कभी ऊपर, कभी नीचे; उनकी आखो के सामने भाति-भाति की वर्दियां पहने लोग, सब के सब बिल्ले लगाये, झिलमिला रहे थे, महिलाए झिलमिला रही थी और खूटियों पर टगे ओवरकोट भी। आर-पार की हवा आ रही थी और उसके साथ तम्बाकू की तेज़ गध। गूरोव का दिल बुरी तरह धड़क रहा था और वह सोच रहा था, "हे भगवान! किसलिए हैं ये लोग, यह आर्केस्ट्रा..."

और इसी क्षण उसे याद आया कि कैसे तब स्टेशन पर आन्ना सेर्गेयेव्ना को विदा करके उसने मन ही मन कहा था कि सब कुछ समाप्त हो गया, कि अब वे फिर कभी नही मिलेगे। लेकिन यह अंत अभी कितनी दूर है!

संकरी, अंधेरी सीढ़ी पर, जिस पर लिखा था 'एंफियेटर को रास्ता', वह थम गयी। अभी भी स्तब्ध सी, चेहरे का रग उड़ा हुआ, हांफती हुई वह बोली—

"आपने तो मुझे डरा ही दिया! हे भगवान, कितना डरा दिया! मेरे तो प्राण ही निकल गये। क्यो आ गये आप? क्यों?"

"पर, आन्ना, देखिये न..." वह जल्दी से, दबे-दबे स्वर मे बोला, "भगवान के वास्ते, समझने की कोशिश कीजिये..."

आन्ना सेर्गेयेव्ना उसकी ओर देख रही थी, उसकी आखो मे भय

"बहुत मुमकिन है कि वह पहला शो देखने आती हो," वह सोच रहा था।

थियेटर भरा हुआ था। छोटे शहरों के सभी थियेटरों की भांति यहां भी फ़ानूस के ऊपर धुंध छाई हुई थी, ऊपरी बाल्कनियों में ख़ूब शोर हो रहा था; पहली कतार के आगे शो शुरू होने से पहले स्थानीय छैले पीठ पर हाथ बांधे खड़े थे; यहां भी गवर्नर के बॉक्स में गवर्नर की बेटी गले में क़ीमती फ़र डाले बैठी थी, और स्वयं गवर्नर पर्दे की ओट में था, उसके बस हाथ दिखाई दे रहे थे; रंगमंच का पर्दा हिल रहा था, आर्केस्ट्रा के वादक देर तक अपने साजों के सुर मिलाते रहे। जब तक लोग अंदर आ-आ कर अपनी सीटों पर बैठते रहे, गूरोव की नज़रें उतावली सी इधर-उधर दौड़ती रहीं।

आन्ना सेर्गेयेव्ना भी आयी। वह तीसरी क़तार में बैठी, और जैसे ही गूरोव ने उसे देखा उसका दिल धक से रह गया और उसके लिए यह एकदम स्पष्ट हो गया कि अब सारे संसार में आन्ना सेर्गेयेव्ना ही उसके लिए सबसे बढ़ कर है, और कोई भी उसे इतना प्यारा नहीं है, उसके दिल के इतने निकट नहीं है। प्रांतीय भीड़ का ही एक अंग लगती, हाथ में भद्दा सा लार्नेट लिये यह छोटी सी नारी, जो किसी भी दृष्टि में असाधारण नहीं थी, वही अब उसका सर्वस्व थी, उसका दुख, उसकी ख़ुशियां, उसका एकमात्र सुख वही थी, बस इसी एक सुख की उसे कामना थी। और इस भोंडे से आर्केस्ट्रा के, घटिया वायलिनों के स्वर सुनते हुए वह सोच रहा था कि वह कितनी प्यारी है। वह सोच रहा था और सपनों में खोता जा रहा था।

आन्ना सेर्गेयेव्ना के साथ एक नौजवान भी अंदर आया और उसकी बग़ल में बैठ गया, छोटे-छोटे गलमुच्छों और ऊंचे क़द का झुके कंधों वाला यह आदमी हर क़दम पर सिर हिलाता, लगता था जैसे हर दम सलाम बजा रहा हो। शायद यह उसका पति ही था, जिसे तब याल्टा में आन्ना सेर्गेयेव्ना ने कटुता के आवेग में अरदली कह डाला था। सचमुच ही उसकी लंबी आकृति, उसके गलमुच्छों और हल्के से गंजेपन में अरदलियों जैसा जीहज़ूरी का भाव झलकता था, उसकी मुस्कान में मिठास घुली हुई थी, और कोट के फ़्लैप में किसी वैज्ञानिक संस्था का बिल्ला चमक रहा था, बिल्कुल अरदलियों के नंबर के बिल्ले जैसा।

पहले इंटरवल मे पति सिगरेट पीने चला गया, आन्ना सेर्गेयेव्ना अपनी सीट पर ही बैठी रही। गूरोव उसके पास गया और बलात मुस्कराते हुए, कांपते स्वर मे बोला–

"नमस्ते।"

आन्ना सेर्गेयेव्ना ने नजरें उठा कर उसकी ओर देखा और उसका चेहरा फका रह गया, फिर एक बार और भयभीत नजर उसपर डाली। उसे अपनी आंखों पर विश्वास नही हो रहा था, उसने पंखा और लार्नेट एक ही हाथ मे कस कर भींच लिये – प्रत्यक्षत. वह अपने आप को सभालने की कोशिश कर रही थी, ताकि बेहोश न हो जाये। दोनो चुप थे। वह बैठी हुई थी, गूरोव खड़ा था, उसके यो सकते में आ जाने से भयभीत सा। साजों के सुर मिलाने के स्वर आने लगे, सहसा सब कुछ बहुत भयानक लगने लगा, मानो चारों ओर से सब उनकी ओर ही देख रहे हों। तब वह उठी और तेज क़दमों से बाहर को चल दी; गूरोव उसके पीछे-पीछे चला, दोनों बेढंगे से चले जा रहे थे गलियारो मे, सीढियो पर कभी ऊपर, कभी नीचे; उनकी आखो के सामने भांति-भांति की वर्दियां पहने लोग, सब के सब बिल्ले लगाये, झिलमिला रहे थे, महिलाएं झिलमिला रही थीं और खूटियों पर टंगे ओवरकोट भी। आर-पार की हवा आ रही थी और उसके साथ तम्बाकू की तेज गंध। गूरोव का दिल बुरी तरह धड़क रहा था और वह सोच रहा था, "हे भगवान! किसलिए हैं ये लोग, यह आर्केस्ट्रा..."

और इसी क्षण उसे याद आया कि कैसे तब स्टेशन पर आन्ना सेर्गेयेव्ना को विदा करके उसने मन ही मन कहा था कि सब कुछ समाप्त हो गया, कि अब वे फिर कभी नही मिलेंगे। लेकिन यह अंत अभी कितनी दूर है।

संकरी, अंधेरी सीढ़ी पर, जिस पर लिखा था 'एंफिथियेटर का रास्ता', वह थम गयी। अभी भी स्तब्ध सी, चेहरे का रंग उड़ा हुआ, हांफती हुई वह बोली–

"आपने तो मुझे डरा ही दिया! हे भगवान, कितना डरा दिया! मेरे तो प्राण ही निकल गये। क्यों आ गये आप? क्यों?"

"पर, आन्ना, देखिये न..." वह जल्दी से, दबे-दबे स्वर मे बोला, "भगवान के वास्ते, समझने की कोशिश कीजिये..."

आन्ना सेर्गेयेव्ना उसकी ओर देख रही थी, उसकी आंखो मे भ

था, विनती थी, प्रेम था—वह टकटकी लगाये उसे देख रही थी, ताकि उसके चेहरे-मोहरे को अच्छी तरह याद कर ले।

"मैं इतनी दुखी हूं," उसकी बात अनसुनी करती हुई वह कहती जा रही थी। "मैं सारा समय आपके बारे में ही सोचती रही हूं, इन्हीं विचारों से मैं ज़िंदा हूं। और मैं भूल जाना चाहती थी, भूल जाना, पर आप क्यों चले आये, क्यों?"

ऊपर वाले छज्जे पर दो लड़के खड़े सिगरेट पी रहे थे और नीचे झांक रहे थे, लेकिन गूरोव को इस सब की कोई परवाह न थी, उसने आन्ना सेर्गेयेव्ना को अपनी ओर खींचा और उसके चेहरे, गालों, हाथों पर चुम्बनों की बौछार कर दी।

"यह आप क्या कर रहे हैं, क्या कर रहे हैं!" उसे परे हटाते हुए वह भयभीत सी कह रही थी। "हम दोनों तो पागल हो गये हैं। आप चले जाइये आज ही, चले जाइये अभी... भगवान के वास्ते, मैं हाथ जोड़ती हूं... कोई आ रहा है!"

सीढ़ियों पर कोई नीचे से ऊपर आ रहा था।

"आपको चले जाना चाहिए..." आन्ना सेर्गेयेव्ना फुसफुसाते हुए कहती जा रही थी। "सुना आपने, द्मीत्री द्मीत्रिच? मैं मास्को आऊंगी। मैं कभी सुखी नहीं थी, अब भी मैं सुखी नहीं और कभी सुखी नहीं हो पाऊंगी, कभी नहीं! मेरी वेदना मत बढ़ाइये! मैं ज़रूर मास्को आऊंगी। पर अब हमें बिछुड़ना होगा। मेरे प्यारे, मेरे अच्छे, विदा!"

उसने गूरोव का हाथ दबाया और जल्दी से नीचे उतरने लगी, मुड़-मुड़ कर उसकी ओर देखती जाती। उसकी आंखों से स्पष्ट था कि वह सचमुच ही सुखी नहीं है... गूरोव थोड़ी देर खड़ा रहा, नीचे से आती आवाज़ें सुनता रहा, और जब सब शांत हो गया, तो उसने अपना ओवरकोट ढूंढा और थियेटर से बाहर निकल गया।

४

और आन्ना सेर्गेयेव्ना उससे मिलने मास्को आने लगी। दूसरे-तीसरे महीने वह पति से कहती कि अपने स्त्री-रोग के मामले में प्रोफ़ेसर को दिखाने जा रही है और मास्को चली आती। उसका पति उस पर विश्वास

करता भी और नहीं भी। मास्को आ कर वह 'स्लाव बाजार' होटल में ठहरती और तुरंत ही लाल टोपी वाले दरबान के हाथ गूरोव को संदेशा भेजती। गूरोव उससे मिलने जाता, और मास्को में कोई यह बात नहीं जानता था।

जाड़ों की एक सुबह को इसी भांति वह उससे मिलने जा रहा था (दरबान पिछली शाम को आया था, पर वह घर पर नहीं था)। उसकी बेटी उसके साथ थी, जिसे वह रास्ते मे स्कूल छोड़ते जाना चाहता था। बड़े-बड़े फाहों के रूप मे हिम गिर रहा था। गूरोव बेटी से कह रहा था—

"देखो, इस समय तापमान शून्य से तीन डिग्री ऊपर है, फिर भी हिमपात हो रहा है। बात यह है कि पृथ्वी की सतह पर ही ज़रा गर्मी है, वायुमण्डल के ऊपरी स्तरों में तो तापमान बिल्कुल दूसरा है।"

"पिता जी, जाड़ों में बिजली क्यों नहीं कड़कती?"

उसने बेटी को इसका कारण भी समझाया। वह बोल रहा था और मन ही मन सोच रहा था कि अब वह आन्ना सेर्गेयेव्ना के पास जा रहा है, और कोई भी आदमी ऐसा नहीं जिसे यह पता हो, और शायद कभी पता होगा भी नहीं। उसके दो जीवन थे—एक प्रत्यक्ष जीवन, जिसे वे सब लोग देखते और जानते थे, जिन्हें इसकी आवश्यकता थी, जो सापेक्षिक सत्य और सापेक्षिक असत्य से पूर्ण था और उसके सभी परिचितों व मित्रों के जीवन जैसा ही था, और दूसरा जीवन सब की नज़रों से छिपा हुआ था। और परिस्थितियों का कुछ ऐसा विचित्र, शायद आकस्मिक ही संयोग था कि उसके लिए जो कुछ महत्वपूर्ण, रोचक और आवश्यक था, जिसमें वह सच्चा था और अपने आपको धोखा नहीं देता था, जो उसके जीवन का सारतत्व था, वह सब लोगों की नज़रों से छिपा हुआ था, गुप्त था; और वह सब, जो उसका झूठ था, वह नक़ाब था, जिसे वह अपनी सचाई छिपाने के लिए पहने रखता था, जैसे कि बैंक में उसकी नौकरी, क्लब में बहसें, उसकी "घटिया नस्ल", जयंतियों में पत्नी के साथ उसका भाग लेना—यह सब खुला था, प्रत्यक्ष था। और अपने जैसा ही वह औरों को भी समझता था, जो देखता उसपर विश्वास न करता, और सदा यही सोचता कि हर आदमी के सच्चे और सबसे रोचक जीवन पर रात्रि के अंधकार जैसी रहस्य की चादर पड़ी होती है। हर किसी का निजी अस्तित्व रहस्य के आवरण में छिपा रहता है, और शायद

इसीलिए हर सभ्य आदमी इस बात के लिए बेचैन रहता है कि निजी रहस्य का पर्दा उठाने की कोई कोशिश न हो।

बेटी को स्कूल छोड़ कर गूरोव 'स्लाव बाज़ार' को गया। होटल में नीचे ही अपना ओवरकोट उतारा, ऊपर गया और धीरे से दरवाजे पर दस्तक दी। आन्ना सेर्गेयेव्ना हल्के सुरमई रंग की उसकी मनपसंद पोशाक पहने थी, सफ़र और इंतज़ार से थकी वह पिछली शाम से उसकी राह देख रही थी। उसके चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और वह मुस्करा नहीं रही थी। गूरोव अंदर आया ही था कि आन्ना सेर्गेयेव्ना ने उसकी छाती में सिर छिपा लिया। वे मानो बरसों से न मिले हों—उनका चुम्बन इतना लंबा था।

"कहो, कैसी हो? क्या ख़बर है?" गूरोव ने पूछा।

"ठहरो, अभी बताती हूं... बोला नहीं जाता।"

उससे बोला नहीं जा रहा था, क्योंकि वह रो रही थी। गूरोव की ओर पीठ करके उसने आंखों पर रूमाल रख लिया।

"कोई बात नहीं, थोड़ा रो ले, मैं जरा देर बैठ लूं," यह सोचते हुए गूरोव आराम-कुर्सी पर बैठ गया।

फिर उसने घंटी बजायी और चाय मंगायी; और जब वह चाय पी रहा था, तब भी आन्ना सेर्गेयेव्ना खिड़की की ओर मुंह किये खड़ी रही... वह भावावेग से, इस शोकमय चेतना से रो रही थी कि उनका जीवन कितना दुखद है; वे छिप-छिप कर ही मिलते हैं, चोरों की तरह लोगों की नज़रों से बचते हैं! क्या उनका जीवन बरबाद नहीं हो गया है?

"बस, अब रहने भी दो!" गूरोव ने कहा।

उसके लिए यह स्पष्ट था कि उनके इस प्रेम का अंत शीघ्र ही नहीं होगा, जाने कब होगा। आन्ना सेर्गेयेव्ना का उससे लगाव बढ़ता जा रहा था, वह उसकी पूजा करती थी और उससे यह कहने की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती थी कि आख़िर कभी तो इस सब का अंत होना ही चाहिए; वह तो इसपर विश्वास ही न करती।

गूरोव ने उसके पास जा कर उसके कंधों पर हाथ रखे, ताकि उसे दुलारे, कोई ख़ुश करने वाली बात कहे, पर तभी उसकी नज़र शीशे में अपनी परछाईं पर पड़ी।

उसके बाल सफेद होने लगे थे। उसे यह अजीब लगा कि पिछले कुछ वर्षों में उस पर ढलती उम्र की छाप इतनी स्पष्ट हो गयी है, उसमें एक फीकापन आ गया है। वे कंधे, जिन पर उसके हाथ थे, अभी गर्म थे, कांप रहे थे। उसके मन में इस जीवन के प्रति सहानुभूति उमड़ रही थी, जिसमें अभी इतनी गर्माहट थी, जो अभी इतना सुंदर था, पर शायद जो उसके जीवन की ही भांति शीघ्र ही मुरझाने लगेगा, फीका पड़ने लगेगा। वह उससे इतना प्यार क्यों करती है? स्त्रियों ने सदा ही उसे वैसा नहीं समझा था जैसा वह वास्तव में था और वे स्वयं उससे नहीं, बल्कि उस व्यक्ति से प्रेम करती थीं, जो उनकी कल्पना की उपज होता और जिसे वे जीवन में इतनी अधीरता से ढूंढती थीं; और फिर जब उन्हें अपनी गलती का अहसास होता, तब भी वे उससे प्रेम करती रहतीं। और उनमें से कोई भी उसके साथ सुखी नहीं हो पायी थी। समय बीतता गया था, कइयों से उसका संबंध जुड़ा और टूटा, लेकिन एक बार भी उसने प्रेम नहीं किया था; जो कुछ हुआ था उसे कुछ भी कहा जा सकता था, बस वह प्रेम नहीं था।

अब कहीं जा कर, जब उसके बाल सफेद होने लगे थे, उसके मन में सच्चा प्रेम जागा था—जीवन में पहली बार।

आन्ना सेर्गेयेव्ना और वह एक दूसरे से प्रेम करते थे, बहुत ही करीबी, सगे लोगों की भांति, पति-पत्नी की भांति, स्नेही मित्रों की भांति; उन्हें लगता था कि स्वयं भाग्य ने उन्हें एक दूसरे के लिए बनाया है और यह बिल्कुल समझ में नहीं आता था कि वह क्यों शादीशुदा है और आन्ना सेर्गेयेव्ना क्यों विवाहिता है; ये मानो दो पक्षी थे, नर और मादा, जिन्हें पकड़ कर अलग-अलग पिंजरों में बंद कर दिया गया था। उन्होंने एक दूसरे को उन सब बातों के लिए क्षमा कर दिया था, जिनके कारण वे अपने अतीत पर लज्जित होते थे, वर्तमान में भी वे एक दूसरे को सब कुछ क्षमा करते थे और दोनों यह अनुभव करते थे कि उनके प्रेम ने उन्हें कितना बदल दिया है।

अतीत में उदासी के क्षणों में वह मन में जो भी तर्क आते उनसे अपने को शांत कर लेता था, परन्तु अब उसके मन में कोई तर्क नहीं आते थे, उसका हृदय गहरी सहानुभूति से भरा हुआ था, वह सच्चा और स्नेही होना चाहता था।

"बस करो, रानी," वह कह रहा था। "बहुत हो गया, अब बस करो... सुनो, अब हम बातें करते हैं, कोई उपाय सोचते हैं।"

फिर वे देर तक बातें करते रहे, सोचते रहे कि कैसे इस तरह छिप-छिप कर मिलने की, धोखा देने की, अलग-अलग शहरों में रहने और देर तक न मिलने की लाचारी से छुटकारा पा सकें। कैसे इन असह्य बंधनों से छूटें?

"कैसे? कैसे?" हैरान-परेशान सा वह पूछ रहा था। "कैसे?"

और लगता था कि बस थोड़ा सा जतन और करने पर वे कोई हल ढूंढ़ लेंगे, और तब नया, सुंदर जीवन आरम्भ होगा; और दोनों के लिए यह बिल्कुल स्पष्ट था कि मंज़िल अभी बहुत दूर है और सबसे जटिल, सबसे कठिन रास्ता तो अभी शुरू ही हुआ है।

१८६६

दुलहन

१

रात के दस बज चुके थे और बग़ीचे में पूरा चाद चमक रहा था। शूमिन परिवार मे दादी मार्फा मिखाइलोव्ना की आज्ञानुसार आयोजित शाम की प्रार्थना अभी-अभी खत्म हुई थी, और नादया को जो एक मिनट के लिए बग़ीचे मे निकल आयी थी, दिखाई पड रहा था कि खाने के कमरे में रात का भोजन परोसा जा रहा है। उसकी दादी फूली-फूली रेशमी पोशाक पहने मेज के चारों ओर मंडरा रही थी; पादरी अन्द्रेई नादया की मा नीना इवानोव्ना से बातें कर रहे थे। अब खिड़की के पीछे नीना इवानोव्ना बत्ती की रोशनी में न जाने क्यों नवयुवती सी दिख रही थी। मा के पास पादरी अन्द्रेई का लड़का अन्द्रेई अन्द्रेइच खडा हुआ ध्यान से बातचीत सुन रहा था।

बग़ीचे में ठंडक और ख़ामोशी थी, गहरी निश्चल छायाएं जमीन पर पसर रही थी। बहुत दूर से, शायद शहर के बाहर से मेढ़को के टरनि की आवाज आ रही थी। हवा मे मई की, सुहावनी मई की उमंग थी। ताजी हवा में सांस गहरी आती थी; और यह ख़्याल आता कि यहा नहीं, कहीं शहर से बहुत दूर, आसमान के नीचे, पेड़ों की चोटियो के ऊपर, खेतों और झाडियों मे एक विशेष वसन्ती जीवन – रहस्यमय और अत्यन्त सुन्दर, अमूल्य और पवित्र जीवन – आरम्भ हो रहा है जो कमजोर, पापी मानव की पहुंच से बाहर है। जाने क्यों रोने को जी चाहता था।

नादया तेईस साल की हो गयी थी; सोलह साल की उम्र से ही वह व्यग्रता के साथ शादी के सपने देख रही थी, और अब आखिरकार खाने के कमरे मे खड़े नौजवान अन्द्रेई अन्द्रेइच से उसकी सगाई हो चुकी थी। वह अन्द्रेई को पसन्द करती थी, शादी की तारीख़ सातवी जुलाई तय कर दी गयी थी लेकिन उसे कोई ख़ुशी नही महसूस हो रही थी

न रात में अच्छी तरह नींद आयी, उसकी उमंग गायब हो गयी थी... नीचे के रसोईघर की खुली खिड़की से छुरी-कांटों की खनखनाहट सुनाई पड़ रही थी, दरवाज़ा बराबर भड़भड़ा रहा था। मुर्गी भुनने और मसालेदार बेरी की महक आ रही थी। ऐसा मालूम होता था कि यह सब बिना बदले अनन्त काल तक ऐसे ही चलता रहेगा!

मकान से कोई निकला और ओसारे में खड़ा हो गया। यह अलेक्सान्द्र तिमोफ़ेइच या जैसा कि सब कोई उसे पुकारते थे, साशा था, जो मास्को से करीब दस रोज़ पहले आया था। बहुत दिन हुए नाद्या की दादी की दूर की कुलीन रिश्तेदार, छोटे क़द की, दुबली-पतली, रुग्ण विधवा मरीया पेत्रोव्ना दादी से मदद मांगने के लिए मिलने आया करती थी। उसी का एक लड़का था साशा। पता नहीं क्यों लोगों का कहना था कि वह एक अच्छा कलाकार था और जब उसकी मां मरी, तो दादी ने पुण्य के लिए मास्को के कोमिसारोव तकनीकी स्कूल में उसे भेज दिया। एक या दो साल बाद उसने अपना तबादला चित्रकला विद्यालय में करा लिया, जहां वह लगभग पन्द्रह साल रहा। अंत में वह वास्तु-शिल्प विभाग की अन्तिम परीक्षा मे किसी तरह उत्तीर्ण हो गया; उसने वास्तु-शिल्पी की हैसियत से कभी काम नही किया, बल्कि मास्को के एक लियो-छापेख़ाने मे नौकरी कर ली। वह क़रीब-क़रीब हर गर्मी में आम तौर से काफ़ी बीमार हो कर दादी के यहा आराम करने और स्वास्थ्य-लाभ के लिए आता था।

गले तक बटन लगाये वह एक लम्बा कोट और पुरानी सी किरमिच की पतलून पहने हुए था, जिसके पायंचों के किनारों मे छूंछके निकल रहे थे, और उसकी कमीज पर इस्त्री नही थी। उसके चेहरे पर ताज़गी नहीं थी। वह दुबला, बड़ी-बड़ी आंखों, लम्बी हड्डीली उंगलियों और दाढ़ी वाला, सांवले रंग का, परन्तु सुन्दर युवक था। शूमिन परिवार में उसे लगता जैसे वह अपने ही लोगों के बीच है। उसके ठहरने का कमरा भी यहां साशा का कमरा ही कहलाता था।

ओसारे से उसने नाद्या को देखा और उसके पास चला गया।

"यहां बहुत सुहावना है," उसने कहा।

"हां, बहुत सुहावना है, तुम्हें पतझड़ तक यहां ठहरना चाहिए।"

"हां, लगता है ठहरना ही पड़ेगा। मैं शायद सितम्बर तक यहां ठहरूंगा।"

वह अकारण हंसा और उसके बगल में बैठ गया।

"मैं यहां बैठी मा को देख रही हूं," नाद्या ने कहा। "यहां से वह बहुत ही युवा मालूम पड़ रही है। यह ठीक है कि मेरी मा मे कमजोरियां हैं," उसने जरा रुक कर आगे कहा, "मगर फिर भी वह अनूठी औरत है।"

"हां, वह बहुत अच्छी है..." साशा ने सहमति प्रकट की। "अपनी तरह से तुम्हारी मा बहुत अच्छी और दयालु है, लेकिन... मैं कैसे समझाऊं? मैं आज सवेरे तड़के रसोईघर मे गया था और मैंने वहां चार नौकरों को फ़र्श पर सोते देखा, बिना बिस्तर, बिछाने के लिए सिर्फ़ चिथड़े... वदबू, खटमल, तिलचट्टे... बिल्कुल बीस साल पहले की तरह, जरा भी बदले बिना। दादी को दोष नही देना चाहिए, वह बुड्ढी हैं; लेकिन तुम्हारी मा, जिन्हे फ्रेंच भाषा आती है और जो नाटकों में भाग लेती हैं... उन्हे तो समझना चाहिए।"

साशा की आदत थी कि बोलते समय सुनने वाले की ओर दो लंबी, पतली सी उंगलियां उठाया करता था।

"यहां मुझे हर चीज़ बड़ी अजीब लगती है," उसने कहा। "मैं इसका आदी नही हू-कोई कभी काम नही करता है। तुम्हारी मां रानी की तरह टहलने के अलावा कुछ नही करती हैं, दादी भी कुछ नही करती हैं और न तुम। और तुम्हारा वह मंगेतर, वह भी कुछ नही करता है।"

नाद्या पिछले साल यह सब कुछ सुन चुकी थी और उसे लगता था कि दो साल पहले भी उसने यही सब सुना था। नाद्या को पता था कि साशा सिर्फ़ इसी तरह सोच सकता है। एक वक़्त था कि जब ये बाते नाद्या को अच्छी चुहल लगती थीं, लेकिन अब किसी वजह से उसे चिढ़ लग रही थी।

"यह पुराना पचड़ा है, मैं इसे सुनते-सुनते ऊब गयी हूं," नाद्या ने उठते हुए कहा। "क्या तुम कोई नयी बात नही सोच सकते?"

वह हंसा और उठ खड़ा हुआ, और दोनों घर मे वापस चले गये। ख़ूबसूरत, लम्बी और छरहरी वह साशा के बगल मे चल रही थी और बहुत सजी-धजी, बहुत हृष्ट-पुष्ट लग रही थी। उसे ख़ुद इस बात का अहसास था और उसे साशा के लिए अफ़सोस व न जाने क्यों कुछ झेंप भी लग रही थी।

"तुम बहुत बेकार बातें करते हो," उसने कहा। "देखो, तुमने अभी मेरे अन्द्रेई के बारे में कहा है, लेकिन तुम उसे ज़रा भी नहीं जानते हो।"

"मेरा अन्द्रेई... तुम्हारे अन्द्रेई की चिन्ता नहीं, मुझे तुम्हारी जवानी की फ़िक्र है।"

जब वे हाल में पहुंचे, उस वक़्त सब खाने के लिए बैठ ही रहे थे। नाद्या की दादी—दुहरे बदन की, मोटी भौंहों और मूछों वाली असुन्दर बूढ़ी औरत ज़ोर से बात कर रही थी। दादी की आवाज़ और बात करने के ढंग से ज़ाहिर होता था कि घर की असली मालकिन वही हैं। बाज़ार में कई दुकानें उनकी थीं, और खम्भों और बग़ीचे वाला मकान भी उन्हीं का था। लेकिन हर रोज़ सवेरे वह रो-रो कर भगवान से प्रार्थना करतीं कि भगवान सर्वनाश से उनकी रक्षा करे। उनकी बहू, नाद्या की मां गेहुएं रंग की नीना इवानोव्ना कमर पर कसी पोशाक पहने, बिना कमानी का चश्मा लगाये और सब उंगलियों में हीरे की अंगूठियां पहने हुए थी; पादरी अन्द्रेई, पोपले और दुबले, जो हमेशा ऐसे लगते थे जैसे कोई मज़ाकिया बात कहने जा रहे हों, और उनका लड़का अन्द्रेई अन्द्रेइच—नाद्या का मंगेतर—तगड़ा, ख़ूबसूरत, घुंघराले बालों वाला नौजवान, जो एक अभिनेता या कलाकार ज्यादा लगता था, ये तीनों सम्मोहन-विद्या के बारे में बातें कर रहे थे।

'तुम यहां एक हफ़्ते में भले-चंगे हो जाओगे," दादी ने साशा से कहा। "लेकिन तुम्हें ज्यादा खाना चाहिए। जरा अपनी ओर तो देखो," उन्होंने आह भरी, "क्या शक्ल बना रखी है। आवारा पुत्र हो न..."

"कुकर्म में अपनी संपत्ति उड़ा दी... और कंगाल हो गया..." पादरी अन्द्रेई ने धीरे-धीरे बोलते हुए बाइबल के शब्द कहे। उनकी आंखें हंस रही थीं।

"मैं अपने पिता को प्यार करता हूं," अन्द्रेई अन्द्रेइच ने अपने पिता का कन्धा छूते हुए कहा।

किसी ने कुछ नहीं कहा। साशा एकाएक हंसा और उसने नेपकिन से अपने ओठ दबा लिये।

"तो आपको सम्मोहन में विश्वास है?" पादरी अन्द्रेई ने नीना इवानोव्ना से पूछा।

छा गयी। सिर्फ कभी-कभी नीचे साशा के कमरे से खांसने की गहरी आवाज आती थी।

२

करीब दो बजे होंगे जब नाद्या जग गयी, पौ फटने लगी थी। दूर चौकीदार की लाठी की आवाज सुनाई पड़ रही थी। नाद्या को नींद नहीं आ रही थी, बिस्तर जरूरत से ज्यादा मुलायम जान पड़ रहा था। गत कई रातों की तरह मई की इस रात को भी वह बिस्तर में बैठ गयी और विचारों में खो गयी। ये विचार पिछली रात की ही तरह एक ही जैसे और निरर्थक थे और उसका पीछा नहीं छोड़ रहे थे। अन्द्रेई अन्द्रेइच का ख्याल आया कि किस तरह वह नाद्या से मिलने-जुलने लगा और फिर उससे शादी का प्रस्ताव रखा, और कैसे नाद्या ने वह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और बाद में धीरे-धीरे इस अच्छे और चतुर आदमी की कद्र करने लगी। लेकिन जब शादी को महीना भर रह गया था, तो न मालूम क्यों वह डर और घबराहट महसूस करने लगी थी, जैसे कि उसपर कोई अनजान बोझ पड़ने वाला हो।

"ठक-ठक, ठक-ठक..." चौकीदार की अलसायी आहट सुनाई पड़ रही थी, "ठक-ठक... ठक-ठक..."

पुरानी बड़ी खिड़की से बगीचा और उसके पीछे फूलों से लदी बकाइन की झाड़ियां, ठंडी हवा में उनींदी और अलसायी सी दिख रही थीं। और एक सफ़ेद घना कुहासा हौले-हौले बकाइन की झाड़ियों पर छाता जा रहा था मानो उन्हें अपने दामन में समेटने चला हो। दूर पेड़ों से उनींदे कौवों की आवाज सुनाई पड़ रही थी।

"हे ईश्वर, क्यों मेरा दिल इतना भारी हो रहा है?"

क्या शादी से पहले सब लड़कियां ऐसा ही महसूस करती हैं? कौन जाने? या यह साशा का प्रभाव है? लेकिन साशा तो बरसों से उन्हीं पुरानी बातों को बराबर दुहरा रहा है मानो रटी हुई हों। और जब भी कुछ कहता है, तो बहुत भोला और अजीब लगता है। मगर वह साशा का विचार अपने दिमाग़ से निकाल क्यों नहीं पा रही? क्यों?

चौकीदार बहुत देर पहले ही गश्त ख़त्म कर चुका था। पेड़ों की चोटियों पर और खिड़की के नीचे चिड़ियों ने चहचहाना शुरू कर दिया

समझने में असमर्थ और अयोग्य है। इससे पहले कभी उसने यह बात महसूस नहीं की थी। इस एहसास से वह डर गयी, उसे कहीं छिपने की इच्छा हुई; और वह अपने कमरे में चली गयी।

दो बजे सब खाना खाने बैठे। आज बुध यानी व्रत का दिन था और दादी के खाने मे बिना गोश्त का शोरबा और दलिये के साथ मछली परोसी गयी।

दादी को चिढ़ाने के लिए साशा बिना गोश्त का और गोश्त का शोरबा दोनो खा रहा था। वह सारा वक़्त मज़ाक़ करता रहा। लेकिन उसके लतीफ़े लम्बे और हमेशा नैतिकता गर्भित होते थे और बिल्कुल पुरमज़ाक़ नही मालूम पड़ते थे; कोई हंसी की बात कहने के पहले वह अपनी दो लम्बी, हड्डीली और निर्जीव सी उंगलियां उठाता और तभी यह बात याद आती कि वह बहुत बीमार है और शायद ज्यादा दिन जिन्दा न रहे, और इतना दुःख मन में उमड़ पड़ता कि रोना आ जाता।

भोजन के बाद दादी अपने कमरे मे आराम करने चली गयीं। नीना इवानोव्ना थोड़ी देर पियानो बजाती रही और फिर वह भी उठ कर कमरे के बाहर चली गयी।

"ओह, प्यारी नाद्या," साशा ने खाने के बाद अपनी रोज़मर्रा की बात छेड़ते हुए कहा, "काश तुम मेरी बात सुनती!"

वह एक पुराने फ़ैशन की आराम-कुर्सी में धंसी, आंखें बन्द किये बैठी थी, और साशा कमरे में क़दम नाप रहा था।

"काश तुम चली जाओ और पढ़ो," उसने कहा। "केवल सुशिक्षित और सन्त व्यक्ति दिलचस्प होते हैं, केवल उन्हीं की जरूरत होती है। जितने ही ज्यादा ऐसे आदमी होंगे, उतनी ही शीघ्र पृथ्वी पर स्वर्ग आयेगा। तब धीरे-धीरे तुम्हारे इस शहर में हर चीज उलट-पुलट हो जायेगी; हर चीज बदल जायेगी मानो कोई जादू हो गया हो। और फिर यहां शानदार भव्य इमारतें, सुन्दर उद्यान, बढ़िया फव्वारे और बहुत ही अच्छे, असाधारण लोग होंगे... लेकिन यह मुख्य बात नहीं है। मुख्य बात यह है कि लोग भीड़ नहीं होंगे, जैसा कि इस शब्द के मानी हम समझते हैं। अपनी मौजूदा शक्ल में यह बुराई शायद हो जायेगी, क्योंकि हर व्यक्ति की आस्था होगी और वह जानता होगा कि उसे जीवन में करना है, और कोई भी भीड़ से समर्थन नहीं चाहेगा। प्यारी, अच्छी

नाद्या, चली जाओ! दिखा दो सबको कि इस सुस्त, पापी और गतिरुद्ध ज़िन्दगी से तुम ऊब गयी हो। कम से कम तुम अपने को तो दिखा दो!"

"असम्भव, साशा, मैं शादी करने जा रही हूं।"

"रहने दो! क्या ज़रूरत है इस शादी की?"

वे बग़ीचे में चले गये और टहलने लगे।

"कुछ भी हो, मेरी प्यारी, तुम्हें सोचना ही पड़ेगा, समझना होगा कि तुम लोगों की बेकार की ज़िंदगी कितनी घृणास्पद, कितनी अनैतिक है," साशा बोलता रहा। "तुम्हारी मा, तुम्हारी दादी और तुम आलसी जीवन बिता सको, इसके लिए दूसरे कमरतोड़ काम करते हैं। तुम लोग दूसरों की ज़िन्दगी नष्ट कर रहे हो, क्या यह अच्छा है, क्या यह हेय नहीं है?"

नाद्या कहना चाहती थी, "हां, तुम ठीक कहते हो," बताना चाहती थी कि वह उसे समझती थी, लेकिन उसकी आखों में आसू भर आये, वह ख़ामोश हो गयी, लगा जैसे कि अपने में सिमट गयी हो और अपने कमरे में चली गयी।

दिन ढले अन्द्रेई अन्द्रेइच आया और सदा की भांति बहुत देर तक वायलिन बजाता रहा। वह प्रकृति से चुप्पा था, और उसे वायलिन बजाना शायद इसीलिए प्रिय था, क्योंकि बजाते वक्त उसे बोलना नहीं पड़ता था। दस बजने के बाद घर जाने के लिए अपना कोट पहन कर उसने नाद्या को अपनी बाहों में भर लिया और उसके कन्धों, बाहों और चेहरे पर गर्म चुम्बनों की बौछार कर दी।

"मेरी प्यारी, मेरी प्रियतमा, मेरी सुंदरी!" वह फुसफुसा रहा था। "मैं कितना ख़ुश हूं! कहीं मैं ख़ुशी से पागल न हो जाऊं!"

और नाद्या को लगा कि वह बहुत पहले ही ये सारी बातें सुन चुकी है या किसी पुराने जीर्ण-शीर्ण उपन्यास में पढ़ चुकी है।

हाल में साशा अपनी पांचों लम्बी उंगलियों की पोरों पर तश्तरी सम्हाले हुए चाय पी रहा था। दादी अकेली ताश खेल रही थी। नीना इवानोव्ना पढ़ रही थी। दीपक की रोशनी थिरक रही थी और हर चीज़ स्थिर और सुरक्षित मालूम हो रही थी। नाद्या ने शुभ रात्रि कहा और अपने कमरे में चली गयी। बिस्तर पर लेटते ही वह सो गयी लेकिन पिछली रातों की तरह ऊषा की पहली किरण के साथ ही वह जाग गयी। वह सो नहीं सकी, उसके दिल में बेचैनी और एक बोझ सा था। वह उठ

कर बैठ गयी और घुटनों पर सिर रख कर सोचने लगी — अपने भविष्य के बारे में, अपनी शादी के बारे में. किसी कारण से उसे याद आया कि मां अपने स्वर्गीय पति को प्यार नहीं करती थी और अब उसके पास अपना कहने को कुछ भी नहीं था और वह पूरी तरह से दादी पर, अपनी सास पर निर्भर थी। और नाद्या बहुत सोचने पर भी यह नहीं समझ पा रही थी कि क्यों वह अब तक अपनी मां को अनूठी समझती आयी थी, और क्यों उसने यह नहीं देखा था कि वह एक मामूली दुखी औरत है।

नीचे साशा भी जाग चुका था, उसकी खांसी सुनाई दे रही थी। वह एक अजीब भोला व्यक्ति है, नाद्या ने सोचा, और उसके सारे सपनों में कुछ बेतुकापन है — उन शानदार और बढ़िया उद्यानों और फ़व्वारों के सपनों में। लेकिन उसके भोलेपन में, बेतुकेपन में भी इतनी सुन्दरता है कि ज्यों ही नाद्या ने यह सोचा कि शायद उसे सचमुच जा कर पढ़ना चाहिए, त्यों ही उसके दिल में, उसके अन्तरतम में ताजगी देने वाली ठंडक भर गयी और वह आह्लादविभोर हो उठी।

"पर नहीं, इसके बारे में न सोचना ही अच्छा है," वह फुसफुसायी, "इसके बारे में सोचना ही नहीं चाहिए..."

"ठक-ठक, ठक-ठक..." दूर से चौकीदार की आवाज़ आ रही थी, "ठक-ठक, ठक-ठक..."

३

जून के मध्य में साशा एकाएक ऊब गया और मास्को वापस जाने की बातें करने लगा।

"मैं इस शहर में नहीं रह सकता," वह रुखाई से कहता। "न नल है और न परनाले का इन्तज़ाम! मुझे खाना खाते भी घिन होती है — रसोई इतनी गंदी है..."

"थोड़ा और इन्तज़ार करो, आवारा पुत्र!" दादी न जाने क्यों बुद-बुदाते हुए कहती, "सातवीं तारीख़ को शादी है!"

"मैं नहीं रुकना चाहता।"

"तुम तो यहां सितम्बर तक रहना चाहते थे।"

"और अब मैं नहीं चाहता। मुझे काम करना है!"

गर्मियां ठंडी और भीगी निकली। पेड़ हमेशा टपटपाते रहते। बगीचा उदास और अप्रिय मालूम होता। सचमुच काम करने को जी चाहता था। ऊपर-नीचे हर कमरे से अनजानी औरतों की आवाजें सुनाई पड़ती। दादी के कमरे में सिलाई की मशीन खटखट करती। यह सब दहेज की तैयारी के शोरगुल का हिस्सा था। नाद्या के लिए जाड़े के ओवरकोट ही छह बन रहे थे और उनमें सबसे सस्ता—दादी के शब्दों में—तीन सौ रूबल का था! इस शोर-शराबे से साशा को चिढ़ हो रही थी। वह अपने कमरे में मुंह फुलाये बैठा रहता। लेकिन फिर उसे ठहरने के लिए राज़ी कर लिया गया और उसने पहली जुलाई से पहले न जाने का वादा कर लिया।

वक़्त जल्दी गुज़र गया। सेंट प्योत्र के दिन खाना खाने के बाद अन्द्रेई अन्द्रेइच नाद्या के साथ मोस्कोव्स्कया सड़क पर गया—एक बार फिर वह मकान देखने, जो नवदम्पति के लिए किराये पर लिया गया था और कब से तैयार कर दिया गया था। यह मकान दुमंजिला था, लेकिन अभी ऊपर का तल्ला ही सजाया गया था। चमकते हुए फ़र्श वाले हाल में मुड़ी हुई लकड़ी की कुर्सियां, एक बड़ा पियानो और स्वरलिपि रखने के लिए स्टैंड था। ताज़े रंग की बू आ रही थी। दीवाल पर सुनहरे चौखटे में मढ़ा हुआ एक बड़ा तैल-चित्र टंगा हुआ था—नग्न स्त्री और उसके पास रखा टूटे हत्थे वाला बैंगनी रंग का फूलदान।

"बहुत सुन्दर तसवीर है!" अन्द्रेई अन्द्रेइच ने सम्मान भरी उसांस के साथ कहा, "यह शिश्माचेव्स्की की कृति है।"

आगे बैठक थी, जिसमें एक गोल मेज़, एक सोफ़ा और चमकीले नीले रंग के कपड़े में मढ़ी हुई आराम-कुर्सियां थीं। सोफ़े के ऊपर पादरी अन्द्रेई का एक बड़ा चित्र था। चित्र में पादरी साहब अपने सब तमग़े और अपना खास टोप लगाये हुए थे। फिर वे लोग खाने के कमरे में गये और वहां से सोने के कमरे में। यहां मद्धिम रोशनी में अगल-बगल दो बिस्तर लगे हुए थे, और ऐसा लगता था कि इस कमरे को सजाने वालों ने यह समझ लिया था कि यहां जीवन हमेशा सुखी रहेगा, सुख के अलावा यहां और कुछ हो ही नहीं सकता। अन्द्रेई अन्द्रेइच नाद्या को कमरे दिखाता रहा तथा सारा वक़्त नाद्या की कमर में हाथ डाले रहा। वह अपने को कमज़ोर, दोषी समझ रही थी, उसे उन तमाम कमरों, बिस्तरों तथा कुर्सियों से घृणा हो रही थी। नंगी औरत से तो उसे मतली आ रही थी।

अब वह साफ तौर पर समझ रही थी कि अन्द्रेई अन्द्रेइच के लिए उस मन में प्यार नहीं रहा है, शायद वह कभी उसे प्यार नहीं करती थी हालांकि वह रात-दिन इसके बारे में सोचती रहती थी, पर वह ठीक सम नहीं पा रही थी और समझ भी नहीं सकती थी कि यह कैसे कहे, किसे कहे और कहे ही क्यों। वह उसकी कमर में हाथ डाले था, उससे इतने दयालुता से, इतनी नम्रता से बातें कर रहा था, अपने इस घर में घूमत हुआ इतना खुश था। और नाद्या को सिर्फ ओछापन, जाहिल, भोंडा, असह्य ओछापन दिखलाई पड़ रहा था। और अपनी कमर में अन्द्रेई अन्द्रेइच का हाथ उसको लोहे के घेरे की तरह ठंडा और सख्त मालूम हो रहा था। किसी भी क्षण वह भाग जाने को, सिसकियां भरने को, खिड़की से बाहर कूद पड़ने को तैयार थी। अन्द्रेई अन्द्रेइच उसको गुसलखाने में ले गया, दीवाल में जड़े हुए एक नल को दबाया और पानी बह निकला।

"देखा?" उसने कहा और हंस पड़ा। "मैंने एक सौ बाल्टियों की टंकी बनवायी है ताकि हमारे गुसलखाने में पानी आता रहे।"

वे थोड़ी देर अहाते में टहलते रहे और फिर सड़क पर निकल आये और किराये की घोड़ा-गाड़ी में बैठ गये। सड़क पर धूल के बादल उड़ने लगे और लगा कि पानी बरसने वाला है।

"तुम्हें सर्दी तो नहीं लग रही?" अन्द्रेई अन्द्रेइच ने धूल से आंखें बचाते हुए पूछा।

उसने जवाब नहीं दिया।

"याद है कल साशा मेरे कुछ काम न करने पर भर्त्सना कर रहा था?" उसने थोड़ी देर रुक कर कहा। "हां, वह ठीक था! एकदम ठीक था! मैं कुछ नहीं करता और न कुछ कर सकता हूं। ऐसा क्यों है, प्रिये, क्या कारण है कि टोपी में बैज लगा कर दफ्तर जाने के विचार मात्र से मुझे मतली आने लगती है? क्या कारण है कि किसी वकील को, लैटिन के शिक्षक या परिषद के सदस्य को देख कर ही मेरा दिल खराब हो जाता है। आह रूस-माता! रूस-माता! तुम अपने वक्ष पर कितने आलसियों और बेकारों को वहन करती हो! मेरी तरह के कितने लोगों को, कष्टभोगी रूस-माता!"

और अपनी निष्क्रियता को वह एक सर्वव्यापी परिघटना बता रहा था, उसमें समय का रुख देख रहा था।

अब वह साफ तौर पर समझ रही थी कि अन्द्रेई अन्द्रेइच के लिए उसके मन में प्यार नहीं रहा है, शायद वह कभी उसे प्यार नहीं करती थी। हालांकि वह रात-दिन इसके बारे में सोचती रहती थी, पर वह ठीक समझ नहीं पा रही थी और समझ भी नहीं सकती थी कि यह कैसे कहे, किससे कहे और कहे ही क्यों। वह उसकी कमर में हाथ डाले था, उससे इतनी दयालुता से, इतनी नम्रता से बातें कर रहा था, अपने इस घर से घूमता हुआ इतना खुश था। और नाद्या को सिर्फ ओछापन, जाहिल, भौंडा, असह्य ओछापन दिखलाई पड रहा था। और अपनी कमर में अन्द्रेई अन्द्रेइच का हाथ उसको लोहे के घेरे की तरह ठंडा और सख्त मालूम हो रहा था। किसी भी क्षण वह भाग जाने को, सिसकियां भरने को, खिड़की से बाहर कूद पड़ने को तैयार थी। अन्द्रेई अन्द्रेइच उसको गुसलखाने में ले गया, दीवाल में जड़े हुए एक नल को दबाया और पानी बह निकला।

"देखा?" उसने कहा और हंस पड़ा। "मैंने एक सौ बाल्टियों की टंकी बनवायी है ताकि हमारे गुस्लखाने में पानी आता रहे।"

वे थोडी देर अहाते में टहलते रहे और फिर सड़क पर निकल आये और किराये की घोड़ा-गाडी में बैठ गये। सडक पर धूल के बादल उड़ने लगे और लगा कि पानी बरसने वाला है।

"तुम्हें सर्दी तो नहीं लग रही?" अन्द्रेई अन्द्रेइच ने धूल से आंखें बचाते हुए पूछा।

उसने जवाब नहीं दिया।

"याद है कल साशा मेरे कुछ काम न करने पर भर्त्सना कर रहा था?" उसने थोड़ी देर रुक कर कहा। "हां, वह ठीक था! एकदम ठीक था! मैं कुछ नहीं करता और न कुछ कर सकता हूं। ऐसा क्यों है, प्रिये, क्या कारण है कि टोपी में बैज लगा कर दफ्तर जाने के विचार मात्र से मुझे मतली आने लगती है? क्या कारण है कि किसी वकील को, लैटिन के शिक्षक या परिषद के सदस्य को देख कर ही मेरा दिल खराब हो जाता है। आह रूस-माता! रूस-माता! तुम अपने वक्ष पर कितने आलसियों और बेकारों को वहन करती हो! मेरी तरह के कितने लोगों को, कष्टभोगी रूस-माता!"

और अपनी निष्क्रियता को वह एक सर्वव्यापी परिघटना बना रहा था, उसमें समय का रुख देख रहा था।

"जब हमारी शादी हो जायेगी," वह कह रहा था, "हम देहात में चले जायेंगे, प्रिये, वहां हम काम करेंगे। हम वहां बगीचे और झरने वाला एक छोटा-सा ज़मीन का टुकड़ा ख़रीद लेंगे और मेहनत करेंगे, जीवन का प्रेक्षण करेंगे... आह, कितना सुन्दर होगा यह!"

उसने अपना टोप उतार लिया। उसके बाल हवा में लहराने लगे। नाद्या उसकी बातें सुनते हुए सोच रही थी, "हे ईश्वर! मैं घर जाना चाहती हूं! हे ईश्वर!" घर के पास ही घोड़ा-गाड़ी पैदल जा रहे पादरी अन्द्रेई से आगे निकली।

"अरे देखो, वह पिता जी जा रहे हैं!" अन्द्रेई अन्द्रेइच ने ख़ुशी से कहा और अपना टोप हिलाया। "मैं अपने पिता को प्यार करता हूं, वाक़ई प्यार करता हूं," उसने घोड़ा-गाड़ी का किराया देते हुए कहा।

अप्रसन्नता और अस्वस्थता अनुभव करती हुई नाद्या घर में गयी। वह बस यही सोच रही थी कि सारी शाम मेहमान रहेंगे और उसे उनकी ख़ातिर-तवाज़ा करनी होगी, मुस्कराना होगा, वायलिन सुननी पड़ेगी, हर तरह की बेवकूफ़ी भरी बातें सुननी पड़ेंगी और सिर्फ़ शादी की बातें करनी पड़ेंगी। दादी फूला-फूला रेशमी पोशाक पहने शान से अकड़ी समोवार के पास बैठी हुई थी, वह बहुत घमंडी मालूम हो रही थी, जैसा कि वह हमेशा मेहमानों के आने पर लगती थी। पादरी अन्द्रेई चेहरे पर चालाकी भरी मुस्कराहट लिये कमरे में आये।

"मुझे आप को स्वस्थ देख कर प्रसन्नता और पवित्र सन्तोष प्राप्त हुआ है," उन्होंने दादी से कहा। यह समझना मुश्किल था कि उन्होंने गंभीरता से ऐसे कहा है या मज़ाक़ में।

४

खिड़कियों के शीशों और छत से हवा टकरा रही थी। सीटियों की सी आवाज़ सुनाई पड़ रही थी और चिमनी में घरभूतना अपना उदास गीत गुनगुना रहा था। रात का एक बजने वाला था। घर का हर आदमी बिस्तर पर लेट चुका था, पर कोई भी सोया न था और नाद्या को लग रहा था कि नीचे से वायलिन बजाये जाने की आवाज़ आ रही है। बाहर से ज़ोर की खड़खड़ सुनाई दी। ज़रूर ही कहीं झिलमिली कुब्जे में उखड़

गयी थी। एक मिनट बाद सिर्फ़ शमीज पहने नीना इवानोव्ना मोमबत्ती लिये कमरे में आयी।

उसने पूछा, "यह आवाज कैसी थी, नाद्या?"

नाद्या की मां, बालों की चोटी बांधे, झेंप भरी मुस्कराहट लिये इस तूफ़ानी रात में अधिक बूढ़ी, मामूली सूरत और छोटे क़द वाली मालूम हो रही थी। नाद्या को याद आया कि कैसे वह अभी हाल ही तक अपनी मां को अनूठी महिला समझती थी और उसकी बातें सुनने में गर्व महसूस करती थी। और अब किसी भी तरह उसे याद नहीं आ रहा था कि वे शब्द थे क्या—उसे जो शब्द याद आ रहे थे, वे मामूली और अनावश्यक प्रतीत होते थे।

ऐसा लगता था कि चिमनी के भीतर भारी आवाजों में गाया जा रहा है, लगता कि "हे मेरे परमात्मा!" शब्द भी सुनाई पड़ रहे थे। नाद्या बिस्तर में उठ कर बैठ गयी और उसने अचानक सिसकियां भरते हुए सिर थाम लिया।

"मां, मां," वह चिल्लायी, "मेरी प्यारी मां! काश तुम जानतीं कि मेरे ऊपर क्या गुजर रही है! मैं तुमसे अनुरोध करती हूं, प्रार्थना करती हूं, मुझे चली जाने दो!"

"कहां?" भौचक्की होकर नीना इवानोव्ना ने पूछा और बिस्तर के किनारे बैठ गयी। "कहां जाना चाहती हो?"

नाद्या देर तक रोती-सिसकती रही, एक भी शब्द बोलने में वह असमर्थ थी।

"मुझे इस शहर से चली जाने दो!" आखिरकार उसने कहा। "शादी न हुई चाहिए और न होगी। समझो भी न! मैं उस आदमी से प्यार नहीं करती हूं ... मैं उसके बारे में बात करना भी सहन नहीं कर सकती हूं।"

"नहीं, मेरी बच्ची, नहीं," नीना इवानोव्ना ने जल्दी से कहा, वह बहुत डर गयी थी। "मन को शान्त करो। तुम्हारा मिजाज ठीक नहीं है। यह गुजर जायेगा। ऐसा होता भी है। शायद तुम अन्द्रेई से झगड़ पड़ी हो, लेकिन प्रेमियों के झगड़े का अन्त चुम्बनों में होता है।"

"अच्छा, मां, अच्छा," नाद्या रो पड़ी।

" [illegible] ने [illegible] एक बार कहा। "बस अब तुम

एक छोटी बच्ची थी और अब तुम दुलहन हो। प्रकृति सदैव परिवर्तनशील है। इसके पहले कि तुम समझ सको तुम स्वयं मां बन जाओगी, बूढ़ी हो जाओगी और मेरी तरह तुम्हारी भी जिद्दी बेटी होगी।"

"मां, अच्छी मां, तुम तो समझदार हो, तुम दुखी हो," नाद्या ने कहा। "तुम बहुत दुखी हो; तुम ऐसी घिसी-पिटी बातें क्यों करती हो? क्यों, ईश्वर के लिए?"

नीना इवानोव्ना ने बोलने की कोशिश की, लेकिन एक शब्द भी नहीं बोल सकी, केवल सिसकियां भरती रही और अपने कमरे में लौट गयी। एक बार फिर चिमनी से भारी आवाजों का रुदन सुनाई दिया और एकाएक नाद्या भयभीत हो गयी। वह बिस्तर से कूद कर अपनी मां के कमरे में भाग गयी। नीना इवानोव्ना की आंखें रोने से सूज गयी थीं, वह नीले रंग का कम्बल ओढ़े हुए एक किताब हाथ में लिये लेटी हुई थी।

"मां, मेरी बात सुनो!" नाद्या ने कहा, "सोचो, मुझे समझने की कोशिश करो, मैं तुमसे प्रार्थना करती हूं। सिर्फ सोचो कि हमारा जीवन कितना ओछा और अपमानजनक है। मेरी आंखें खुल गयी हैं। मैं अब सब समझ रही हूं। और तुम्हारा अन्द्रेई अन्द्रेइच क्या है? वह बिल्कुल भी अक़्लमंद नहीं है, मां! हे ईश्वर, ज़रा सोचो, मां, वह बेवकूफ है!"

नीना इवानोव्ना एक झटके से उठ कर बैठ गयी।

"तुम और तुम्हारी दादी मुझे सताती रहती हो!" उसने हिचकी भरते हुए कहा। "मैं जीना चाहती हूं, जीना!" उसने दुहराया और दो-एक बार छाती पर मुक्के मारे। "मुझे आज़ाद कर दो! मैं अभी भी जवान हूं, मैं जीना चाहती हूं। तुमने मुझे बुढ़िया बना दिया है!"

वह फूट-फूट कर रोती हुई कम्बल के नीचे सिकुड़ कर लेट गयी। वह छोटी सी, बेवकूफ और दयनीय लग रही थी। नाद्या ने अपने कमरे में जा कर कपड़े पहन लिये और फिर सुबह के इन्तज़ार में खिड़की के पास बैठ गयी। सारी रात वह बैठी सोचती रही और कोई सारी रात झिलमिली खटखटाता रहा और सीटी बजाता रहा।

दूसरे दिन सवेरे दादी ने शिकायत की कि हवा से सारे सेब गिर गये हैं और आलूबुखारे का एक पुराना पेड़ टूट गया है। सुबह उदास, धुंधली थी। ऐसा दिन, जब कि सुबह से ही लैम्प जलाने की तबीयत होने लगती है। हर आदमी ठंड की शिकायत कर रहा था, खिड़कियों के

शीशों पर पानी की बूंदें टप-टप कर रही थीं। नाश्ते के बाद नाद्या साशा के कमरे में गयी और बिना बोले कोने में रखी हुई आरामकुर्सी के सामने घुटनों के बल गिर पड़ी और अपने चेहरे को हाथों से ढांप लिया।

"क्या हुआ?" साशा ने पूछा।

"मैं इस तरह नहीं रह सकती," उसने कहा। "मैं नहीं जानती कि मैं यहां पहले किस तरह रहती थी, मैं बिल्कुल नहीं समझ सकती। मैं अपने मंगेतर से घृणा करती हूं, अपने आप से घृणा करती हूं और मैं इस काहिल और खोखली जिन्दगी से घृणा करती हूं..."

"हां, हां," साशा ने कहा, वह अभी तक समझा नहीं था कि बात क्या है। "कोई नहीं... यह ठीक है... यह अच्छा है।"

"यह जिन्दगी मेरे लिये घृणित है," नाद्या ने आगे कहा, "मैं एक दिन भी और यहां रहना बरदाश्त नहीं कर सकती हूं। मैं कल चली जाउंगी। ईश्वर के लिए, मुझे अपने साथ ले चलो!"

साशा आश्चर्य में एक क्षण उसकी ओर देखता रहा। आख़िरकार बात उसकी समझ में आ गयी और वह एक बच्चे की तरह ख़ुश हो गया, अपनी बाहें हिलाने और जूतों से ताल देने लगा जैसे आनन्द के मारे नाच रहा हो।

"वाह! वाह!" उसने अपने हाथ मलते हुए कहा, "हे भगवान, कितनी अच्छी बात है।"

वह उसकी तरफ निर्निमेष आंखों से, उत्साह से देखती रही, जैसे मुग्ध हो गयी हो और प्रतीक्षा में थी कि वह फ़ौरन ही कोई ख़ास और असाधारण महत्व की बात कहेगा। साशा ने अभी तक उससे कुछ नहीं कहा था, लेकिन उसे अनुभव हो रहा था कि कुछ नवीन और विस्तृत, कोई अनोखी चीज़ उसके सामने आ रही है, जो वह पहले नहीं जानती थी, और वह साशा को आशा से देखती रही। वह हर चीज़ के लिए तैयार थी, मृत्यु के लिए भी।

"मैं कल जा रहा हूं," कुछ देर सोच कर उसने कहा, "तुम मुझे छोड़ने के लिए स्टेशन तक आओगी ... मैं तुम्हारा सामान अपने सन्दूक में रख लूंगा और तुम्हारे लिए टिकट ख़रीद लूंगा और जब तीसरी घंटी बजे, तो तुम गाड़ी में चढ़ जाना और हम चले जायेंगे। मास्को तक मेरे

साथ चलो और वहां से पीटर्सबर्ग खुद अकेली जाना। क्या तुम्हारे पास पासपोर्ट है?"

"हां।"

"तुम इसके लिए कभी भी नहीं पछताओगी, तुम्हें कभी अफसोस नहीं होगा, कसम से," साशा ने उत्साह से कहा। "तुम चली जाओगी और अध्ययन करोगी, और बाद में अपने आप रास्ता निकल आयेगा। तुम अपनी जिन्दगी को उलट-पलट दोगी, हर चीज बदल जायेगी। सबसे बड़ी बात तो जिन्दगी मे फेर लाना है, बाकी सब बेकार है। अच्छा तो हम लोग कल जा रहे हैं?" – "हां, हां! भगवान के वास्ते, हां!"

नाद्या का विचार था कि वह उद्वेलित हो गयी है और उसका मन कभी इतना बोझिल नहीं था, उसे पूरा यकीन था कि जाने तक उसका मन पीड़ित रहेगा, दुखद विचार उसके दिमाग पर छा जायेंगे। लेकिन वह ऊपर अपने कमरे मे पहुच कर विस्तर पर लेटी ही थी, कि गहरी नींद सो गयी और आंसू भरे चेहरे और ओठो पर मुस्कराहट लिये शाम तक सोती रही।

५

घोड़ा-गाड़ी मंगायी जा चुकी थी। नाद्या कोट पहने और टोप लगाये आखिरी मरतबा अपनी मां और उन सब चीजों को, जो अभी तक उसकी थी, देखने ऊपर गयी। वह अपने कमरे मे थोड़ी देर विस्तर के पास खड़ी रही, विस्तर अभी तक गर्म था, चारों ओर देखा और फिर चुपचाप अपनी मां के कमरे मे गयी। नीना इवानोव्ना सो रही थी और उसके कमरे में सन्नाटा था। मा के बाल ठीक करने और उसे चूमने के बाद एक-दो मिनट तक खड़ी रही... तब धीरे-धीरे नीचे उतर गयी।

बारिश की झड़ी लगी हुई थी। पानी से भीगी घोड़ा-गाडी ओसारे के सामने खड़ी थी। गाड़ी की छतरी उठी हुई थी।

"तुम्हारे लिए वहा जगह नहीं है, नाद्या," नौकर गाडी मे सामान रखने लगे तो दादी ने कहा। "क्या जरूरत पड़ी है तुम्हें ऐसे खराब मौसम मे उसे छोड़ने जाने की। अच्छा हो घर पर ही रहो। जरा बारिश को तो देखो!"

नाद्या ने कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन कह न सकी। साशा ने

उसे गाड़ी में बिठाया और कम्बल से उसके पैर ढक दिये। और खुद भी उसकी बगल में बैठ गया।

"विदा, ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे!" दादी श्रोमारे से चिल्लायीं। "मास्को पहुंच कर चिट्ठी लिखने का ख़याल रखना, साशा!"

"अच्छी बात है, विदा दादी!"

"स्वर्ग की देवी तुम्हारी रक्षा करे!"

"क्या मौसम है!" साशा ने कहा।

नाद्या ने अब रोना शुरू किया। उसे अब जा कर ज्ञान हुआ कि वह निश्चय ही चली जायेगी। अभी तक उसको इसका वास्तव में विश्वास नहीं हो रहा था, अपनी मां के पास खड़ी थी, तब भी नहीं, दादी से विदा लेते समय भी नहीं। विदा, मेरे शहर! तमाम बातें जल्दी-जल्दी उसके दिमाग में घूम गयीं—अन्द्रेई, उसके पिता, नया मकान और फूलदान वाली नंगी औरत। लेकिन अब उसे इन बातों से डर नहीं लगा और न उसे मन पर बोझा ही मालूम हुआ। ये छोटी और क्षुद्र बातें हो गयी थीं। यह सब अतीत में दूर ही दूर खोता जा रहा था और जब वे रेल में सवार हुए और गाड़ी चल दी, तो उसका सम्पूर्ण अतीत—इतना बड़ा और महत्वपूर्ण—सिमट, सिकुड़ कर ज़रा सा रह गया; और एक शानदार भविष्य, जिसकी अभी तक केवल रेखा ही दिखाई देती थी, उसके सामने उभरता जा रहा था। गाड़ी की खिड़कियों पर पानी की बूंदें टप-टप कर रही थीं। हरे-भरे खेतों, तेज़ी से गुज़रने वाले तार के खम्भों तथा तारों पर बैठी चिड़ियों के सिवा और कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, और एकाएक वह आनन्दविभोर हो उठी—उसे याद आया कि वह आज़ाद होने और पढ़ने के लिए जा रही है, जैसे कभी पुराने ज़माने में लोग भाग कर कज़्ज़ाकों में मिल जाते थे। वह हंस रही थी, रो रही थी और प्रार्थना कर रही थी।

"सब कुछ ठीक है!" साशा मुस्कराते हुए कह रहा था, "सब कुछ!"

६

पतझड़ समाप्त हुआ और उसके बाद जाड़ा भी। नाद्या को अब घर की याद बहुत सताती और वह हर रोज़ अपनी दादी और मां के बारे में सोचती। उसे साशा का भी ख़याल आता। घर से सौहार्दपूर्ण, शान्त

पत्र आते, जिनसे लगता था कि सारी बातें क्षमा कर दी गयी हैं और भुलाई जा चुकी है। मई की परीक्षाओं के बाद वह स्वस्थ और सानन्द घर को रवाना हो गयी। साशा से मिलने के लिए वह मास्को में रुकी। वह बिलकुल वैसा ही था जैसा कि साल भर पहले – दाढ़ी, अस्तव्यस्त बाल, वही लम्बा कोट और किरमिच की पतलून; उसकी आंखें हमेशा की भांति बड़ी और सुन्दर थीं। लेकिन वह बीमार और सताया हुआ लग रहा था। वह अधिक बूढ़ा और दुबला दिखाई दे रहा था और लगातार खांसता था। नाद्या को वह नीरस और तनिक ग्रामीण लग रहा था।

"अरे, यह तो नाद्या है!" खुशी से हंसते हुए वह चिल्लाया। "मेरी प्यारी, मेरी लाड़ली!"

वे दोनों साथ-साथ तम्बाकू के धुएं और रंग व स्याही की दमघोट बदबू वाले लिथो-छापेखाने में कुछ देर बैठे, फिर साशा के कमरे में चले गये, वहां तम्बाकू की बू भरी हुई थी, कूड़ा-करकट फैला हुआ था और चारों तरफ गन्दगी थी। मेज पर ठंडे समोवार के पास एक टूटी प्लेट रखी हुई थी, जिसमें भूरा सा एक कागज का टुकड़ा था और मेज व फर्श मरी हुई मक्खियों से भरे हुए थे। यहां की हर चीज बतला रही थी कि साशा अपनी निजी जिन्दगी का जरा भी ख्याल नहीं करता, अस्तव्यस्त रहता है और उसे आरामदेह जीवन के प्रति उपेक्षा है। और यदि कोई उससे उसके व्यक्तिगत सुख और निजी जीवन के बारे में पूछे, उसके प्रति प्रेम की बात करे, तो उसकी समझ ही में कुछ नहीं आयेगा और वह सिर्फ हंस देगा।

"हां, सब ठीक ही रहा," नाद्या ने जल्दी से कहा। "मां मुझसे मिलने के लिए पतझड़ में पीटर्सबर्ग आयी थी, उनका कहना था कि दादी नाराज नहीं हैं, सिर्फ मेरे कमरे में आती रहती हैं, दीवालों पर सलीब का चिन्ह बनाती रहती है।"

साशा खुशदिल मालूम हो रहा था, लेकिन खांस रहा था और फटी आवाज में बातें कर रहा था और नाद्या उसकी ओर ताकती रही। वह सोच रही थी कि क्या वह वास्तव में बहुत बीमार है या यह उसकी कल्पना है।

"साशा, मेरे प्यारे!" उसने कहा, "तुम तो सचमुच बीमार हो।"

"मैं ठीक हूं, जरा अस्वस्थ हूं पर कोई गंभीर बात नहीं..."

"ईश्वर के लिए," नाद्या ने बेचैन आवाज में कहा, "तुम डाक्टर को दिखाने के लिए क्यों नहीं जाते? तुम अपने स्वास्थ्य का ध्यान क्यों नहीं रखते? मेरे प्यारे, अच्छे साशा!" उसने कहा और उसकी आंखों में आंसू भर आये और किसी वजह से अन्द्रेई अन्द्रेइच, फूलदान वाली नंगी औरत और उसके सारे अतीत का चित्र, जो बचपन की तरह बहुत धुंधला और दूर प्रतीत होता था, उसके दिमाग में घूम गया। वह रो उठी क्योंकि अब उसे साशा साल भर पहले की तरह मौलिक, चतुर और दिलचस्प नहीं मालूम हुआ। "साशा, प्रिय, तुम बहुत बीमार हो, तुम्हें पीला और क्षीण न देखने के लिए मैं क्या कुछ करने को तैयार नहीं। मैं तुम्हारी बहुत उऋणी हूं। तुम कल्पना नहीं कर सकते कि तुमने मेरे लिए कितना काम किया है! वास्तव में, साशा, तुम मेरे जीवन में सबसे घनिष्ठ और प्रिय व्यक्ति हो।"

वे बैठे हुए बातें करते रहे। और अब पीटर्सबर्ग में एक जाड़ा व्यतीत करने के बाद नाद्या को लग रहा था कि साशा की बातचीत में, उसकी मुस्कराहट और उसकी सम्पूर्ण आकृति में कोई ऐसी चीज थी, जो पुराने फ़ैशन की, पिछड़ी-गुजरी हुई है, जो शायद कब्र में पहुंच चुकी है।

"मैं परसों वोल्गा पर सैर करने के लिए जा रहा हूं," साशा ने कहा, "और फिर कुमीस* पीने जाऊंगा। मेरा एक दोस्त और उसकी बीवी मेरे साथ जा रहे हैं। दोस्त की बीवी अद्भुत औरत है। मैं उसे समझाने की कोशिश करता रहता हूं कि वह पढ़े। मैं चाहता हूं कि वह अपनी जिन्दगी को उलट-पलट दे।"

कुछ देर बातें करके वे स्टेशन चले गये। साशा ने उसे चाय पिलायी और उसके लिए कुछ सेब खरीदे और जब गाड़ी चली और वह मुस्कराता हुआ अपना रूमाल हिला रहा था, तो नाद्या उसके पैर देख कर ही समझ गयी कि वह कितना बीमार है और उसके ज्यादा दिन जिन्दा रहने की आशा नहीं है।

नाद्या अपने शहर में दोपहर को पहुंची। जब वह स्टेशन से अपने घर जा रही थी, तो उसे सड़कें अस्वाभाविक रूप से चौड़ी लग रही थीं और मकान छोटे और जमीन से सटे-सटे। उसे कोई भी आदमी न दिखाई

---

*घोड़ी के दूध का पेय, जो सेहत के लिए अच्छा होता है।

पड़ा मिवा पियानोसाझ जर्मन के, जो अपना मटमैला ओवरकोट पहने हुए था। मकान धूल से सने हुए मालूम पड रहे थे। दादी ने, जो अब वाकई बूढ़ी हो गयी थी और पहले ही की भाति मोटी और असुन्दर थी, नाद्या की कमर मे बाहे डाल दी और नाद्या के कधे पर सिर रख कर बहुत देर तक रोती रही गोया वह अपने को अलग न कर पा रही हो। नीना इवानोव्ना की भी उम्र बहुत ज्यादा लगने लगी थी और उसका चेहरा उतरा हुआ था, मगर वह अब भी कमर पर कसी पोशाक पहने थी और उसकी उगलियों पर हीरे चमक रहे थे।

"मेरी प्यारी!" उसने ऊपर से नीचे तक कापते हुए कहा, "मेरी दुलारी!"

फिर वे बैठ गयीं और चुपचाप रोती रहीं। यह सहज ही देखा जा सकता था कि दादी और मा दोनों समझती थीं कि अतीत हमेशा के लिए खो गया है। उनका सामाजिक रुतबा, पहले का मान-सम्मान, घर मे मेहमान बुलाने का हक खत्म हो चुका है। वे उन आदमियो की तरह महसूस कर रही थी, जिनकी आरामदेह और बिना परेशानी की जिन्दगी मे किसी रात पुलिस वाले आयें और तलाशी ले और यह पता लगे कि घर के मालिक ने गबन या जालसाजी की है, और फिर हमेशा के लिए आरामदेह और बिना परेशानी की जिन्दगी खत्म!

नाद्या ऊपर गयी और देखा वही पुराना बिस्तर, सफेद, मामूली परदो वाली वही खिड़किया, खिडकी से बगीचे का वही दृश्य–धूप से नहाया हुआ, खुश, जिन्दा। उसने अपनी मेज छुई, बैठ गयी और कुछ सोचती रही। उसने अच्छा खाना खाया और फिर स्वादिष्ट, गाढी मीठी क्रीम वाली चाय पी। मगर उसे कुछ कमी सी महसूस हो रही थी। कमरो में एक खोखलापन नजर आ रहा था, छत बहुत नीची लगी। रात मे, जब वह सोने गयी और उसने कम्बल ओढा, तो उसे गर्म और बहुत नर्म बिस्तर मे लेटना न जाने क्यो उपहासास्पद लगा।

नीना इवानोव्ना एक मिनट के लिए आयी और अपराधी की तरह सहमी सी चारो तरफ देखती हुई बैठ गयी।

"अच्छा, नाद्या," उसने कहा, "क्या तुम खुश हो? वाकई खुश हो?"

"खुश हूं, मा।"

नीना इवानोव्ना ने उठ कर नाद्या और खिड़कियों के ऊपर क्रास का चिन्ह बनाया।

"और मैं जैसा कि तुम देख रही हो, धार्मिक हो गयी हूं," उसने कहा। "मैं दर्शन का अध्ययन कर रही हूं और सोचती रहती हूं, सोचती रहती हूं... और बहुत सी चीज़ें अब मेरे लिए दिन की रोशनी की तरह साफ हो गयी हैं। मुझे लगता है कि सबसे महत्व की बात यह है कि जीवन मानो एक प्रिज्म से गुजरे!"

"मा, दादी कैसी हैं?"

"ठीक ही लगती हैं। जब तुम साशा के साथ चली गयी थीं और दादी ने तुम्हारा तार पढ़ा, तो वह जमीन पर गिर पड़ीं। उसके बाद वह तीन दिन तक बिस्तर पर पड़ी रहीं और फिर वह रोने और प्रार्थना करने लगीं। लेकिन अब वह ठीक हैं।"

नीना इवानोव्ना उठ कर कमरे में चहलक़दमी करने लगी।

"ठक-ठक..." चौकीदार की आहट आयी, "ठक-ठक, ठक-ठक..."

"सबसे महत्व की बात यह है कि जीवन मानो एक प्रिज्म से गुज़रे," उसने कहा, "दूसरे शब्दों में अपनी चेतना में जीवन को सरल तत्वों में विभाजित कर देना चाहिए, सात मौलिक रंगों की तरह और हर तत्व का अलग-अलग अध्ययन करना चाहिए।"

फिर नीना इवानोव्ना ने और क्या कहा और वह कब चली गयी नाद्या को नहीं मालूम था, क्योंकि वह फौरन ही सो गयी थी।

मई गुजरी और जून आया। नाद्या घर की आदी हो गयी। दादी समोवार के पास बैठी हुई चाय पिलाती और ठंडी सांसे भरती रहतीं। नीना इवानोव्ना शाम को अपने दर्शन के बारे में बातें करती। वह अब भी एक आश्रित की तरह घर में रहती और थोड़े से कोपेक की भी ज़रूरत पड़ने पर दादी के सामने हाथ पसारती। घर में मक्खियां भरी थीं और छत दिनों दिन नीचे आती प्रतीत हो रही थी। इस डर से कि कहीं पादरी अन्द्रेई और अन्द्रेई अन्द्रेइच से मुलाकात न हो जाये दादी और नीना इवानोव्ना कभी बाहर नहीं निकलती थीं। नाद्या बगीचे और गलियों में टहलती और मकानों और गदली चहारदीवारों को देखती और उसे लगता कि शहर कब का बूढ़ा हो गया है, इसके दिन बीत चुके हैं और अब यह अपने अंत की प्रतीक्षा में है या फिर ताजगी और जवानी के आरम्भ की

प्रतीक्षा मे। काश यह नया और उज्जवल जीवन जल्दी आ जाये, जब हम सिर ऊंचा कर किस्मत की आखो मे आखें डाल कर देख सके यह जानते हुए कि हम सही हैं, खुश और आज़ाद रह सके! ऐसी जिन्दगी देर-सवेर आ कर रहेगी। आखिर तो वह वक्त आयेगा ही जब दादी के मकान का कुछ भी नही रहेगा, जहां सारी व्यवस्था ही ऐसी है कि चार नौकर तहखाने के एक गंदे कमरे मे ही रह सकते है, और आखिर वह वक़्त भी तो आयेगा, जब इस मकान का चिन्ह भी शेष नही रहेगा, जब इसका अस्तित्व भूल जायेगा और कोई इसे याद भी नही करेगा। नाद्या का एक मात्र मनबहलाव पड़ोस के घर के बच्चे थे जो, जब वह बगीचे में टहलती तो चहारदीवारी पर हाथ मार कर हसते हुए चिल्लाते –

"दुलहन! दुलहन!"

सारातोव से साशा का खत आया। उसने अपनी टेढी-मेढी हलकी-फुलकी लिखावट मे लिखा था कि वोल्गा की सैर बहुत सफल रही है। लेकिन वह सारातोव मे ज़रा बीमार पड गया है, उसकी आवाज गायब हो गयी है और पिछले पन्द्रह दिन से वह अस्पताल मे है। नाद्या समझ गयी कि इसके क्या मानी हैं और एक आशंका, एक विश्वास सा उसके दिल मे बैठ गया। वह खीज रही थी कि आशका और खुद साशा के विचार से वह अब पहले की भाति द्रवित नही हो पा रही है। उसे ज़िन्दा रहने की, पीटर्सबर्ग जाने की इच्छा हो रही थी। और साशा के साथ दोस्ती अतीत की चीज मालूम हो रही थी, जो प्रिय होने पर भी बहुत दूर हो गयी थी। वह सारी रात सो नही सकी और सवेरे खिडकी पर जा कर बैठ गयी, उसके कान बाहर से आने वाली आवाज़ो पर लगे हुए थे। और वास्तव मे नीचे से बातचीत की आवाज़ आयी – दादी घबराहट के साथ किसी से जल्दी-जल्दी कुछ पूछ रही थी। फिर कोई रो दिया... जब नाद्या नीचे गयी, तो दादी कमरे के कोने मे खडी हुई प्रार्थना कर रही थी और उनका चेहरा आसुओ से भरा हुआ था। मेज़ पर एक तार पडा हुआ था।

दादी का रोना सुनते हुए नाद्या कमरे मे बहुत देर तक इधर से उधर चक्कर काटती रही। फिर तार उठा कर पढ़ा। तार मे लिखा था कि कल सुबह सारातोव मे अलेक्सान्द्र तिमोफ़ेइच यानी साशा क्षय से मर गया।

दादी और नीना इवानोव्ना मनक के लिए प्रार्थना करवाने के लिए गिरजाघर गयीं और नाद्या बहुत देर तक कमरों में सोचती हुई चक्कर काटती रही। वह अच्छी तरह समझती थी कि साशा की इच्छानुसार उसकी जिन्दगी उलट-पलट हो गयी थी, वह यहां पर अकेली, परायी सी थी, किसी को उसकी यहां जरूरत नहीं थी। और यहां पर कोई चीज नहीं थी, जिसे वह चाहती हो। विगत छीन कर खत्म कर दिया गया था मानो वह आग में जल कर भस्म हो गया था और राख हवा में बिखेर दी गयी थी। वह साशा के कमरे में गयी और वहां खड़ी रही।

"विदा, प्यारे साशा!" उसने मन ही मन कहा। उसकी कल्पना मे उसके सामने नयी, बृहत् और विशाल जिन्दगी थी और यह जिन्दगी, अभी तक अस्पष्ट और रहस्यमय, उसे बुला रही थी, आगे खींच रही थी।

वह ऊपर सामान बांधने चली गयी और दूसरे दिन सवेरे अपने घरवालों से विदा ले कर प्रसन्नचित्त और उमंगों से भरी हुई शहर से चली गयी – कभी भी वापस न लौटने के विश्वास के साथ।

१६०३

मक्सिम गोर्की

अन्तोन चेखोव

एक दिन उन्होंने मुझे अपने गाव कुचूक-कोई मे बुलाया, जहा उनके पास जमीन का छोटा सा टुकड़ा और दोमंजिला सफेद मकान था। वहां मुझे अपनी "जागीर" दिखाते हुए वह बड़े उत्साह से कहने लगे—

"यदि मेरे पास ढेर सारे पैसे होते तो मैं यहा बीमार ग्रामीण अध्यापको के लिए सेनेटोरियम बनवा देता। एक बड़ी सुदर, बहुत ही उजली इमारत बनवाता, बड़ी-बड़ी खिड़कियो और ऊंची-ऊंची छतो वाली। वहा बहुत बढ़िया पुस्तकालय होता, तरह-तरह के साज, मधुमक्खियो के छत्ते, सब्जियो की क्यारियां, फलों का बाग़; वहा कृषिविज्ञान, मौसमविज्ञान पर व्याख्यान का प्रबंध किया जा सकता—अध्यापक को सब कुछ पता होना चाहिए, सब कुछ, भाई मेरे!"

वह सहसा चुप हो गये, खासे, तिरछी नजर से मेरी ओर देखने लगे और उनके चेहरे पर उनकी विशिष्ट मृदु मुस्कान फैल गयी, जो हर किसी को उनकी ओर आकर्षित करती थी, उनके शब्दो के प्रति तीव्र रुचि जगाती थी।

"आप मेरी ये कल्पना की उड़ानें सुनते-सुनते ऊब रहे होंगे? पर मुझे ये बातें करना बड़ा अच्छा लगता है। आप नही जानते रूसी गाव मे अच्छे, समझदार, शिक्षित अध्यापक की कितनी जरूरत है! हमारे यहां रूस में अध्यापक के लिए बिल्कुल खास ही तरह की परिस्थितियां बनानी चाहिए, और ऐसा जल्दी से जल्दी करना चाहिए, यदि हम यह समझते हैं कि जनता में शिक्षा के व्यापक प्रसार के बिना राज्य उसी तरह ढह जायेगा, जैसे अधपकी ईंटों से बना मकान! अध्यापक को तो कलाकार होना चाहिए, अपने काम से उसे गहरा अनुराग होना चाहिए, और हमारे देश मे तो वह मजदूर ही है, अल्पशिक्षित व्यक्ति है, जो गाव में बच्चो को पढ़ाने भी उतनी ही तत्परता से जाता है, जितनी तत्परता

से वह साइबेरिया जाता। वह भूखा है, दबा हुआ है, दो जून की रोटी खाने के डर से भयभीत है। जबकि उसे गांव में सबसे प्रमुख व्यक्ति होना चाहिए, ताकि वह सब सवालों का जवाब दे सके, ताकि किसान उसे आदरणीय व्यक्ति समझें और कोई भी उसपर चीखने-चिल्लाने की जुर्रत न करे... उसका अपमान न कर सके, जैसा कि हमारे यहां आये दिन सभी करते हैं—थानेदार, दारोगा, दुकानदार, पादरी, स्कूल का प्रिंसिपल और वह बाबू, जो स्कूलों का इंस्पेक्टर कहलाता है, पर जिसे शिक्षा में सुधार की नहीं, बल्कि इस बात की ही चिंता होती है कि आदेशों के पालन में कोई कसर न रह जाये। आखिर यह बड़ी बेतुकी बात है कि जिस व्यक्ति को जनता को शिक्षित करने का, सभ्य बनाने का, समझे आप? —सभ्य बनाने का काम सौंपा गया है, उसे दो कौड़ियां मिलें! यह कैसे स्वीकार किया जा सकता है कि ऐसा व्यक्ति चीथड़े पहने, जीर्ण-शीर्ण, सीलन भरे स्कूलों में ठंड से ठिठुरे, तंग कोठरियों में रहते हुए धुएं से उसका दम घुटा करे, उसे जब-तब सर्दी लगा करे, कि तीस बरस का होते न होते वह गठिया और तपेदिक का शिकार हो जाये... बड़ी शर्मनाक बात है यह, हम सबके लिए शर्मनाक! हमारा अध्यापक साल में आठ-नौ महीने वनवासी की तरह अकेला रहता है, किसी से दो बातें भी नहीं कर सकता, एकांत में उसकी बुद्धि मंद होती जाती है, न उसे पढ़ने के लिए किताबें मिलती हैं, न किसी तरह का कोई मनोरंजन। और यदि वह अपने साथियों को अपने यहां बुलाता है, तो उसपर अविश्वसनीय होने का आरोप लगाया जाता है—कैसा भोंडा शब्द है यह, जिससे चालाक लोग भोले-भालों को डराते हैं। कितना घिनौना है यह सब... इतना विशाल कार्य करने वाले व्यक्ति की ऐसी दुर्गति... पता है, मैं जब किसी अध्यापक को देखता हूं, तो मुझे लगता है कि उसकी भीरुता के लिए, उसकी फटेहाल अवस्था के लिए मैं भी कुछ हद तक दोषी हूं... सच कह रहा हूं!"

वह चुप हो गये, कुछ सोचते रहे, फिर हाथ झटक कर बोले—

"ऐसा बेतुका, ऐसा बेहूदा है यह हमारा रूस।"

उनकी प्यारी आंखों में गहरी उदासी छा गयी, उनके इर्द-गिर्द हल्की सी झुर्रियां पड़ गयीं, जिससे उनकी नज़र और गहरी हो गयी। उन्होंने इधर-उधर नज़र दौड़ायी और अपनी ही बातों पर हंसे—

व्यक्ति का बेतकल्लुफ़ी का नकाब छोड़ देना, उसकी सारी कोशिश यही होती कि लेखक की नज़रों में बेवकूफ़ न दिखे और वह ऐसे प्रश्नों की झड़ी लगा देता, जो इससे पहले शायद ही उसके दिमाग़ में आये हों।

अन्तोन पाव्लोविच बड़े ध्यान से उसकी ग्रंडबंड बातें सुनते; उनकी उदासी भरी आंखों में मुस्कान खेलती, कनपटियों पर झुर्रियाँ कंपित होतीं, और फिर वह स्वयं अपनी कोमल, गहरी आवाज़ में स्पष्ट, सीधे-सादे शब्द बोलने लगते, ऐसे शब्द, जिनका जीवन से सीधे संबंध होता और इन शब्दों के प्रभाव में उनका संभाषी तुरंत ही अपना नक़ाब उतार देता, सीधा-साधारण व्यक्ति बन जाता, वह बुद्धिमत्ता का दिखावा करने की कोशिश छोड़ देता, जिससे तुरंत ही अधिक समझदार और रोचक हो जाता...

मुझे याद है कैसे एक अध्यापक – ऊंचा, दुबला, चेहरे पर भूख का पीलापन, नाक तोतों जैसी, ठोड़ी की ओर लटकी हुई – अन्तोन पाव्लोविच के सामने बैठा था और अपनी जड़ आंखें उनपर गड़ाये भारी-भरकम आवाज़ में कह रहा था –

"शैक्षिक सत्र की अवधि में अस्तित्व की ऐसी छापों से ऐसा मनोवैज्ञानिक पुंज बनता है, जो परिवेश के वस्तुगत अवबोधन की सम्भावनाओं का दमन कर डालता है..."

और फिर वह दर्शन के क्षेत्र में यों डग भरने लगा जैसे बर्फ़ पर चलता नशे में धुत्त आदमी।

"अच्छा यह बताइये, आपके ज़िले में बच्चों को कौन पीटता है?" चेख़ोव ने धीमी सी आवाज़ में प्यार से पूछा।

अध्यापक उछल कर खड़ा हो गया और हाथ झटकने लगा –

"यह आप क्या कहते हैं? नहीं, बिल्कुल नहीं। मैंने ऐसा कभी नहीं किया।"

"परेशान मत होइये," चेख़ोव शांत मुस्कान के साथ बोले। "मैंने आपकी बात थोड़े ही की है। मैंने तो अख़बार में पढ़ा था कि आपके ज़िले में कोई बच्चों को पीटता है।"

अध्यापक बैठ गया, अपने चेहरे से पसीना पोंछते हुए उसने गहरी सांस ली और भारी आवाज़ में कहने लगा –

"सच बात है! एक ऐसी घटना हुई थी। मकारोव नाम के अध्यापक

ने बच्चे को पीटा था। वैसे इस में हैरानी की कोई बात नहीं! है तो यह वहशियाना काम, पर बात समझ में आती है। वह शादीशुदा है, चार बच्चे हैं, पत्नी बीमार है, खुद भी तपेदिक का रोगी है, तनख्वाह सिर्फ बीस रूबल है... और स्कूल तहखाने मे है, उसे रहने को एक कोठरी मिली हुई है। ऐसे हालत में देवदूत की भी बेवजह पिटाई की जा सकती है, और छात्र, तो आप जानते हैं, देवदूत नहीं हैं, सच मानिये!"

और वही आदमी, जो अभी-अभी बड़ी निर्ममता से चेखोव को विद्वत्ता भरे शब्दों से स्तब्ध कर रहा था, वही अब सीधे-सादे, परन्तु पत्थरों जैसे भारी शब्दों में रूसी देहात के जीवन की सच्चाई का वर्णन करने लगा...

चेखोव से विदा होते हुए उसने उनका पतली-पतली उंगलियों वाला सूखा सा हाथ अपने दोनों हाथों मे पकड़ा और उसे हिलाते हुए बोला —

"मैं आपसे मिलने निकला था, तो लगता था जैसे किसी बड़े अफसर के पास जा रहा हूं मन में सकोच था, भय था, मुर्गे की तरह बन रहा था, आपको यह दिखाना चाहता था कि हम भी किसी से कम नहीं... अब आप के यहा से जा रहा हूं, जैसे किसी बहुत ही करीबी आदमी से, जो सब कुछ समझता है, जुदा हो रहा हूं। बहुत बड़ी बात है यह—सब कुछ समझना! बहुत-बहुत शुक्रिया। मन में यह विचार लिये जा रहा हूं कि बड़े लोग तो सरल होते हैं, सभी बातों को इन तुच्छ लोगों से अधिक अच्छी तरह समझते हैं, जिनके बीच हम रहते हैं। अच्छा, नमस्ते! यह मुलाकात कभी नहीं भूलूंगा..."

उसकी नाक कांपी, होंठों पर उदार मुस्कान फैल गयी, और वह सहसा बोला—

"वैसे तो सच मानिये, दुष्ट हरामजादे भी अभागे लोग हैं!"

जब वह चला गया तो अन्तोन पाव्लोविच हौले से हंसे और बोले—

"अच्छा लड़का है। ज्यादा देर नहीं पढ़ायेगा...

"क्यों?"

"सता डालेंगे ... निकाल देंगे।"

फिर कुछ देर तक सोचते रहे और नम्र स्वर में बोले—

"रूस मे ईमानदार आदमी भी एक हौवा ही है, जिससे दादियां छोटे बच्चों को डराती हैं।"

मुझे लगता है कि अन्तोन पाव्लोविच के सामने हर व्यक्ति अनचाहे ही अधिक सरल, सच्चा, स्वाभाविक होने की इच्छा अनुभव करता था। अनेक बार मैंने यह देखा कि कैसे लोग किताबी वाक्यों, फ़ैशनदार शब्दों और दूसरी सस्ती चीज़ों का नक़ाब उतार फेंकते थे, जो रूसी आदमी यूरोपीय दिखने के लिए ओढ़ लेता है, वैसे ही जैसे जंगली लोग सीपियों और मछली के दांतों से अपने आपको सजाते हैं। अन्तोन पाव्लोविच को मछली के दांत और मुर्ग़े के पर पसंद नहीं थे; अहंमन्यता के लिए आदमी जो भड़कीली, खनखनाती बेगानी चीज़ें ओढ़ लेता है, उन्हें देख कर चेख़ोव को अजीब परेशानी सी होती थी और मैंने देखा कि हर बार जब वह अपने सामने किसी ऐसे सजे-धजे व्यक्ति को देखते, तो उनके मन में यह अदम्य इच्छा उठती कि उसका यह अनावश्यक बोझिल नक़ाब उतार दें, जो संभाषी के सच्चे चेहरे को, उसकी आत्मा को विकृत करता है। चेख़ोव सारी उम्र अपनी आत्मा की सम्पदा के बल पर ही जिये, वह सदा स्वाभाविक बने रहे, अपनी आत्मा की आज़ादी उन्होंने बनाये रखी, और कभी भी वैसा बनने की परवाह नहीं की, जैसा कुछ लोग उन्हें देखना चाहते थे और कुछ दूसरे, अधिक उजड्ड लोग, उनसे मांग करते थे। उन्हें "ऊंची" बातें बिल्कुल पसंद नहीं थीं—ऐसी बातें, जिनसे हमारा प्यारा रूसी आदमी अपना मन बहलाता है, पर यह नहीं समझता कि भविष्य की मख़मली पोशाकों की बातें करना, जब कि आज ढंग की पतलून भी नसीब नहीं है, हास्यास्पद तो है, मगर बुद्धिमत्तापूर्ण क़तई नहीं।

स्वयं चेख़ोव में सुंदर सादगी थी और उन्हें हर बात में, हर चीज़ में सादगी, सच्चाई पसंद थी, उनमें लोगों में सादगी लाने का एक ख़ास हुनर था।

एक दिन तीन बड़ी सजी-धजी महिलाएं उनके यहां पधारीं। चेख़ोव का कमरा रेशमी पोशाकों की सरसराहट और तेज़ इत्र की गंध से भर उठा; महिलाएं बड़े अदब से मेज़बान के सामने बैठ गयीं और राजनीति में गहरी दिलचस्पी का दिखावा करते हुए प्रश्न पूछने लगीं।

"अन्तोन पाव्लोविच! आपका क्या विचार है, युद्ध का अंत क्या होगा?"

अन्तोन पाव्लोविच ने खांस कर गला साफ़ किया, कुछ देर सोचते रहे और फिर गम्भीर और विनम्र स्वर में बोले—

"शायद शांति हो जायेगी..."

"हां, हां, बेशक! पर जीत किसकी होगी? यूनानियों की या तुर्कों की?"

"मेरे ख़्याल में, जो ज्यादा ताक़तवर हैं वही जीतेंगे ."

"और ज्यादा ताकतवर कौन हैं?" महिलाओं ने चट से पूछा।

"वे जो अच्छा खाना खाते हैं और ज्यादा पढ़े-लिखे हैं.."

"वाह, क्या पते की बात है!" एक महिला ख़ुशी से चिल्ला उठी।

"आपको कौन ज्यादा अच्छे लगते हैं—यूनानी या तुर्क?" दूसरी महिला ने पूछा।

अन्तोन पाव्लोविच ने स्नेह भरी नजरों से उसकी ओर देखा और फिर विनम्र मुस्कान के साथ बोले—

"मुझे मार्मलेड अच्छा लगता है, आपको अच्छा लगता है?"

"बहुत!" महिला ने सहर्ष कहा।

"बड़ी प्यारी चीज है!" दूसरी ने जोड़ा।

और तीनों बड़े जोश से बोलने लगीं, मार्मलेड के बारे में उन्हें सचमुच बड़ी अच्छी जानकारी थी और वे इस मामले की बारीकियां भी समझती थीं। साफ़ दिखाई दे रहा था—वे इस बात पर ख़ुश हैं कि उन्हें अपने दिमाग़ पर जोर नहीं डालना पड़ रहा और तुर्कों व यूनानियों के इस सवाल में रुचि का दिखावा नहीं करना पड़ा, जिसके बारे में उन्होंने आज तक कभी सोचा तक न था।

जाते समय उन्होंने अन्तोन पाव्लोविच से वादा किया—

"हम आपके लिए मार्मलेड भेजेंगी।"

"बड़ी अच्छी बातचीत रही आपकी," उनके चले जाने पर मैंने कहा।

अन्तोन पाव्लोविच हौले से हंसे और बोले—

"हर आदमी को अपनी जबान में बोलना चाहिए।"

एक और मौक़े पर मैंने उनके यहां एक बने-ठने नौजवान सरकारी वकील को पाया। वह चेख़ोव के सामने खड़ा था और घुंघराले बालों वाला अपना सिर हिलाते हुए कह रहा था—

"अन्तोन पाव्लोविच, 'दुष्ट' कहानी से आपने मेरे सामने अत्यन्त कठिन सवाल खड़ा किया है। यदि मैं यह स्वीकार करता हूं कि देनीस ग्रिगोर्येव

की दुष्टता सचेतन है, तो मुझे निस्संदेह उसे जेल में बंद कर देना चाहिए, जैसा कि समाज के हितों की रक्षा के लिए आवश्यक है। परन्तु वह तो जंगली आदमी है, उसे इस बात की चेतना नहीं थी कि उसका कार्य अपराध है, और मुझे उसपर दया आती है। यदि मैं उसे नासमझ व्यक्ति स्वीकार करता हूं और सहानुभूति की अपनी भावना के वशीभूत हो जाता हूं, तो मैं समाज को इस बात की क्या गारंटी दे सकता हूं कि देनीस फिर से पटरी से ढिबरी नहीं खोल ले जायेगा और इस तरह रेल-दुर्घटना का कारण नहीं बनेगा? यही है मेरा प्रश्न! करें तो क्या करें?"

वह चुप हो गया, अपना धड़ पीछे को हटा कर उसने अन्तोन पाव्लोविच के चेहरे पर प्रश्नसूचक नज़र गड़ा दी। उसकी वर्दी का कोट नया था और उसकी छाती पर बटनों में भी वैसी ही आत्मविश्वास भरी, भावहीन चमक थी, जैसी न्याय के इस रक्षक के चिकने-चुपड़े चेहरे पर चमकती आंखों में।

"यदि मैं जज होता, तो मैं देनीस को छोड़ देता..."

"किस आधार पर?"

"मैं कहता, 'देनीस, तुझे अभी अपराध करने की अक़्ल नहीं है, जा पहले जा कर अक़्ल सीख।"

सरकारी वकील हंस पड़ा, परन्तु फिर उसी क्षण रोबीली गम्भीरता के साथ बोलने लगा—

"जी नहीं, आदरणीय अन्तोन पाव्लोविच, आपने जो प्रश्न प्रस्तुत किया है, उसे केवल समाज के हितों के अनुरूप ही हल किया जा सकता है, जिसके जीवन और सम्पत्ति की रक्षा का दायित्व मुझ पर है! देनीस भले ही जंगली है, पर वह अपराधी है, यही सच्चाई है!"

"आपको ग्रामोफ़ोन पसंद है?" सहसा अन्तोन पाव्लोविच ने मृदु स्वर मे पूछा।

"जी, बिल्कुल! बहुत पसंद है! कमाल का आविष्कार है," नौजवान ने बड़ी दिलचस्पी से जवाब दिया।

"मुझे ज़रा भी पसंद नहीं," अन्तोन पाव्लोविच ने उदास स्वर में कहा।

"क्यों?"

"क्योंकि वह दूसरों की आवाज़ में बोलता और गाता है, ख़ुद तो

रहता है। नौकरों को उसने सीलन भरा कमरा दे रखा है, और वे सब गठिया के शिकार हो रहे हैं..."

"अन्तोन पाव्लोविच, न० आपको कैसा लगता है?"

"हां... बड़ा अच्छा आदमी है," खांसते हुए वह कहते। "सब कुछ जानता है। बहुत पढ़ता है। मेरी तीन किताबें मार चुका है। खोया-खोया रहता है। आज आप से कहेगा कि आप बड़े अच्छे आदमी हैं, और कल किसी को बतायेगा कि आप अपनी प्रेमिका के पति की रेशमी जुराबें उठा ले गये, नीली-नीली धारियों वाली काली जुराबें..."

एक दिन उनके सामने कोई शिकायत कर रहा था कि मोटी पत्रिकाओं के "गम्भीर" लेख कितने उकताऊ होते हैं।

"आप ये लेख पढ़िये ही मत," अन्तोन पाव्लोविच ने पूरे विश्वास से जवाब दिया। "यह तो मित्र-साहित्य है... दोस्तों का साहित्य। लाल, पास, जाल की मण्डली इसे लिखती है। एक लेख लिखता है, दूसरा उसका प्रतिवाद करता है, तीसरा दोनों के अंतर्विरोधों को दूर करता है। और पाठक को इस सब की क्या जरूरत है, कोई नहीं जानता।"

एक दिन भरे-पूरे शरीर की सुंदर, हृष्ट-पुष्ट महिला, सुंदर वस्त्र पहने उनके पास आयी और "चेख़ोवी" ढंग से बातें करने लगी।

"जीवन कितना नीरस है। सब कुछ धूमिल है–लोग, आकाश, समुद्र, फूल भी मुझे धूमिल लगते हैं। और कोई इच्छा नहीं... आत्मा में अंधकार है। मानो कोई असाध्य रोग हो..."

"जी हां, यह रोग है!" अन्तोन पाव्लोविच ने पूरे विश्वास से कहा। "यह रोग है। लैटिन में इसे morbus dikhavalis कहते हैं!"

सौभाग्यवश वह महिला लैटिन नहीं जानती थी, या शायद उसने न जानने का बहाना करना ही ठीक समझा।

"आलोचक कुकुरमाछियों जैसे होते हैं, जो घोड़े को हल नहीं चलाने देती," चेख़ोव मुस्कराते हुए कहते। "घोड़ा काम करता है, उसकी एक-एक रग तनी होती है, पर तभी पुट्ठे पर कुकुरमाछी आ बैठती है और उसे गुदगुदाने लगती है, भिनभिनाती है। खाल से उसे झटकना होता है, पूंछ हिलानी पड़ती है। और वह भिनभिनाती क्या है? उसे भी शायद ही पता हो। बस, स्वभाव ही ऐसा है और फिर यह दिखाना चाहती है कि देखो दुनिया में मैं भी हूं। भिनभिना भी सकती हूं! पच्चीस बरस

से मैं अपनी कहानियों की आलोचनाएं पढ़ रहा हूं। आज तक एक भी काम की बात, एक भी नेक परामर्श नहीं सुना। बस एक बार स्काविचेव्स्की की बात पढ़ कर मैं प्रभावित हुआ था, उसने लिखा था कि मैं नशे मे धुत्त हो कर नाली में पड़ा मरूंगा..."

उनकी हल्की सुरमई, उदास आंखों में प्रायः सदा ही हल्के से व्यंग्य की मृदु झलक रहती थी, लेकिन कभी-कभी इन आंखों की दृष्टि ठंडी, सख्त और तीखी हो जाती थी, और ऐसे क्षणों मे उनका आत्मीयता भरा लचीला स्वर भी कठोर हो जाता, और तब मुझे लगता कि यह कोमल, विनम्र व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर किसी भी शत्रुतापूर्ण शक्ति का दृढ़ता से सामना कर सकता है और कभी-भी उसके सामने घुटने नहीं टेकेगा।

और कभी-कभी मुझे लगता कि लोगों के प्रति उनके रुख में निराशा की भावना मिली हुई है।

"रूसी आदमी भी अजीब जीव है!" एक बार वह कहने लगे। "छलनी की ही भांति उसमें भी कुछ नहीं टिकता। जवानी मे वह उलटी-सीधी सब तरह की बाते दिमाग़ में ठूंसता जाता है और जब तीसवां पार करता है, तो उसमे बस कचरा ही रह जाता है। अच्छी तरह, इनसानों की भांति जीने के लिए तो काम करना चाहिए, और वह भी प्यार से, विश्वास से। पर हमारे यहां लोगों को यों काम करना नहीं आता। वास्तुकार दो तीन ढंग के मकान बना लेने पर ताश खेलने लगता है और सारी उम्र खेलता रहता है, या फिर थियेटर के मेक-अप रूम के चक्कर लगाता रहता है। डाक्टर की अगर प्रैक्टिस चल निकलती है, तो वह विज्ञान की नई बातों की ओर ध्यान ही नहीं देता, 'चिकित्सा समाचार' के अलावा और कुछ पढ़ता ही नहीं, और चालीस का होने न होते उसकी यह धारणा ही बन जाती है कि सभी रोग मूलतः सर्दी लगने से होते हैं। मैंने आज तक एक भी सरकारी अधिकारी ऐसा नहीं देखा है, जिसे अपने काम के महत्त्व की ज़रा सी भी समझ हो; प्रायः वह राजधानी में बैठा आदेश लिखता रहता है और उन्हें छोटे-बड़े शहरों को भेजता रहता है। पर उसके इन आदेशों से इन शहरों या देहातों मे कौन अपनी आज़ादी खो बैठेगा इस बारे मे वह उतना ही सोचता है, जितना निरीश्वरवादी नरक की यातनाओं के बारे मे। किसी सफल मुक़दमे में नाम कमा कर वकील को सच्चाई की रक्षा की कोई परवाह नहीं रहती, वह तो बस

कहता है। नौकरों को उसने सीलन भरा कमरा दे रखा है, और वे हर गठिया के शिकार होते रहते हैं..."

"अन्तोन पाव्लोविच, न० आपको कैसा लगता है?"

"हां... बड़ा अच्छा आदमी है," खांसते हुए वह कहते। "हर कुछ जानता है। बहुत पढ़ता है। मेरी तीन किताबें मार चुका है। खोया-खोया रहता है। आज आप से कहेगा कि आप बड़े अच्छे आदमी हैं, और कल किसी को बतायेगा कि आप अपनी प्रेमिका के पति की रेशमी जुराबें उठा ले गये, नीली-नीली धारियों वाली काली जुराबें..."

एक दिन उनके सामने कोई शिकायत कर रहा था कि मोटी पत्रिकाओं के "गम्भीर" लेख कितने उकताऊ होते हैं।

"आप ये लेख पढ़िये ही मत," अन्तोन पाव्लोविच ने पूरे विश्वास से जवाब दिया। "यह तो मित्र-साहित्य है... दोस्तों का साहित्य। लाप, पाल, जाल की मण्डली इसे लिखती है। एक लेख लिखता है, दूसरा उसका प्रतिवाद करता है, तीसरा दोनों के अंतर्विरोधों को दूर करता है। और पाठक को इस सब की क्या जरूरत है, कोई नहीं जानता।"

एक दिन भरे-पूरे शरीर की सुंदर, हृष्ट-पुष्ट महिला, सुंदर वस्त्र पहने उनके पास आयी और "चेख़ोवी" ढंग से बातें करने लगी।

"जीवन कितना नीरस है। सब कुछ धूमिल है—लोग, आकाश, समुद्र, फूल भी मुझे धूमिल लगते हैं। और कोई इच्छा नहीं... आत्मा में अंधकार है। मानो कोई असाध्य रोग हो..."

"जी हां, यह रोग है!" अन्तोन पाव्लोविच ने पूरे विश्वास से कहा। "यह रोग है। लैटिन में इसे morbus dikhavalis कहते हैं!"

सौभाग्यवश वह महिला लैटिन नहीं जानती थी, या शायद उसने न जानने का बहाना करना ही ठीक समझा।

"आलोचक कुकुरमाछियों जैसे ... घोड़े को हल नहीं चलाने देतीं," चेख़ोव ... करता है, उसकी एक- ... एक दम तनी ... माछी आ बैठती है और ... उसे भुनभुनाने ... पटकना होता है, ... कुछ हिलाती ... उसे भी आता ... ही क्या ... आदमी है ... बरस

से मैं अपनी कहानियों की आलोचनाएं पढ़ रहा हूं। आज तक एक भी काम की बात, एक भी नेक परामर्श नहीं सुना। बस एक बार स्काविचेव्स्की की बात पढ़ कर मैं प्रभावित हुआ था, उसने लिखा था कि मैं नशे मे धुत्त हो कर नाली मे पड़ा मरूंगा..."

उनकी हल्की सुरमई, उदास आंखों में प्रायः सदा ही हल्के से व्यंग्य की मृदु झलक रहती थी, लेकिन कभी-कभी इन आंखो की दृष्टि ठंडी, सख्त और तीखी हो जाती थी, और ऐसे क्षणो मे उनका आत्मीयता भरा लचीला स्वर भी कठोर हो जाता, और तब मुझे लगता कि यह कोमल, विनम्र व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर किसी भी शत्रुतापूर्ण शक्ति का दृढ़ता से सामना कर सकता है और कभी-भी उसके सामने घुटने नहीं टेकेगा।

और कभी-कभी मुझे लगता कि लोगों के प्रति उनके रुख मे निराशा की भावना मिली हुई है।

"रूसी आदमी भी अजीब जीव है!" एक बार वह कहने लगे। "छलनी की ही भांति उसमे भी कुछ नहीं टिकता। जवानी मे वह उलटी-सीधी सब तरह की बातें दिमाग़ मे ठूंसता जाता है और जब तीसवां पार करता है, तो उसमें बस कचरा ही रह जाता है। अच्छी तरह, इनसानों की नाईं जीने के लिए तो काम करना चाहिए, और वह भी प्यार से, विश्वास से। पर हमारे यहां लोगों को यों काम करना नहीं आता। वास्तुकार दो तीन ढंग के मकान बना लेने पर ताश खेलने लगता है और सारी उम्र खेलता रहता है, या फिर थियेटर के मेक-अप रूम के चक्कर लगाता रहता है। डाक्टर की अगर प्रैक्टिस चल निकलती है, तो वह विज्ञान की नई बातों की ओर ध्यान ही नहीं देता, 'चिकित्सा समाचार' के अलावा और कुछ पढ़ता ही नहीं, और चालीस का होते न होते उसकी यह धारणा ही बन जाती है कि सभी रोग मूलतः सर्दी लगने से होते हैं। मैंने आज तक एक भी सरकारी अधिकारी ऐसा नहीं देखा है, जिसे अपने काम के महत्व की जरा सी भी समझ हो; प्रायः वह राजधानी में बैठा आदेश लिखता रहता है और उन्हें छोटे-बड़े शहरों को भेजता रहता है। पर उसके इन आदेशों से इन शहरों या देहातों में कौन अपनी आज़ादी खो बैठेगा इस बारे में वह उतना ही सोचता है, जितना निरीश्वरवादी नरक की यातनाओं के बारे में। किसी सफल मुक़दमे में नाम कमा कर वकील को सच्चाई की रक्षा की कोई परवाह नहीं रहती, वह तो बस

सम्पत्ति के अधिकार की रक्षा करता है, घोड़ों पर बाज़ी लगाता है, ओयस्टर खाता है और कला-मर्मज्ञ बनता फिरता है। अभिनेता दो-तीन भूमिकाएं ठीक से कर लेने पर और भूमिकाएं नहीं सीखता है, बस बेलननुमा टोप पहन लेता है और सोचता है कि उससे बढ़ कर और कोई पैदा ही नहीं हुआ। सारा रूस ही जाने कैसे भूखे और आलसी लोगों का देश है; वे हद से ज्यादा खाते हैं, पीते हैं, उन्हें दिन में सोने का शौक़ है और नींद में खर्राटे भरते हैं। घर बसाने का फ़र्ज़ पूरा करने के लिए वे शादी करते हैं और समाज में प्रतिष्ठा के लिए रखैलें रखते हैं। उनकी मानसिकता ही कुत्तों जैसी है—उन्हें पीटा जाता है, तो दबी-दबी आवाज़ में किकियाते हैं और अपने-अपने खोखों में जा छिपते हैं, पुचकारा जाता है तो वे पीठ के बल लेट जाते हैं, पंजे ऊपर उठा लेते हैं और दुम हिलाते हैं।"

इन शब्दों में आशाहीन, आवेगहीन उपेक्षा ध्वनित होती थी। लेकिन यों उपेक्षा की दृष्टि से देखने के साथ-साथ वह लोगों पर तरस करना भी जानते थे। प्रायः जब उनके सामने कोई किसी की निंदा करने लगता, तो चेख़ोव तुरन्त उसकी हिमायत करते—

"क्यों आप उसके इतने खिलाफ़ हो रहे हैं? बूढ़ा है बेचारा, सत्तर बरस का हो गया..."

या फिर—

"वह तो अभी जवान ही है, यह सब उसका अनाड़ीपन है..."

और जब वह ऐसा कहते, तो उनके चेहरे पर मैं घिन की परछाईं तक न देखता...

जवानी में संसार का ओछापन हास्यास्पद और तुच्छ लगता है, लेकिन धीरे-धीरे उसकी धूमिल धुंध आदमी को घेरती जाती है, किसी बदबूदार और दमघोंट धुएं की भांति उसके मस्तिष्क में, उसके रक्त में पैठती चली जाती है, और आदमी पुराने जंग खाये बोर्ड जैसा हो जाता है—बोर्ड पर कुछ बना तो हुआ है, पर क्या?—कहा नहीं जा सकता।

अन्तोन चेख़ोव अपनी पहली कहानियों में ओछी दुनिया के मनहूस मज़ाक दिखाने में सफल रहे थे—उनकी "हास्य" कथाओं को ज़रा ध्यान से पढ़ने पर आप पायेंगे कि हंसी-मज़ाक भरे शब्दों और स्थितियों के पीछे

लेखक ने कैसी क्रूरता और कितनी घिनौनी बातों को बड़े मन से देखा है और संकोचवश छिपाया है।

चेखोव में एक अखंड विनम्रता थी। वे लोगों को खुले आम, चिल्ला कर यह कहना कि "अरे भले लोगो... इनसान बनो!"– दुस्साहस समझते थे, व्यर्थ ही यह उम्मीद लगाये थे कि लोग स्वयं ही इनसान बनने की आवश्यकता समझ जायेंगे। जीवन के ओछेपन और गंदगी से घृणा करते हुए वे उनका वर्णन कवि की सौष्ठवमय भाषा मे मृदु व्यंग्य के साथ करते थे, और उनकी कहानियों के सुंदर बाह्य रूप के पीछे उनके सार-गर्भ में निहित कटु उलाहना इतनी स्पष्टतः दिखाई नही देती।

'एल्बीयन की बेटी' कहानी पढते हुए हमारे "भद्र जन" हसते हैं, पर शायद ही कोई इसमे यह देखता हो कि कैसे खाता-पीता जमींदार बिल्कुल अकेली, हर चीज से और हर किसी से अजनबी औरत का बेहूदा मज़ाक उड़ाता है। चेखोव की हर हास्य कथा में मुझे एक निर्मल, सच्चे मानव हृदय की गहरी उसांस सुनाई देती है, आशाहीन उसास, जो वह उन लोगो से सहानुभूति में हौले से छोडता है, जिन्हे अपनी मानवीय गरिमा का सम्मान करना नही आता और जो बिना किसी विरोध के क्रूर शक्ति की अधीनता स्वीकार कर लेते हैं, दासों की भांति जीते हैं, किसी बात में विश्वास नहीं रखते, आस्था नही रखते, सिवाय इस आवश्यकता मे कि उन्हें प्रति दिन ज्यादा से ज्यादा तर खाना मिलता रहे, और जो कुछ भी अनुभव नही करते, सिवाय इस डर के कि उनसे ज्यादा ताक़तवर और धृष्ट कोई उनकी पिटाई न कर दे।

जीवन की छोटी-छोटी बातो मे निहित दुखद, कटु अर्थ को जितनी बारीकी और स्पष्टता से चेखोव समझते थे, वैसे और कोई नही समझता था, उनसे पहले कोई भी लोगों को उनकी बेढब, कूपमंडूकी ज़िंदगी की शर्मनाक और नीरस तसवीर इतनी निर्मम सच्चाई से नही दिखा सकता था।

ओछी ज़िंदगी से चेखोव की शत्रुता थी; वह सारी उम्र उससे संघर्ष करते रहे, उसका मज़ाक उड़ाते रहे, अपनी तेज लेखनी से उसका पर्दाफ़ाश करते रहे; चेखोव ओछेपन को कहीं वहां भी ढूढ लेते थे जहा पहली नजर में लगता था कि सब कुछ बहुत अच्छा है, सुविधाजनक है, यहा तक की शानदार है... और ओछी ज़िंदगी ने उनसे इसका बदला भोंडी

जागीर के अधिकार की रक्षा करता है, घोड़ों पर बाज़ी लगाता है, थिएटर जाता है और कला-मर्मज्ञ बनता फिरता है। अभिनेता ठीक-ठीक भूमिकाएं ठीक से कर लेने पर और भूमिकाएं नहीं सीखता है, वह बेलननुमा टोप पहन लेता है और सोचता है कि उससे बढ़ कर और कोई पैदा ही नहीं हुआ। सारा रूस ही जाने कैसे भूखे और आलसी लोगों का देश है; वे हद से ज्यादा खाते हैं, पीते हैं, उन्हें दिन में सोने का शौक है और नींद में खर्राटे भरते हैं। घर बसाने का फ़र्ज़ पूरा करने के लिए वे शादी करते हैं और समाज में प्रतिष्ठा के लिए रखैलें रखते हैं। उनकी मानसिकता ही कुत्तों जैसी है–उन्हें पीटा जाता है, तो दबी-दबी आवाज़ में किकियाते हैं और अपने-अपने खोखों में जा छिपते हैं, पुचकारा जाता है तो वे पीठ के बल लेट जाते हैं, पंजे ऊपर उठा लेते हैं और दुम हिलाते हैं।"

इन शब्दों में आशाहीन, आवेगहीन उदासी ध्वनित होती थी। लेकिन लोगों को उदासी की दृष्टि से देखने के साथ-साथ वह लोगों पर तरस करना भी जानते थे। अतः जब उनके सामने कोई किसी की निंदा करने लगता, तो चेखोव तुरन्त उसकी हिमायत करते–

"क्यों आप उसके इतने खिलाफ़ हो रहे हैं? बूढ़ा है बेचारा, सत्तर बरस का हो गया..."

या फिर–

"वह तो अभी जवान ही है, यह सब उसका अल्हड़पन है..."

और जब वह ऐसा कहते, तो उनके चेहरे पर मैं घिन की परछाईं तक न देखता...

जवानी में संसार का ओछापन हास्यास्पद और तुच्छ लगता है, लेकिन धीरे-धीरे उसकी धूमिल धुंध आदमी को घेरती जाती है, किसी ज़हर और दमघोंट धुएं की भांति उसके मस्तिष्क में, उसके रक्त में पैठती जाती है, और आदमी पुराने जंग खाये बोर्ड जैसा हो जाता है–बोर्ड पर कुछ बना तो हुआ है, पर क्या?–कहा नहीं जा सकता।

अन्तोन चेखोव अपनी पहली कहानियों में ओछी दुनिया के ... दिखाने में सफल रहे थे–उनकी "हास्य" कथाओं को जब मन ... भरे शब्दों और स्थितियों के पी

से मैं अपनी कहानियों की आलोचनाएं पढ़ रहा हूं। आज तक एक भी काम की बात, एक भी नेक परामर्श नहीं सुना। बस एक बार स्काबिचेव्स्की की बात पढ़ कर मैं प्रभावित हुआ था, उसने लिखा था कि मैं नशे में धुत हो कर नाली में पड़ा मरूंगा..."

उनकी हल्की सुरमई, उदास आंखों में प्रायः सदा ही हल्के से व्यंग्य की मृदु झलक रहती थी, लेकिन कभी-कभी इन आंखों की दृष्टि ठंडी, सख्त और तीखी हो जाती थी, और ऐसे क्षणों में उनका आत्मीयता भरा लचीला स्वर भी कठोर हो जाता, और तब मुझे लगता कि यह कोमल, विनम्र व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर किसी भी शत्रुतापूर्ण शक्ति का दृढ़ता से सामना कर सकता है और कभी-भी उसके सामने घुटने नहीं टेकेगा।

और कभी-कभी मुझे लगता कि लोगों के प्रति उनके रुख में निराशा की भावना मिली हुई है।

"रूसी आदमी भी मजीब जीव है!" एक बार वह कहने लगे। "छलनी की ही भांति उसमें भी कुछ नहीं टिकता। जवानी में वह उलटी-सीधी सब तरह की बातें दिमाग में ठूंसता जाता है और जब तीसवां पार करता है, तो उसमें बस कचरा ही रह जाता है। अच्छी तरह, इनसानों की भाई जीने के लिए तो काम करना चाहिए, और वह भी प्यार से, विश्वास से। पर हमारे यहां लोगों को यों काम करना नहीं आता। वास्तुकार दो तीन ढंग के मकान बना लेने पर ताश खेलने लगता है और सारी उम्र खेलता रहता है, या फिर थियेटर के मेक-अप रूम के चक्कर लगाता रहता है। डाक्टर की अगर प्रैक्टिस चल निकलती है, तो वह विज्ञान की नई बातों की ओर ध्यान ही नहीं देता, 'चिकित्सा समाचार' के अलावा और कुछ पढ़ता ही नहीं, और चालीस का होते न होते उसकी यह धारणा ही बन जाती है कि सभी रोग मूलतः सर्दी लगने से होते हैं। मैंने आज तक एक भी सरकारी अधिकारी ऐसा नहीं देखा है, जिसे अपने काम के महत्व की ज़रा सी भी समझ हो; प्रायः वह राजधानी में बैठा आदेश लिखता रहता है और उन्हें छोटे-बड़े शहरों को भेजता रहता है। पर उसके इन आदेशों से इन शहरों या देहातों में कौन अपनी आज़ादी को बैठेगा इस बारे में वह उतना ही सोचता है, जितना निरीश्वरवादी नरक की यातनाओं के बारे में। किसी सफल मुक़दमे में नाम कमा कर वकील को सच्चाई की रक्षा की कोई परवाह नहीं रहती, वह तो बस

८

सम्पत्ति के अधिकार की रक्षा करता है, घोड़ों पर बाजी लगाता है, ओयस्टर खाता है और कला-मर्मज्ञ बनता फिरता है। अभिनेता दो-तीन भूमिकाएं ठीक से कर लेने पर और भूमिकाएं नहीं सीखता है, बस बेलननुमा टोप पहन लेता है और सोचता है कि उससे बढ़ कर और कोई पैदा ही नहीं हुआ। सारा रूस ही जाने कैसे भूखे और आलसी लोगों का देश है; वे हद से ज्यादा खाते हैं, पीते हैं, उन्हें दिन में सोने का शौक़ है और नींद में खर्राटे भरते हैं। घर बसाने का फ़र्ज़ पूरा करने के लिए वे शादी करते हैं और समाज में प्रतिष्ठा के लिए रखैलें रखते हैं। उनकी मानसिकता ही कुत्तों जैसी है—उन्हें पीटा जाता है, तो दबी-दबी आवाज़ में किकियाते हैं और अपने-अपने खोखों में जा छिपते हैं, पुचकारा जाता है तो वे पीठ के बल लेट जाते हैं, पंजे ऊपर उठा लेते हैं और दुम हिलाते हैं।"

इन शब्दों में आशाहीन, आवेगहीन उपेक्षा ध्वनित होती थी। लेकिन यों उपेक्षा की दृष्टि से देखने के साथ-साथ वह लोगों पर तरस खाना भी जानते थे। प्रायः जब उनके सामने कोई किसी की निंदा करने लगता, तो चेख़ोव तुरन्त उसकी हिमायत करते—

"क्यों आप उसके इतने खिलाफ़ हो रहे हैं? बूढ़ा है बेचारा, सत्तर बरस का हो गया..."

या फिर—

"वह तो अभी जवान ही है, यह सब उसका अनाड़ीपन है..."

और जब वह ऐसा कहते, तो उनके चेहरे पर मैं घिन की परछाईं तक न देखता...

जवानी में संसार का ओछापन हास्यास्पद और तुच्छ लगता है, लेकिन धीरे-धीरे उसकी धूमिल धुंध आदमी को घेरती जाती है, किसी ज़हरीली और दमघोंट धुएं की भांति उसके मस्तिष्क में, उसके रक्त में पैठती जाती है, और आदमी पुराने ढंग वाले किसी पैसे सा हो जाता है—ऐसे पर कुछ बना तो हुआ है, पर क्या?—कहा नहीं जा सकता।

आन्तोन चेख़ोव अपनी आरम्भिक कहानियों में ओछी दुनिया के मखौल मज़ाक़ उड़ाने में माहिर रहे थे—उनकी "हास्य" कथाओं को ज़रा ध्यान से पढ़ने पर आप पायेंगे कि हंसी-मज़ाक़ भरे शब्दों और स्थितियों के

लेखक ने कैसी क्रूरता और कितनी घिनौनी बातों को बड़े मन से देखा है और संकोचवश छिपाया है।

चेख़ोव में एक अखंड विनम्रता थी। वे लोगों को खुले आम, चिल्ला कर यह कहना कि "अरे भले लोगो... इनसान बनो!" – दुस्साहस समझते थे, व्यर्थ ही यह उम्मीद लगाये थे कि लोग स्वय ही इनसान बनने की आवश्यकता समझ जायेंगे। जीवन के ओछेपन और गंदगी से घृणा करते हुए वे उनका वर्णन कवि की सौष्ठवमय भाषा में मृदु व्यंग्य के साथ करते थे, और उनकी कहानियो के सुदर बाह्य रूप के पीछे उनके सार-गर्भ मे निहित कटु उलाहना इतनी स्पष्टतः दिखाई नही देती।

'एल्बीयन की बेटी' कहानी पढ़ते हुए हमारे "भद्र जन" हंसते है, पर शायद ही कोई इसमें यह देखता हो कि कैसे खाता-पीता ज़मीदार बिल्कुल अकेली, हर चीज़ से और हर किसी से अजनबी औरत का बेहूदा मज़ाक उड़ाता है। चेख़ोव की हर हास्य कथा मे मुझे एक निर्मल, सच्चे मानव हृदय की गहरी उसांस सुनाई देती है, आशाहीन उसांस, जो वह उन लोगों से सहानुभूति में हौले से छोड़ता है, जिन्हे अपनी मानवीय गरिमा का सम्मान करना नही आता और जो बिना किसी विरोध के क्रूर शक्ति की अधीनता स्वीकार कर लेते हैं, दासो की भांति जीते हैं, किसी बात मे विश्वास नही रखते, आस्था नही रखते, सिवाय इस आवश्यकता में कि उन्हें प्रति दिन ज्यादा से ज्यादा तर खाना मिलता रहे, और जो कुछ भी अनुभव नही करते, सिवाय इस डर के कि उनसे ज्यादा ताकतवर और धृष्ट कोई उनकी पिटाई न कर दे।

जीवन की छोटी-छोटी बातों में निहित दुखद, कटु अर्थ को जितनी बारीकी और स्पष्टता से चेख़ोव समझते थे, वैसे और कोई नही समझता था, उनसे पहले कोई भी लोगों को उनकी बेढब, कूपमडूकी ज़िंदगी की शर्मनाक और नीरस तसवीर इतनी निर्मम सच्चाई से नही दिखा सकता था।

ओछी ज़िंदगी से चेख़ोव की शत्रुता थी; वह सारी उम्र उससे संघर्ष करते रहे, उसका मज़ाक उड़ाते रहे, अपनी तेज़ लेखनी से उसका पर्दाफ़ाश करते रहे; चेख़ोव ओछेपन की काई वहां भी ढूढ लेते थे जहां पहली नज़र में लगता था कि सब कुछ बहुत अच्छा है, सुविधाजनक है, यहा तक की शानदार है... और ओछी ज़िदगी ने उनसे इसका बदला भोडी

हरवन से लिया, उनका शव—एक कवि का शव—ग्रोयस्टर ढोने के डिब्बे में रख कर लाया गया।

मालगाड़ी के इस डिब्बे का मैला-कुरा धब्बा मुझे थके-मांदे शत्रु पर विजयी हो गयी ग्रोछी दुनिया की विशाल मुस्कान लगता है, ग्रौर बाजारू ग्रख़बारों में ग्रगंम्य संस्मरण दिखावे भरी उदासी, जिसके पीछे मुझे शत्रु की मृत्यु पर मन ही मन ख़ुश हो रही इस ग्रोछी दुनिया की ठंडी, सड़ांध भरी सांस का ग्रहसास होता है।

चेख़ोव की कहानियां पढ़ते हुए ऐसा लगता है मानो तुम शरद ऋतु के उदास ग्रंतिम दिनों में टहल रहे हो, जब वायु इतनी पारदर्शी होती है ग्रौर उसमें वूचे पेड़, तंग मकान ग्रौर धूमिल से लोग इतने स्पष्ट दिखाई देते हैं। सब कुछ इतना विचित्र—एकांत, निश्चल ग्रौर निश्शक्त लगता है। गहरी नीली दूरियां रीती-रीती होती हैं ग्रौर फीके-फीके ग्राकाश से जा मिलती हैं, ठंड से जमे कीचड़ से भरी जमीन पर ग्रासमान सर्द ग्राहें भरता है। लेखक की बुद्धि शरद ऋतु के सूरज की भांति निर्मम स्पष्टता के साथ ऊबड़-खाबड़ रास्तों, टेढ़ी-मेढ़ी गलियों, तंग ग्रौर गंदे मकानों पर प्रकाश डालती है, इन मकानों में दीन-हीन तुच्छ लोगों का ऊब ग्रौर काहिली से दम घुटा जाता है ग्रौर वे चूहों जैसी ग्रपनी निरर्थक, उनींदी भाग-दौड़ में लगे रहते हैं। 'प्यारी' कहानी की नायिका बेचैन चुहिया ही है—प्यारी, ग्रति भोली ग्रौरत, जो ऐसी दासता से ग्रौर इतना ग्रधिक प्यार करती है। उसे कोई थप्पड़ मार दे, तो भी वह ग्राह तक न भरे। उसके बग़ल में खड़ी है 'तीन बहनों' की ग्रोल्गा। वह भी प्यार करती है ग्रौर चुपचाप ग्रपने ग्रालसी भाई की ग्रोछी, व्यभिचारिणी पत्नी के नखरे सहती रहती है; उसकी ग्रांखों के सामने उसकी बहनों की जिंदगी बरबाद हो रही है, पर वह बस रोती है, किसी की कुछ मदद नहीं कर सकती ग्रौर ग्रोछेपन के विरोध मे एक भी जोरदार शब्द उसकी छाती से नहीं निकलता।

ग्रौर यह है ग्रांसू बहाती रानेव्स्कया तथा 'चैरी की बग़िया' के दूसरे भूतपूर्व स्वामी—बच्चों जैसे स्वार्थी ग्रौर बूढ़ों जैसे थुलथुल। वे ग्रपने समय पर मरे नहीं ग्रौर ग्रब बस कराहते रहते हैं, ग्रपने इर्द-गिर्द न उन्हें कुछ दिखाई देता है, ग्रौर न ही वे कुछ समझते हैं—वे पिस्सू हैं, जो फिर

से जीवन का खून चूसने की ताकत खो बैठे हैं। निकम्मा छात्र त्रोफीमोव काम करने की आवश्यकता की बड़ी सुंदर-सुंदर बाते करता है, पर निठल्लेपन मे वक्त गुजारता है और वार्या के साथ बेहूदे मजाक करते हुए अपना मन बहलाता है, उस वार्या के साथ, जो इन निठल्लो के लिए दिन-रात काम करती है।

वेर्शीनिन ये सपने देखता है कि तीन सौ साल बाद जीवन कितना सुदर होगा, पर इस बात की ओर उसका ध्यान नही जाता कि उसके चारों ओर सब कुछ सड़ रहा है, पतनोन्मुख हो रहा है, वह यह देखते हुए भी नही देखता कि ऊब और मूर्खता के मारे सोल्योनी दयनीय तूजेन्बाख की जान लेने को तैयार है।

पाठक की आखों के सामने असंख्य दास और दासिया गुजरते हैं— अपने प्रेम के, अपनी मूर्खता और आलस के, अपने लालच के दास; जीवन से बुरी तरह भयभीत, आशका से थरथराते दास चले जाते हैं; उनका जीवन बस भविष्य के बारे मे बेतुकी बातों से ही भरा है, क्योंकि वे यह अनुभव करते हैं कि वर्तमान मे उनके लिए कोई स्थान नही है...

कभी-कभी इस बेरंगी भीड़ मे कही गोली चलती है—यह कोई इवानोव या त्रेप्लेव है, जो आखिर समझ गया है कि उसे क्या करना चाहिए, और मर गया है...

उनमे अनेक इस बात के सपने देखते हैं कि दो सौ साल बाद जीवन कितना सुदर होगा, और किसी के दिमाग मे यह सीधा-सादा सवाल नहीं आता कि यदि हम सपने ही देखते रहेंगे, तो जीवन को सुदर कौन बनायेगा?

इन निर्बल, नीरस लोगों की भीड़ के पास से एक बुद्धिमान, हर बात की ओर ध्यान देने वाला आदमी गुजरा, अपने देश के इन नीरस लोगो को उसने देखा और उदास मुस्कान के साथ, मृदु किंतु गहरे उलाहने के स्वर मे, चेहरे पर और मन में निराशा मय विषाद लिये अपनी सच्चाई भरी सुदर आवाज में उसने कहा—

"कैसी भोंडी जिंदगी है आप लोगों की।"

पाच दिन से बुखार आ रहा है, पर लेटने का जी नहीं करता। फिनलैंड की झीनी-झीनी बारिश गीली धूल सी जमीन पर फैल रही है।

इन्हीं दिनों में लोगों की घमासान हो रही है, उन्हें "माथा" जा रहा है। रात को सर्चलाइट की लंबी जीभें बादलों को चाटती हैं, कैसा घिनौना दृश्य है, क्योंकि यह शैतान के कुकर्म—युद्ध—को भूलने नहीं देता।

चेख़ोव की कहानियां पढ़ता रहा। यदि दस साल पहले उनका देहांत न हो गया होता, तो यह युद्ध ही उनके मन को लोगों के प्रति घृणा से विषाक्त करके उन्हें मार डालता। उनका अंतिम संस्कार याद आया।

उस लेखक का शव, जिस पर मास्को को इतना "नाज़" था, मैले-हरे-से डिब्बे में मास्को लाया गया था, डिब्बे के दरवाज़े पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—"ग्रोयस्टर"। शव यात्रा में भाग लेने के लिए स्टेशन पर जमा हुई भीड़ में से कुछ लोग मंचूरिया से लाये गये जनरल केल्लेर के ताबूत के पीछे चल दिये, और इस बात पर बड़े हैरान हुए कि चेख़ोव की शव यात्रा में फ़ौजी बैंड बज रहा है। जब ग़लती का पता चला, तो कुछ हंसोड़ लोग खी-खी करने लगे। चेख़ोव के ताबूत के पीछे कोई सौ लोग चल रहे थे, सौ से ज्यादा नहीं; दो वकील अच्छी तरह याद हैं, दोनों नये बूट और भड़कीली टाइयां पहने थे—दूल्हे कहीं के। उनके पीछे-पीछे चलते हुए मैंने सुना कैसे उनमें से एक व० अ० मक्लाकोव कुत्तों की बुद्धि की चर्चा कर रहा है, दूसरा, अनजान वकील, अपने दाचा की ख़ूबियों, उसके पास के प्राकृतिक दृश्य की सुन्दरता का वर्णन कर रहा है। बैंगनी पोशाक पहने और लेस लगा छाता ताने महिला चश्मा लगाये बूढ़े को यकीन दिला रही थी—

"कितने प्यारे थे वह और इतने हाज़िरजवाब..."

बूढ़ा खखार रहा था—उसे महिला की बात में कोई ज़ोर नहीं नज़र आता था। उस दिन गर्मी थी, धूल उड़ रही थी। शव यात्रा के आगे-आगे मोटे सफ़ेद घोड़े पर मोटा थानेदार चला जा रहा था। महान कलाकार से ओछी ज़िंदगी का यह कैसा क्रूर मज़ाक था।

अ० स० सुवोरिन के नाम अपने एक पत्र में चेख़ोव ने लिखा था—

"आये दिन गुज़र-बसर के लिए जूझना—इससे अधिक उकताऊ और नीरस काम और क्या हो सकता है? यह जीवन की सारी ख़ुशियां छीन लेता है, आदमी को बिलकुल निरुत्साह बना देता है..."

चेख़ोव को छोटी उम्र से ही "गुज़र-बसर के लिए जूझना" पड़ा,

अपना ही नही, दूसरों का भी पेट भरने के लिए रोजमर्रा की छोटी
बातों में जीवन खपता रहा; जवानी की सारी शक्ति इसी मे हो
गयी, और आश्चर्य होता है कि वह अपनी हास्य-भावना कैसे बनाये
सके। उन्होंने जीवन को पेट भरने और चैन पाने की लोगों की
इच्छा के रूप में ही देखा; जीवन के विशाल नाटक और त्रासदियां
लिए जीवन की छोटी-छोटी बातों की मोटी परत मे छिपे हुए थे।
करीबी लोगो का पेट भरा देखने की चिंता से कुछ हद तक मुक्त हो
पर ही उन्होंने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि इन नाटकों के सार पर डाली।

श्रम ही संस्कृति की नींव है—इस बात की जितनी गहरी समझ
को थी, उतनी मैंने और किसी व्यक्ति मे नही देखी है। रहन-सहन
छोटी-छोटी बातों मे, चीजों के चुनाव मे उनकी यह समझ व्यक्त
थी। उनमे चीजो के प्रति ऐसा उदात्त प्रेम था, जिसमें उनके संच
कोई गुंजायश नहीं होती; ऐसा व्यक्ति ही चीजो को मानव सृजन के
के रूप मे देख कर विमुग्ध हो सकता है। उन्हे मकान बनाने, बाग ल
धरती को सजाने का शौक था, मैं तो कहूंगा कि वह श्रम में कवित
रस पाते थे। कितने प्यार से वह अपने लगाये फलों के पेड़ो और सज
पौधों की देखभाल करते थे! आऊत्का मे मकान बनाते हुए एक
उन्होंने कहा—

"अगर हर आदमी जमीन के अपने टुकड़े पर वह सब करे, ज
कर सकता है, तो हमारी धरती कितनी सुंदर हो जाये!"

अपने साहित्यिक कार्यों की चर्चा वह बहुत कम, बडी अनिच्छ
करते थे, और जब चर्चा करते भी थे, तो बडी श्रद्धा और सावधानी
वैसे ही जैसे लेव तोलस्तोय की। बस कभी-कभार ही हर्षमय क्ष
मृदु व्यंग्य के साथ मुस्कराते हुए वह कोई कथानक सुनाते—सदा हास्या

"एक मास्टरनी की कहानी लिखूगा। उसे ईश्वर मे आस्था नहीं
डारविन की पूजा करती है, वह यह मानती है कि अंधविश्वासों और
से संघर्ष करना चाहिए, पर खुद रात के बारह बजे बाले
को उबालती है—वह हड्डी पाने के लिए, जिससे मर्दों का प्रेम जग
उन्हें वशीभूत किया जा सकता है..."

अपने नाटकों को वह "हास्य-विनोद भरे" कहते थे, और

है उन्हें सचमुच इस बात में विश्वास था कि वह वाक़ई "हास्य-विनोद भरे" नाटक लिखते हैं। शायद उनकी बातें सुन कर ही साव्वा मोरोज़ोव आग्रहपूर्वक यह कहा करते थे—"चेख़ोव के नाटकों को काव्यमय कामदियों की भांति मंचित करना चाहिए।"

वैसे साहित्य की ओर चेख़ोव बहुत ध्यान देते थे, ख़ास तौर पर "नये लेखकों" का बड़ा ध्यान रखते थे। ब० लाज़ारेव्स्की, न० ओलिगेर तथा अन्य कई नये लेखकों की वृहद पांडुलिपियां वह आश्चर्यजनक धैर्य से पढ़ते थे। वह कहते थे—

"हमारे यहां लेखक बहुत थोड़े हैं। हमारे जीवन में साहित्य एक नयी चीज़ है और "गिने-चुने" लोगों के लिए। नार्वे में दो सौ छब्बीस लोगों के पीछे एक लेखक है और हमारे यहां दस लाख में एक..."

बीमारी से वह कभी-कभी बहुत निराश हो उठते थे, उनके मन में मानवद्वेषपूर्ण भाव उठने लगते थे। ऐसे दिनों में लोगों के प्रति उनके विचार बड़े सख़्त और रूखे होते थे।

एक दिन वह सोफ़े पर लेटे हुए थर्मामीटर से खेल रहे थे, उन्हें सूखी खांसी आ रही थी। सहसा बोले—

"मरने के लिए जीना बड़ी बेहूदी बात है और यह जानते हुए जीना कि असमय ही मर जाओगे, बिल्कुल ही बेतुकी बात है..."

एक और बार खुली खिड़की के पास बैठे, दूर समुद्र की ओर देखते हुए सहसा खीझ भरे स्वर में बोले—

"हम तो अच्छे मौसम, अच्छी फ़सल, सुखद रोमांस पर आस लगाये जीने के आदी हो गये हैं, हम इस आस में रहते हैं कि अमीर हो जायेंगे, ऊंचा ओहदा पा लेंगे, पर अक़्लमंद होने की उम्मीद करते मैंने किसी को नहीं देखा। हम सोचते हैं—नये ज़ार के राज में ज़िंदगी सुधर जायेगी, और दो सौ साल बाद और भी अच्छी हो जायेगी, लेकिन इसकी किसी को परवाह नहीं कि ज़िंदगी कल ही और अच्छी हो जाये। ज़िंदगी दिन पर दिन अधिक पेचीदा होती जा रही है, और आप से आप कहीं चलती जा रही है, उधर लोग मंदबुद्धि होते जा रहे हैं, अधिकाधिक लोग ज़िंदगी से दरकिनार होते जा रहे हैं।"

फिर कुछ सोच कर भौंहें सिकोड़ते हुए बोले—

"सलीब के जुलूस मे लूले-लंगड़े भिखारियों की तरह।"

वह डाक्टर थे, और डाक्टर का रोग उसके मरीजों से अधिक कष्टदायक ता है; मरीज़ तो केवल महसूस करते हैं, पर डाक्टर को कुछ हद तक ता भी होता है कि कैसे उसका शरीर क्षत होता जा रहा है। इसे उन ड़े से मामलों में से एक कहा जा सकता है, जब ज्ञान मौत को नज़दीक ाता है।

जब वह हंसते थे, तो उनकी आंखें बड़ी प्यारी होती थी—नारीसुलभ नेह और सुकोमल मृदुता भरी। और उनकी प्रायः निश्शब्द हंसी भी बड़ी यारी थी। हंसते हुए वह हंसी का मजा लेते थे; मैं और किसी ऐसे यक्ति को नहीं जानता हू, जो इस तरह, मैं तो कहूंगा "आत्मिक" ंसी हंसता हो।

भौंडे मजाकों पर उन्हे कभी हंसी नही आती थी।

अपनी प्यारी, हार्दिक हंसी हंसते हुए वह मुझसे कहते—

"पता है तोलस्तोय क्यों आपको सदा एक नज़र से नही देखते? उन्हें ईर्ष्या होती है, वह सोचते हैं कि सुलेरझीत्स्की आपको उनसे ज्यादा चाहता है। हां, हा, कल वह मुझसे कह रहे थे, 'गोर्की को मैं अपने मन मे जगह नही दे सकता, पता नही क्यों, पर यह मेरे बस के बाहर है। मुझे तो यह भी अच्छा नहीं लगता कि सुलेर उसके यहां रहता है। सुलेर के लिए यह ठीक नही। गोर्की के मन मे विद्वेष भरा हुआ है। वह धार्मिक विद्यालय के उस छात्र जैसा है, जिसे जबरदस्ती मठवासी बना दिया गया है और इसलिए वह सबसे खार खा बैठा है। वह मन से भेदिया है, वह जाने कहा से इस बेगानी दुनिया मे आया है, यहां वह ताक-झाक करता है, भेद लेता है और फिर जा कर अपने किसी खुदा को सब कुछ बताता है। और खुदा उसका कुरूप है, देहाती औरतो के धरभूतने या जलभुतौहे जैसा।'"

यह सब सुनाते हुए हंसते-हंसते चेखोव के पेट मे बल पड गये। ज़रा सांस ले कर वह आगे बोले—

"मैंने कहा, 'गोर्की नेकदिल है'। पर वह अपनी बात पर अड़े हुए थे, 'नही, नही, मुझे पता है। उसकी नाक बत्तखों जैसी है, ऐसी नाक अभागे और विद्वेषी लोगो की ही होती है। औरते भी उसे नहीं चाहती,

और औरतों को तो कुत्तों की तरह अच्छे आदमी की पहचान होती है। सूलेर में सचमुच ही लोगों से निस्स्वार्थ प्रेम का अमूल्य गुण है। इस मामले में वह मेधावी है। प्रेम करना आता है, तो सब कुछ आता है...'"

कुछ देर आराम करके चेखोव ने एक बार फिर कहा—

"हां, बड़े बाबा आपसे ईर्ष्या करते हैं... कितने निराले हैं..."

जब भी वह तोलस्तोय की चर्चा करते, तो उनकी आंखों में एक खास ही तरह की, स्नेह और सकोच भरी, प्रायः अदृश्य सी मुस्कान चमकती, वह आवाज नीची करके बोलते मानो किसी रहस्यमय, दैवी बात की चर्चा हो, जिसके लिए बड़ी सावधानी से, मृदुतापूर्ण शब्द ही उपयुक्त हैं।

कई बार उन्होंने यह शिकायत की कि तोलस्तोय के साथ ऐक्केरमान जैसा कोई आदमी नहीं रहता है, जो बड़ी बारीकी से इस वृद्ध मनीषी के अप्रत्याशित, गूढ़ और प्रायः अंतर्विरोधी विचार लिख लिया करे। वह सूलेरझीत्स्की को अक्सर मनाते थे—

"आप क्यों नहीं यह काम करते। तोलस्तोय को आपसे इतना लगाव है, इतनी अच्छी तरह वह आपसे बातें करते हैं।"

सूलेरझीत्स्की के बारे में चेखोव ने मुझसे कहा—

"वह विवेकी शिशु है।"

बहुत खूब कहा।

एक दिन मेरी उपस्थिति में तोलस्तोय चेखोव की कहानी 'प्यारी' की प्रशंसा कर रहे थे। वह कह रहे थे—

"यह कहानी अक्षता युवती की बुनी लेस जैसी है; पुराने जमाने में लेस बुनने वाली ऐसी लड़कियां होती थीं, अपना सारा जीवन, अपने सारे सपने वे लेस के बेलबूटों में ही उंडेलती थीं। मन की सारी चाहें, अस्पष्ट, अछूता प्रेम वे बेलबूटों में ही व्यक्त करती थीं।" तोलस्तोय ने भावविह्वल हो कर यह कहा—उनकी आंखों में आंसू थे।

चेखोव को उस दिन तेज बुखार था। उनके गाल तप रहे थे, सिर झुकाये वह बड़े जतन से अपनी ऐनक पोंछ रहे थे। बड़ी देर तक वह चुप रहे, आखिर गहरी सांस ले कर सजाते हुए हौले से बोले:

"उसमें छपाई की गलतियां रह गयी हैं..."

चेख़ोव पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है, लेकिन उनके बारे में बड़ी स्पष्टता से और बारीकी से लिखना चाहिए। लेकिन मुझे इस तरह लिखना नहीं आता। उनके बारे में वैसे ही लिखना अच्छा हो जैसे स्वयं उन्होंने 'स्तेपी' कहानी लिखी है—सहज ही मन को छू लेने वाली, महक बिखेरती कहानी, बिल्कुल रूसी ढंग की विचारमग्नता और उदासी पैदा करने वाली कहानी, अपने लिए कही गयी कहानी।

ऐसे मनुष्य को याद करना अच्छा होता है, तत्क्षण जीवन में नयी स्फूर्ति आ जाती है, उसमें एक स्पष्ट अर्थ आ जाता है।

मनुष्य संसार की धुरी है।

कोई कहेगा—उसमें तो इतने अवगुण हैं, इतनी कमियां हैं।

हम सब इन्सान के लिए प्यार के भूखे हैं और भूख लगी होने पर अधपकी रोटी भी मीठी लगती है।

१६०४

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन को इस पुस्तक की विषयवस्तु और डिज़ाइन के संबंध में आपकी राय जान कर और आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर बड़ी *प्रसन्नता होगी।* अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें :

प्रगति प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ

प्रकाशित होनेवाली है :

फ़० दोस्तोयेव्स्की **अपराध और दंड,** उपन्यास

'अपराध और दंड' (१८६५-१८६६) या लेखक के शब्दों
अपराध के मनोवैज्ञानिक चित्रण" का विचार उस समय पैदा
जब दोस्तोयेव्स्की साइबेरिया मे निर्वासित थे। उनके श
उपन्यास का विषय, बल्कि उनके सारे कृतित्व का मुख्य विष
जाति के उन नब्बे फ़ीसदी लोगों का भविष्य" है, जिन्हें समस
ने नैतिक दृष्टि से इस तरह तबाह और पददलित कर
उनका कोई भविष्य रह ही नहीं गया था। रोमां रोलां ने
'अपराध और दंड' पढ़कर मोहित हो गया हू। मै इसे
'युद्ध और शांति' के साथ एक ही कतार मे रखना चाहूंग
रूप से महान है। 'युद्ध और शांति' असीम जीवन
समुद्र है जबकि 'अपराध और दंड' वह आंधी है
मे उठी है . " पुस्तक मे भूमिका और ऐतिहासिक-सा
दी गई है, साथ ही सुजात सोवियत चित्रकार द०
बनाये चित्र भी।